प्रस्तावना.

भगवान्ने संसारीजीवोंके उद्धार हेतु अपनी पूर्ण कृपासे कितनेही नररत्न निर्माण किये हैं, उन्हीं रत्नोंमें जगत्प्रसिद्ध शुकदेवजीमहाराजहुये जिनके शिष्य चरणदासजीने अपने गुरुजीसे प्रश्नोत्तरमें लोकोपकारार्थ यह ग्रंथसंग्रह निर्माण किया है. बहुत समयसे हमारे चित्तमें इन ग्रंथोंके प्रचार करनेका मनोरथ था परन्तु कोई शुद्धप्रति न मिलनेसे नहीं छापसके. एकसमय परमहंस चरणदासजी, पण्डित रामशरणदासजी महाराज कनखल (हरद्वार) धर्मशाला के महंत हमारे मुम्बई कार्य्यालयमें पधारे और उनसे इसविषयमें वार्त्तालाप हुवा, उन्होंने हमारे मनोरथकी प्रशंसा कर अपने मित्र मुन्शी शिवदयालजी वकील अदालत जयपुरसे एक प्राचीन ग्रंथ मँगाकर दिया जिससे शुद्धकर यह ग्रंथ प्रकाशित कियागया है. हम अपने मनोरथसिद्धिकर्त्ता उक्त दोनों महाशयोंको हृदयसे धन्यवाद देते हुये यह ग्रंथ प्रकाशित करते हैं.

(१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
मालिक "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-मुम्बई.

पुस्तक मिलनेका ठेकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास.
श्रीवेङ्कटेशबुकडिपो.
बनारस-चौक.

सूचना-वचनिका।



प्रगटहो कि, यह ग्रंथ "भक्तिसागर" जगत् उजागर श्रीयुत वेदव्यासनंदन जगवंदन श्रीपरमहंसावतंस शुकमुनि महाराजके परमप्रिय शिष्य श्रीस्वामिचरणदासजीका रचित ज्ञान वैराग्यका भंडार प्रेमा पराभक्तिका सार भजनभावनाका आगार संत महंत भक्तजनोंका जीवनाधार मुमुक्षुपुरुषोंके हृदयमें धारणकरनेका मुक्तिस्वरूपी अमूल्य मोतियोंका हार है जो महानुभाव भक्ति भावसहित भक्तिसागरग्रंथको प्रेमपूर्वक पठन श्रवण मनन निदिध्यासन अनुभवसहित इसमें गोता लगावेंगे वो सगुण निर्गुण गूढतत्त्व तथा चतुर्वर्गरूपी अलौकिक रत्न प्राप्तकर जीवनमुक्तिका प्रत्यक्षफल पावेंगे॥

इति सूचना-वचनिका समाप्ता।



अथ ग्रंथपाठविधिप्रारंभ ।

चौ०—संत सुनो विनती चितलाई। कहूं जोरकर शीश नवाई ॥
ग्रंथपाठकी विधि समझाऊं । जैसेकी जैसी धुनि गाऊं ॥
शुचि पवित्र अरु हो निश्चिंत। स्थिर चितकर बैठै एकंत ॥
ग्रंथराज चौकी पधरावे । चंदन पुष्प सप्रीत चढावे ॥
श्रीशुकचरणदास उर ध्यावे । चरणवंदना कर बलिजावे ॥
प्रथम महात्म्यग्रंथ पढिलीजै। पीछे पाठ ग्रंथको कीजै ॥
सहज सहज मधुरे स्वरबाँचे। भावभक्तिके रंगमें राचे ॥
मन एकत्रकर अर्थ विचारै। पढै सुनावे हियमें धारै ॥
ग्रंथपढे पीछे सुन भाई । आरतिपद गावे हुलसाई ॥
नित्यपाठकर हरि गुरु सेवे। बिनापाठ अनजल नहिंलेवे
प्राण समान ग्रंथको राखे । इष्टजान मुखस्तुति भाखे ॥
करै ग्रंथकी सेवा पूजा । ग्रंथसमान औरनहिं दूजा ॥
गुरुमुखियनकी संपति येही । ग्रंथ न तजै प्राण तज देही॥
यथावकाश पाठ नित कीजै । अनध्याय नहिंहोने दीजै ॥
नेम सहित नित पढै सुनावे । चारों मुक्ति अष्टसिधि पावे ॥
याविधि जो रहनी बनिआवे। पूरा संत महंत कहावे ॥
करनी करै युगल गुण गावे । निश्चय परमधामपद पावे ॥
गुरुबलदेव दास समझायो । सरसमाधुरी सोई गायो ॥

इति श्रीयुत स्वामी बलदेवदासजीके चरणसेवक पंडित
शिवदयाल वकील अदालत मंत्री श्रीरामसभाराजधा-
नी सवाई जयपुर रचित भक्तिसागरग्रंथकी
ग्रंथपाठविधि संपूर्ण ।

॥ श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

स्वामि श्रीचरणदासजीका जीवनचरित्र ।

प्रगटहो कि, श्रीयुत स्वामी चरणदासजी महाराजका सुयश तो जगत्में भलीभांति विख्यात है परंतु यहां वर्णन करनेकी आवश्यकता समझकर संक्षेपरीतिसे लिखा जाताहै. वह इसरीतिसे है कि, श्रीमान् चरणदासजी संवत् १७६० विक्रममें मेवातदेशप्रांत अलवर राजधानिके निकट डहराग्राममें भृगुवंश अर्थात् च्यवनकुलमें श्रीमती कुंजोमाताके गर्भसे उत्पन्न हुए श्रीमान्के कुलकी आठवीं पीढ़ीमें पूर्वजन्म परमप्रेमी परमभक्त शोभनदासजी हुएहैं. जब उनकी प्रेमभक्ति पूर्णताको पहुँचगई तो उनको श्रीवृंदावन युगलविहारीलालमहाराजने प्रत्यक्ष दर्शन देकर वर मांगनेकी आज्ञा दी. तब शोभनदासजीने यही वर मांगा कि, मेरे कुलमें सदैव आपकी भक्ति बनीरहै इससे बढकर और कोई पदार्थ मांगनेके लायक नहीं है. तब युगलसरकारने तथास्तु कहकर आज्ञा की कि, तुम्हारे पश्चात् आठवींपीढीमें हमारा अंशावतार संतरूप प्रकट होकर जगत्के अनंतजीवोंका उद्धार करैगा. इसही अभिप्रायसे श्रीमान् चरणदासजी भगवत्के वोही अंशावतार हुएहैं, श्रीमान्के पिता श्रीमुरलीधरदासजी बाल्यावस्थासेही भगवद्भक्तिमें लवलीन रहतेथे जैसे जलमें कमल उत्पन्न होकर जलसे जुदा रहताहै उसहीतरह मुरलीधरजीने जगव्यवहारोंको स्पर्श नहींकिया और चमत्कार यह कि, सदेह वैकुंठगामी हुए. श्रीचरणदासजी महाराजको पांच वर्षकी अवस्थामें डहरेग्राम नदीके निकट श्रीवेदव्यासनंदन जगवंदन श्रीशुकदेवमुनिराजने दर्शन दिया-पश्चात् १९ वर्षकी अवस्थामें श्रीगंगातट स्थान शुकताल जहांपर राजा परीक्षित्को श्रीमद्भागवतकथा सुनाकर श्रीशुकदेवजी महाराजने कृतार्थ कियाथा. वहांपर दूसरीबेर श्रीचरणदासजीको दर्शन दिये और विधिवत् दीक्षा देकर चरणदासजीको अपना शिष्यकर भक्तियोग, ज्ञान, वैराग्यादिसे

पूर्णकर तारनतरन बनाया. इसके पश्चात् श्रीचरणदासजीने इंद्रप्रस्थ अर्थात् दिल्लीस्थानमें विराजमान होकर अष्टांगयोग साधनकर १४ वर्षकी समाधि लगाकर अष्टसिद्धि प्राप्तकर त्रिकालज्ञ तारनतरन महात्मा कहलाए तदनंतर दिल्लीसे चलकर श्रीयुगलबिहारीजीके दर्शनाभिलाषी श्रीवृंदावनधाम सेवाकुंजमें पहुँचकर श्रीयुगलविहारीजीके सह समाज सखी सूमसहित दर्शन पाया। श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद परमात्माने श्रीचरणदासजीको अपना अनन्य निष्काम प्रेमी समझकर वात्सल्यतापूर्वक निजहृदयसे लगाया और रासविलासका आनंद दिखलाकर प्रेमभक्तिका प्रचार कर जीवोंके उद्धार करनेकी आज्ञा देकर अंतर्द्धान हुए। तिसपीछे श्रीचरणदासजीसे श्रीयुगलविहारीजीका वियोग न सहागया और विरहवियोगकी दशामें वंसीवटके नीचे मूर्च्छित होगये. उसहीसमय श्रीशुकदेवजी तीसरीबेर वहीं प्रगट होकर दर्शन देकर समाधानकर वंसीवटनीचे श्रीचरणदासजीके मस्तकपर निजहस्तकमल धर श्रीवृंदावनयुगल विहारीजीका प्रगट दरशन कराकर विरहाग्निको शीतलकर इंद्रप्रस्थ जाकर जीवोंके उद्धारनिमित्त भक्तिउपदेश करनेकी आज्ञा देकर अंतर्धान हुए पश्चात् श्रीचरणदासजी दिल्ली आये परमशोभायमान् श्रीजीका मंदिर सिद्धकर विराजमान हुए और हरिगुरु आज्ञानुसार नवधाभक्तिद्वारा लक्षावधि जीवोंको भगवत्के सन्मुखकर भगवान्के दर्शनोंका साक्षात् कराया श्रीचरणदासजीके सहस्रों संत, विरक्त, नेमी, प्रेमी, ज्ञानी, ध्यानी, सिद्ध, समाधीहुए और भारतवर्षके उत्तमोत्तम तीर्थों तथा सप्तपुरी चारोंधामोंमें जाकर विराजमान् हुए और भगवद्भक्तिका विस्तार किया. श्रीमान्के संत चरणदासी वैष्णव कहलाए इनकी शुकसंप्रदाय जगत्में विख्यात हुई और उस समय दिल्लीमें मुहम्मदशाह बादशाह थे वोभी श्रीमहाराजके परमप्रभाव और अनेकानेक ईश्वरीय चमत्कार देखकर श्रीमहाराजमें भक्तिवश होकर नित्य दरशन व सत्संगकी अभिलाषासे श्रीमान्के पास आने लगे यहांतक कि सहस्रों ग्राम श्रीमहाराज शिष्योंके नाम भगवत् संतसेवानिमित्त भेंट किये वो अबतक चले आते हैं और उन ग्रामोंके सहस्रों फरमानशाही अबतक मंदिरोंमें मौजूद हैं

मुहम्मदशाह बादशाहके अहदमें एक समय ईरानसे चढकर दिल्लीपर नादिरशाह और उसके आगमनका वृत्तांत छैमहीने पहले लिखकर श्री मान्ने मुहम्मदशाहको देदिया उस लेखके अनुसारही नादिरशाहने वर्त्तावकिया इस वृत्तांतको नादिरशाहने मुहम्मदशाहके मुखसे सुन कर श्रीमान्का दर्शनकर और चमत्कार पाकर इनको वलीअल्लाह और मकबूलपाकर पीरमुरशद माना और श्रीमान्के उपदेशसे आपने अपनी तमोगुणीवृत्ति व आसुरीबुद्धिका परित्यागकर ईरानको चला गया श्रीमान्ने अस्सीवर्षतक भूतलपर विराजकर भगवद्भक्ती प्रेम और परोपकारमें कालक्षेप किया अंतमें भगवदआज्ञानुसार स्वेच्छा से दिल्लीमें योगाभ्याससे संवत् १८३९ विक्रममें दशवेंद्वारको वेधनकर पांचभौतिक शरीरको त्याग परमधामको पधारे. इन स्वामीजीकी सहस्रों वाणी इस श्रीगुरुभक्ति प्रकाश ग्रंथमें विस्तार पूर्वक वर्णितहैं उसके अवलोकनसे श्रीमान् स्वामी चरणदासजी महाराजका पूर्वप्रभाव मालूम होसकताहै ॥ शुभम् ।

इति ।



श्रीमहाराज स्वामी चरणदासजीकी वाणीका माहात्म्य।

श्रीमान् मोहनदासकृत।

दोहा—नमो नमो शुकदेव मुनि, नमो स्वामिचरणदास।
प्रकटे श्रीमहाराजहै, करन भक्तिपरकाश ॥ १ ॥
परमसनातन आपनो, धर्मभागवत जाहि।
आचारज वपुधरबहुरि, प्रकटायो ले ताहि ॥ २ ॥
कलियुगमें सतयुग कियो, लियो संत अवतार।
निस्तारो सब जगतको, प्रेमभक्ति विस्तार ॥ ३ ॥
तानो सुयश वितान निज, शुकसंप्रदा चलाय।
वाणीविमल बनाय जग, सोवत दियो जगाय ॥ ४ ॥
जा जाके श्रवणनपरी, सो सो भए निहाल।
वाणी श्रीमहाराजकी, जीतन जगयमकाल॥ ५ ॥
अष्टादशषटचारनो, चौदह सबको मूल।
वाणी श्रीमहाराजकी, हरन भर्म भय मूल ॥ ६ ॥
भारत गीता भागवत, रामायण इतिहास।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब मिल करत प्रकाश॥७॥
संस्कृतभाषा है जितक, शास्त्र रु वेद पुराण।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको लिये प्रमाण ॥ ८ ॥
जहँलग युक्त जु मुक्ति लग, अनुभव उक्ति अपार।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबहीके अनुहार ॥ ९ ॥
पराबुद्धि व्यापक सकल, परम सनातन सत्त्व।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब तत्त्वनको तत्त्व ॥ १० ॥

विरलो जन जानत कोऊ, जाके विमल विचार।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब सारनको सार॥ ११॥
अगम अर्थको सुगमकर, ज्योंकी त्यों दरशाय।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको दे समझाय॥ १२॥
ज्ञानयोग वैरागनिधि, प्रेमभक्ति रसरूप।
वाणी श्रीमहाराजकी, अद्भुत अधिक अनूप॥ १३॥
निर्गुण सगुण सर्वमय, सर्वोपर पहिंचान।
वाणी श्रीमहाराजकी, सकलसुखनकी खान॥ १४॥
सबहीके मनभावती, सबहीको जु सुहात।
वाणी श्रीमहाराजकी, ज्यों बालकको मात॥ १५॥
सबही मतमारग मिली, सबहीके अनुरूप।
वाणी श्रीमहाराजकी, काढन भवतम कूप॥ १६॥
कोऊ प्रतिवादक नहीं, सबहि प्रशंसत जाह।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको करत निबाह॥ १७॥
वाणी श्रीमहाराजकी, श्रीमहाराजहि जान।
शब्दब्रह्म परब्रह्ममय, दुबिधा दुर्मत भान॥ १८॥
कहलों मैं महिमा कहौं, मोपै कही न जात।
महिमासिंधुअगाध गति, ममगति सीपनमात॥ १९॥
वाणी श्रीमहाराजकी, श्रीमहाराज स्वरूप।
दीपहि दीप जगाय ज्यों, लेत सुकर निजरूप॥ २०॥
मूरखको पंडित करन, पंडितको साक्षात।
वाणी श्रीमहाराजकी, दशोदिशाविख्यात॥ २१॥
कोउ पढो सीखो गुणो, सुगम सबहिको सोय।
वाणी श्रीमहाराजकी, हुई न कोई होय॥ २२॥

वाणी श्रीमहाराजकी, ज्यों पारसको पर्स ।
लोहा कंचन करत ज्यों, त्यों जानो हिय सर्स ॥२३॥
वाणी श्रीमहाराजकी, भृंगीकी ज्यों जान ।
कीट सरिस तनु लेत कर, अपनेही जु समान ॥२४॥
वाणी श्रीमहाराजकी, मलयाचल सम भाय ।
निकट शरन जन तरु सघन, चंदन लेतबनाय॥२५॥
मनमोहन विवदासि गुरु, महिमा कही अपार ।
ग्रंथ भक्तिसागर सरस, जीवन प्राण अधार॥२६॥

इति श्रीदिल्लीनिवासी अमरलोकवासी श्रीविवदासीजीके शिष्य मनमोहनदासजी चरणदासीय वैष्णवकृत श्रीयुत स्वामी चरणदासजीकी वाणी माहात्म्यं संपूर्णम् । शुभम् ॥



श्रीस्वामी चरणदासजी कृत ग्रंथसंग्रहकी अनुक्रमणिका।

इति ।

श्रीव्रजविहारिणेनमः ।



अथ श्रीस्वामीचरणदासजीका-ग्रंथसंग्रह ।

व्रजचरित्रवर्णन ।



दोहा-दीनानाथ अनाथ की, बिनती यह सुनि लेहु ॥
मम हिरदय में आयकै, व्रज गाथा कहिदेहु ॥
चारि वेद तुमकूं रटैं, शिव शारदा गणेश ॥
और न शीश नवायहूँ, श्रीकृष्ण करो उपदेश ॥
कै गुरु कै गोविन्द को, भक्ती कै हरिदास ॥
सबहुँनको एकै गिनौ, जैसे पुहुप रु बास ॥
नारदमुनि अरु ब्यासजू, कृपा करिय सुदयाल ॥
अक्षर भूलौं जो कहीं, कहौ मोहिं ततकाल ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, मम मस्तक पर ईश ॥
व्रजचारित्र मैं कहत हौं, तुमहिं नवाये शीश ॥
सबसाधुन परणाम करि, कर जोरौं शिर नाय ॥

चरण दास बिनती करै, बाणी देहु बनाय ॥
सदा शिव ब्रज में रहैं, करि गोपी को रूप ॥
मूरति तो परगट भई, आप रहत हैं गूप ॥
बंशीबट ढिग रहत हैं, करत रहत हैं ध्यान ॥
बकता वेद पुराण के, परम पुरातम ज्ञान ॥
ब्रह्मादिक कलपत रहैं, वृन्दावन के हेत ॥
सुधि आये ब्रजभूमिकी, बिसरिजाय सब वेत ॥

अब ब्रजकी गति गाय सुनाऊं । बुद्धि शुद्धि हरिभक्ति जु पाऊं ॥
चिन्ता मेटन भूमि बखानी । रणजित मित जहँ दुर्गबिनानी ॥
कमलापति को चक्र सुदर्शन । चरणदास ताको करै बन्दन ॥
मथुरा मण्डल तापर रहै । व्यासदेव मुनि ऐसे कहै ॥
बाराह संहिता में जो गायो । सो मैं भाषा बीच बनायो ॥
गोवर्द्धन महिमा अति भारी । चरणदास ताके बलिहारी ॥
जाकी महिमा सबने गाई । जहाँ कृष्ण नित गऊ चराई ॥
खुरक बनाय धेनु जहँ राखी । अजहूं चिह्न देत हैं साखी ॥

दोहा–गोवर्द्धन बिनती करूं, मो बिनती सुनि लेहु ॥
जगतफांस सों काढ़िकरि, भक्तिदान मोहिं देहु ॥

हाटकरूप अडोल खरारी । जाकी शरण रही ब्रजसारी ॥
ता दिन इन्द्र सकोप पठायो । सकल मेघ झुकि ब्रजपरआयो ॥
करपल्लव पर गिरि हरि धारो । तबहीं शरण रहो ब्रजसारो ॥
दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै । कञ्चनरूप पुराण बतावै ॥
मथुरामण्डल में गिरि सोई । मथुरा मण्डल अब सुनिलोई ॥
चौरासी कोशी परमाना । मथुरामण्डल व्यास बखाना ॥
हरिके चरण सदा जो परसै । कृष्णरूप में निशिदिन सरसै ॥

सखा संग लिये हरि डोलैं। सखियनके सँग करतकलोलैं॥

दोहा–सदा कृष्ण ब्रजमें रहैं, मोहिं मिलत हैं नाहिं॥
लहर मेहर कबहूं करैं, आनि गहैं मों बाहिं॥

जामें बारह बन बड़भागी। बारह उपवन हैं अनुरागी॥
जिनमाहीं हरि वेणु बजावैं। मधुर मधुर बांके सुर गावैं॥
चौथे पदको है वह स्वामी। सब जीवनको अन्तरयामी॥
भक्तन हेतु रहैं ब्रजमाहीं। गुप्त रहैं वृन्दाबन ठाहीं॥
फिरत रहैं सबहीं बन सुन्दर। अन्तर बनो रास को मन्दर॥
जगत दृष्टि सों रहैं अलोपा। मिलिहैं ताहि ध्यान जिन रोपा॥
मथुरामण्डल परगट नाहीं। परगटहै सो मथुरा नाहीं॥
मथुरामण्डल यही कहावै। दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै॥

दोहा–बन उपवन अब कहतहौं, मथुरामण्डल माहिं॥
बिना भक्ति ब्रजनाथकी, क्योंहू दीखत नाहिं॥

उपबन कदम मंडतबन दूजा। नंदी सुर रु नंदबन सूजा॥
मंगल आनँद बन वहि गायो। जहां महर जा गावँ बसायो॥
संकेत बन सो सब जग जानै। बरसानो सब कोउ पहिंचानै॥
भोजन थाली वही कहायो। जहाँ बैठि भात हरि खायो॥
सुगन्ध बन अब सोइ कहावै। अखण्ड बन पुस्तक दरशावै॥
खेलन बन द्रुम खेलत रहैं। मोहन बन केती बन कहैं॥
दधि ग्राम बन वही कहायो। लूटि लूटि जहँ दधिहरिखायो॥
वत्सहरन बन वही कहायो। ब्रह्मा माया देखि भुलायो॥

दोहा–ग्वाल बाल ब्रह्मा हरे, राखे कहूं दुराय॥
जानि बूझि टारो दियो, लीन्हें और बनाय॥

जब ब्रह्मा समुझो करि ज्ञाना। कर्त्ता कृष्ण सत्य करिजाना ॥
फिरि चेतन ह्वै शीश नवायो। आदिपुरुष पुरुषोत्तम पायो ॥
द्वादश उपवन गाय सुनाये। मथुरामण्डल मध्य बताये ॥
द्वादश बनकी गति सुनिलीजै। जिन माही हरिध्यान करीजै ॥
भद्रा बन अति महा सुहायो। श्रीबन लालनके मनभायो ॥
भांडिर बनकी महिमा गाऊँ। भिन्न भिन्न कहि तोहिं समझाऊँ॥
लोहबन महिमा कहियत भारी। महाबन सुन्दरता अति धारी ॥
तालरबन वहि दृष्टि निहारो। धेनुकदानव जहँ हरि मारो ॥

दोहा—दानव धेनुक महाबलि, भाव भक्ति हरि हेत ॥
मुक्तिकाज सेवन कियो, तालरबन को खेत ॥

खिदरबन जानत सब कोई। फूल माल जहँ लालन पोई ॥
बहुला बन घन दुरमन छायो। कुमुदबन तोहि कहिसमुझायो॥
कामाबन लालन सुखदाई। मधुबन लालन भूमि सुहाइ ॥
वृन्दाबन की शोभा भारी। रास रच्यो जहँ श्रीबनवारी ॥
बन उपवन शोभा गति ईशा। शिव ब्रह्मादिक नायो शीशा ॥
इन्द्र बरुण कुबेर विज्ञानी। इनहूँ गति मति ब्रजकी जानी॥
बलि रावण जहँ सेवा लाई। ऊंची नवनिधि उनहूं पाई ॥
सप्तऋषि[1] मिलि सेवन कीन्हो। ऊंचो आसन ध्रुवको दीन्हो ॥

दोहा—बहुतक सुर नर तारिगये, तप करि ब्रजके बीच ॥
जाति पांतिको को गिनै, ऊंचा नीचा नीच ॥
वृन्दाबन सबसों बड़ो, जैसे दूधमें घीव ॥
सब धर्मन हरिभक्तिज्यों, यथा पिण्ड में जीव ॥

१ नारद वशिष्ठ रु भृगुमुनि, अंगिरा कश्यप जान। विश्वामित्र रु पुलस्त्यजी ऋषि हैं सत प्रमान ॥

सब तीरथ जगमें बड़े, जिनहूं में हैं ईश ॥
उन सेवन फल कामना, इहि सेवन जगदीश ॥
बीसकोश के फेरमें, वृन्दावन को जान ॥
कुंजगली अति सोहनी, द्रुमबेली पहिंचान ॥
कंचनकी जहँ भूमिहै, धरे सतोगुण भेख ॥
चरणदास बलिबलि गयो, दिव्य दृष्टि करि देख ॥
फूल जु फूले ऋतु बिना, नाना छबि बहुरंग ॥
अलि झलकत गुञ्जत फिरैं, भँवरी सुत लिय संग ॥
ऋतुबसन्त जहँ नितरहत, बिहरत नंदकिशोर ॥
कुहकत कोयल मगन ह्वै, बोलत दादुर मोर ॥
तिहिबिचवृन्दाबन महा, निज वृन्दाबन जान ॥
तिरकोणी वर्णन कियो, योजन है परमान ॥

जाकी महिमा सबहुन गाई । रासकरैं जहँ कुँवरकन्हाई ॥
यमुना जहँ परिकरमा दीन्हीं । गुप्तपिया की लीला चीन्हीं ॥
गोपसुता जहँ नित उठिन्हाई । बर पूरण पायो कुँवर कन्हाई ॥
श्यामरङ्ग निर्मल जल गहरी । वृन्दाबन के ढिगढिग लहरी ॥
आशा मंशाकरि कोइ न्हावै । सहस सुरसरी को फलपावै ॥
दिव्यवृन्दाबनदिव्यकालिन्दी । देखै सो जीतै मनइन्द्री ॥
निकट किनार वृक्षनकी छांहीं । आयपरी यमुना जल माहीं ॥

दोहा–भक्ति बिना पावै नहीं, वृन्दाबन की संध ॥
विनपाये निन्दा करै, भोंदू मूरख अंध ॥

झिलमिल सुवकी उठत तरंगा । बोलत दादुर अरु सुरभंगा ॥
कालीदह महिमा सुनु भ्राता । सहस गंगके फलकी दाता ॥
विहार घाट बसि भजन करीजै । जेहि सेवन यम ज्वाब न दीजै ॥

बंशीबट वसि हठ इमि कीजे। तजै देह जब दर्शन लीजे॥
अब सुन वृन्दाबन की बतियाँ। शीतलकरी हमारी छतियाँ॥
बनघन कुञ्जलता छबिछाई। झुकि टहनी धरणी पर आई॥
करत मंद समीर पयाना। बसत सुगन्ध सबै अरघाना॥
बरसत अंमृत फुही सुहाई। निकसत कोमल गोभ गुहाई॥
दोहा-वृन्दावनमें रहत हैं, ज्ञानी गुणी अतीत॥
वृन्दाबन को ना मिलैं, कोउ लहत जगजीत॥
नित बसन्त जहँ सुगन्ध सुरारी। चलत मन्द जहँ पवन सुखारी॥
पुष्प विकसि रहे रङ्ग बिरङ्गा। लेतबास गुञ्जत सुरभङ्गा॥
बोलत भँवर महा ध्वनि गाजैं। मानो अनहदकी गति साजैं॥
जुगुनू दमकि चमकि चकरावैं। समय जानिकारि हर्ष बढ़ावैं॥
नाचत मोर करत चतुराई। पंख पसारि मुदित मगनाई॥
कैइकउचक बोल निज बोलैं। कै इक कुञ्जन ऊपर डोलैं॥
युगल नाम लै कीर पुकारैं। बारबार वन ओर निहारैं॥
वृन्दावन चारौ युग माहीं। गुप्त[1] रहैं शुकदेव बताहीं॥
दोहा-वृन्दावनकी साधगति, कापै बरणी जाय॥
जैसी जाकी दृष्टि है, तैसोही दरशाय॥
जैसे हरि मथुरा गये, सबनबिलोक्यो आय॥
काल कंसकी दृष्टिमें, साधुन प्रभू लखाय॥
मथुरामें योधा बड़े, जिन्हैं मल्ल दरशाय॥
नारिन दरशै कामसम, प्रीतिरीति अधिकाय॥
वृन्दावन सोइ देखिहै, जिन देख्यो हरि रूप॥
दुर्लभ देवनको भयो, महा गुप्त सों गुप्त॥

१ गुप्त.

वृन्दाबन सेवन करै, अमरलोक[1] को जाय ॥
इन्द्रीजीतै हरि भजै, प्रेम प्रीति के भाय ॥

रसिक केलि वृन्दाबन माहीं । अमरलोक की भांति कराहीं ॥
अमरलोकतिहुँलोकसों न्यारो । मथुरा मण्डल अंश बिचारो ॥
अमरलोक बिच है निज धामा । जासु अंश वृन्दाबन नामा ॥
पुरुषोत्तम निज धामाँ माईं । कारण प्रेम रहे ब्रज आईं ॥
पुरुषोत्तम प्रभु लीला धारी । वृन्दाबन में सदा बिहारी ॥
निजधामाकी कहियत शोभा । वृन्दाबनमें रहै अलोभा ॥
दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै । सकल पुराण वेद यों गावै ॥
गोल चौतरो निज वृन्दावन । तापर वारौं अपनौ तनमन ॥
रहो चौतरो छिपि वहि ठाहीं । जैसे अग्नि काठके माहीं ॥
तापर चौंसठि खम्भा सोहैं । कोटिकामको निज मनमोहैं ॥
तापर रंगमहल अधिकाई । कुन्दन रूप स्वरूप सुहाई ॥
रंग महल अरु खम्भनमांईं । पन्नालाल बेलि की नाईं ॥
पन्ना नग लागे जहँ मोती । झलकैंजगमगजगमगज्योती ॥
रंग महल यों छिप्यो गुसाईं । जैसे लाली मेंहँदी माईं ॥
नित बिहार जहाँ करैं बिहारी । कृष्णकुवँर अरु राधाप्यारी ॥
गवररूप वृषभान दुलारी । श्यामरूप हैं कृष्ण मुरारी ॥
नीलांबर ओढ़े सँग राधा । दिव्य आभूषण रूप अगाधा ॥
भूषण अँग सँग लाजत ऐसे । चन्द निकट लघु तारे जैसे ॥
पीत वसन पहिरे नँदलाला । मोर मुकुट माथे गलमाला ॥
जरद बादलेको अँग नीमा । बन्धी गलजिंदे सुख सीमा ॥
मोतियनकी माला गल सोहै । नाक बुलाक अधरपर जोहै ॥

---

१ मोक्षधाम.

मकराकृत कुण्डल श्रवननमें । युगल दामिनी मानहुँ घनमें ॥
श्याम भुवंगम जुलफैं प्यारी । बांकीभौहैं कुटिल अनियारी ॥
ललचौहैं अरु नैन ढरारे । रसके माते अरु कजरारे ॥
मोती नासाके बिच लटकै । बोलत बोल होठ पर मटकै ॥
मुरली मुख ताको रसपीवै । चाहनवारो देखत जीवै ॥
गले धुकधुकी सुन्दर झमकै ।तामधिकौस्तुभमणिअधिचमकै
अधिक सुघर पहिरेहियचौकी । बनमाला कहियत नौनिधिकी
गोल भुजनपर बाजू सोहै । पहुंची कड़ा कनक करि दोहै॥
पहुंचीढिग पहिरे जहँगीरी ।रतनचौक छबि लगी जँजीरी॥
रतनचौक है पीठ हथेली । लगी जँजीर मुदरियन भेली ॥
सोहैं छाप छला अरु मुँदरी । तुहसत पहिरे सुन्दर अँगुरी ॥
इक्किस चिह्न चरणनमें धारे । झुनुक झुनुक पैंजनि झनकारे ॥
मन्द मन्द बिहँसत मुसकाई ।रणजित मित छबि कही न जाई॥
नितकिशोरअरुनित्तकिशोरी । द्वादश बरष अवस्था भोरी ॥
राधे भूषण छबि कह गाऊं । नाम लेत मनमें शरमाऊं ॥
हूं मैं दास नाम रणजीति[1] । भक्तिदान मोहिं दीजैरीति ॥
बहुत सखी जिनके निजसंगा । रासकेलि खेलैं बहुरंगा ॥
बनके चौंसठि खम्भे माहीं । होत अखण्ड रास वहि ठाहीं॥
झुनुक झुनुक सखियन पगबाजैं। घुंघुरू अधिक महाध्वनि गाजैं
दिव्य भूषण पहिरे पियप्यारी । शशिवदनी तिरगुणते न्यारी॥
नवल किशोरी गौरी सारी । सुघर सयानी चातुर नारी ॥
दिव्यवस्त्र अरु मधुर शरीरा ।अधिक रूप छबि गहर गंभीरा॥
कजरारी कच लटकै बेनी । अंजन नैन सैन पिय देनी ॥

१ चरण दासजीका प्रथमका नाम यहीथा.

चूड़ामणि गहनो अति नीको । शीशफूल अरु बेनी टीको ॥
नथ बुलाक अरु बन्दी झलकैं । घूंघरवारी लटकैं अलकैं ॥
मुखऊपर अलकैं छबि ऐसी । चन्द्चढ़ी द्वै नागिन जैसी ॥
करणफूल संग झुमके मलकैं । सबसखियनके भूषण झलकैं ॥
चम्पाकली नौलड़ी माला । चन्दनहार सुपहिरे बाला ॥
कंठुला जैसे गले जनेऊ । अरु हिय चौकी महा अभेऊ ॥
फूलमाल सखियां सब पहिरे । गुंजनकी माला हिय लहिरे ॥
बाहन में बाजूबंद बांधे । बंकबला बाहन पर साधे ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी । सुबग पछेली बँगली रूरी ॥
कंगनी अरु पहिरे जहँगीरी । रतन चौक आरसी धीरी ॥
छापछला अरु पहिरे गूंठी । नुहसत पहिरे अजब अनूठी ॥
पांवनमें पगनेवर बाजें । नखशिखलौं आभूषण साजें ॥
झुनुक झुनुक नाचैं अरु गावैं । ठुमुक ठुमुक निरतैं अरु धावैं ॥
कबहूं थेइ थेइ थेइ थेइ करैं । कबहूं करऊपर कर धरैं ॥
कबहूं घिनन घिननअँगमोरैं । भाव बताय तान बहु तोरैं ॥
कबहूं कर उठाय गति चालैं । साँगोपांग बतावत हालैं ॥
ह्वै अनुराग राग बहु गावैं । घुंघुरूकी गति अधिक बजावैं ॥
कोई नाचै कोई गावै । कोइ मृदंग कोइ ताल बजावै ॥
बैन सरू काहू कर राजै । कोउ तँबूरा नारी साजै ॥
उपँग लिये कर कोउ सहेली । अमृत कुण्डली कोउ अलबेली
कोई बीन कोइ लिये मुहचङ्गा । मगन रूप सबही निजसङ्गा ॥

दोहा—कहा बुद्धि कहाकहिसकूं, रासकेलि को साज ॥
बाजे हैं बहुभांति कै, बर्णत आवै लाज ॥

१ पूर्ण रीतिसे.

कबहुं करसों कर मिला, नृत्यत श्री गोपाल ॥
कबहूं बैठे साँवरो, नृत्तत सुन्दर बाल ॥

कबहूं हँसकारि निकट बुलावैं। कबहूं फूलमाल पहिरावैं ॥
कबहूं मन्द मन्द मुसकावैं। बैन सैन दै नृत्य बतावैं ॥
वृन्दावनमें ऐसी लीला। चरण दासको जहां वसीला ॥
जोकोई इनको ध्यान लगावै। अमरलोक निश्चय करि पावै ॥
सिमिटोमन कबहूं नहिं फूटै। सोबत जागत ध्यान न छूटै ॥
जोकोइ इनको ध्यान न करिहै। भरमि भरमि चौरासी परिहै ॥
सुरनरमुनि सबही मिलध्यावैं। शिव ब्रह्मादिक अन्त न पावैं ॥
वेदबिना यह भेद न पावै। आपु भरमि अरु जग भरमावै
वेदपुराण संहिता गावैं। चारोंयुग हरिभक्त बतावैं ॥

दोहा—इत उत भटको जग फिरै, कीन्हो नाहिं बिचार ॥
सत्य पुरुष जानों नहीं, कैसे उतरै पार ॥

द्वापर बीतो कलियुग आयो। राजाको शुकदेव सुनायो ॥
कलियुगकी दुर्बुद्धि बताऊं। सुनहु परीक्षित कहिसमुझाऊं ॥
ओछी बुद्धि मनुष्यकी होगी। सकल विकल अरु मनके रोगी
सूक्षम ज्ञान महाअभिमानी। नहीं मानिहैं वेद पुरानी ॥
परमेश्वरकी निन्दा करिहैं। भूतमसानी चितमें धरिहैं ॥
खेतरपाल भूमिया मानै। कृत्रिमको कर्त्ता करि जानै ॥
परमेश्वरकी वात न भावै। ऐसो उत्तर तुरत बतावै ॥
कहिहैं राम कहां हैं भाई। हमहूंको तुम देहु दिखाई ॥

दोहा—चहूंओर हरिको विभव, सातद्वीप नौखण्ड ॥
चरणदास सुनु आंधरे, राच्योकिन ब्रह्मण्ड ॥

भक्ति बिना दीखै नहीं, इन नयनन हरिरूप ॥
साधुनको परगट भयो, बिना भक्ति हरि गूप ॥

साधुसन्तकी निन्दा करिहैं । भजनकरैं तासे बहुअरिहैं ॥
करि अभिमान आपमेंजरिहैं । गुरुको कहो नेकनहिं करिहैं ॥
पंथ खड़े करिहैं छत्तीसा । भरमपूजि तजिहैं हरि ईसा ॥
दम्भ झूठकी सेवा करिहैं । झूठे पंथनमें जा लरिहैं ॥
गऊ ब्राह्मण भिष्टल होई । बाप पूतमें परिहै दोई ॥
विद्यादान कपट व्यवहारा । राजा दुष्ट दुखित संसारा ॥
वेद पढ़े करिहैं अभिमाना । हम पंडित अरु सब अज्ञाना ॥
पढ़े पुराण भेद नहिं जानैं । साधुनसों झगड़े बहु ठानैं ॥
पंथ पुजाय हरिको बिसरावैं । झूठे बाद बिवाद बढ़ावैं ॥
व्यभिचारिणि होइहैं बहुनारी । बोले झूठ बहुत परकारी ॥
शुकदेव कह राजासों बैना । सो अब देखे अपने नैना ॥
राजा डाँड़ि बाँधि करि लूटै । पूजैं भूत रामसों छूटैं ॥
गो बिष्ठा सो खाती जानी । पंडित देखे बहु अभिमानी ॥
दम्भ कपट बहु पूजा दौरी । कलुवा जाहर पूजैं बौरी ॥
पण्डित वेद पढ़े बिसरावैं । स्याने भोयको शिरनावैं ॥
हरिके साधुनको बिसरावैं । तजैं राम औरनको ध्यावैं ॥
हरिकी भक्ति सदा चालिआई । वेद पुराणनमें जो गाई ॥
उनको समझि भये जोज्ञानी । नाभाजिनकी भक्ति बखानी ॥
जिनकी महिमा सबजग जानी। सब जानतहैं चतुराज्ञानी ॥
पीपा सदना सैना नाई । धना जाट अरु मीराबाई ॥
नामदेव रैदास चमारा । तुलसी माधो मीर बिचारा ॥
कूबा कुम्हरा फत्तू सक्का । सेऊ समरन रंका बंका ॥

करमैंती अरु करमा बाई । दास कबीरा बाणी गाई ॥
जैदेवा अरु नरसी महता । दास मलूक कड़ामें रहता ॥
अनन्तानन्द कील अरु जंगी । देव मुरारि निपट सरवंगी ॥
नरहरि लालदास हरिबंसा । रंगनाथ बनवारी हंसा ॥
नानक सूरदास अरु साधू । सनकसनन्दन कहिये आदू ॥
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण शवरी । हनूमान शंकर औ गवरी ॥
बाल्मीकि अम्बरीष सुदामा । मोरध्वज राजा संग्रामा ॥
बहुतक भक्त और जो भये । नाम न जानूं जात न कहे ॥
कई कोटि बैष्णव हैं बांके । सबही गये मुक्तिके नाके ॥
चरणदास हरिभक्ति बिचारी । सुमिरिसुमिरि पहुँचोनरनारी ॥

दोहा—लिखिपढ़ि समझि बिचारकरि, सदाकरौ हरिध्यान ॥
कृष्णभक्ति दृढ़करि गहौ, मिटै सकल अज्ञान ॥

कवित्तसांगीत ।

मुकुटजटित शिर अधिक बिराजत, गहे बँसुरिया अधरनधरनम् ॥
शंख चक्र गदा पद्म बिराजत, कोटि मदनकी छबि बरनम् ॥
गिरिवर नखधरि असुरन मारे, सन्तनके दुखको हरनम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
कुमकुम बिन्दी दीपित भालं, उदधि जात द्युतिता हरनम् ॥
मकराकृत कुण्डल अतिराजत, झुमक दामिनी छबिधरनम् ॥
कटि किंकिणि पैंजनि पग बाजत, मुक्तमाल सुरसरि बरनम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
सुन्दर बाल लाल सँग लीन्हे, रास करत मन अति मगनं ॥
घुमिरि २ धुकि २ कर निर्त्तत, खुटर खुटर नाटक बरनं ॥
मधुरमधुर ध्वनि बज्जत गज्जत, झनक झनक झनका झरनं ॥

जनचरण दास चरणन को चेरो, सदारहै गिरिधर शरनम् ॥
रास रचावैं सब सचुपावैं, सांवरे बदन छबि वर्णनम् ॥
धुधक धुधक धूधूकारि नृत्यत, तकृत तकृत ताधिनननननम् ॥
झुनुक झुनुक नूपुर झुनकारत, झनक झनक झनझननननं ॥
जन चरणदास चरणन को चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥

क०—नन्दके कुमार हौंतौ कहौ बारबार मोहिं,
लीजिये उबारि ओट आपनी में कीजिये ॥
काम अरु क्रोध काटिडारौ यमबेड़ा प्रभु,
माँगौं एकनाम मोहिं भक्तिदान दीजिये ॥
और की छुटायो आश सन्तनको दीजै साथ,
बृन्दाबन बास मोहिं फेरिहू पतीजिये ॥
कहै चर्णदास मेरि होय नाहिं हास श्याम,
कहूं में पुकारि मेरी श्रौन सुनि लीजिके ॥
वाही हाथ कुचगहि पूतना के प्राण सोखे,
पाय ऊंची पद निज धामको : सिधारी है ॥
वाही हाथ श्रीधरको मुखमाड़ोदहीसेती,
छातीपर पावँ दै मरोरि जीभ डारी है ॥
वाही हाथ कूबरी के कूबरको सीधौ कियो,
वाही हाथ मत्तगज खैंचि मूढ़ मारी है ॥
वाही हाथ बाँह चर्णदास कहै आयगहो,
जाही हाथ यमुनामें नाथ्यो नाग कारी है ॥

इति श्रीचरणदासजीकृतव्रजचरित्रसम्पूर्णम् ॥

वैकुंठविहारिणे नमः ।



अथ अमरलोकअखण्डधामवर्णन ।



दोहा—प्रणाम श्रीशुकदेव को, सो हैं गुरू दयाल ॥
काम क्रोध मद लोभ से, काढ़ै मेरे साल ॥
बाणी विमल प्रकाश दी, बुधि निर्मलकी तात ॥
मोहिं मूरख अज्ञानको, नाहिं आवत है बात ॥
अमरलोक वर्णन करौं, वेही करैं सहाय ॥
दृष्टि हिये मम खोलिकर, सबही देहु दिखाय ॥
भेद लियो गुरुदेव सों, अद्भुत रचौं सुग्रन्थ ॥
साखी वेद पुराण में, जानी सुनिये सन्थ ॥
भेद अगोचर कोइ कोइ जानै । गुरू दिखावै तो पहिंचानै ॥
पता कहैं कछु वेद पुराना । ज्योंका त्यों उनहूं न बखाना ॥
कछु कछु सत मारगहू भाखैं । फिरि भूलै समुझैं नहिं साखैं ॥
हरि कृपा मैं प्रकट गाया । किया उजागर खोलि सुनाया ॥
दोहा—महा कठिन दुर्लभ हुतो, अमरलोक को भेद ॥
ताको मैं बीजक कियो, भाख्यो भेद अभेद ॥
निराकार तौ ब्रह्म है, माया है आकार ॥
दोनों पदवी को लिये, ऐसा पुरुष निहार ॥
माया जीव दोऊ ते न्यारा । सो निज कहिये पीव हमारा ॥
क्षर अक्षर निरअक्षर तीनो । गीता पढ़ि सुनि इनको चीनो ॥

गीता अक्षर जीव बतावै। क्षरमाया सोइ दृष्टि दिखावै ॥
निरअक्षर है पुरुष अपारा। ज्ञानी पण्डित लेहु बिचारा ॥
जीवातम परमातम दोऊ। परमातम जानतहै कोऊ ॥
आतम चीन्हि परमातमचीन्हों। गीतामध्य कृष्ण कहिदीन्हों॥
माया उपजै विनशै अतिही। चेतन ब्रह्म अमर है नितही ॥
पारब्रह्म पुरुपोत्तम जानो। चरणदासके सो मन मानो ॥

दोहा—अमरलोक बिच पुरुष है, ब्रह्म जु सबके माहिं ॥
माया दरशत है सबै, ब्रह्म दीखतहै नाहिं ॥

अब सुन अमरलोककी बानी। त्रैगुण रहित परम सुखदानी ॥
तेज पुंजके ऊपर राजे। अहं विराट सो बाहर गाजे ॥
ताको ज्योति कहत नरलोई। तेजपुंज कहियत है सोई ॥
सूरज मण्डल ताहि बतावै। योगी योग युक्ति सों पावै ॥
सूरज मण्डल जैहै चीरा। वा लोके कोइ पैहै बीरा ॥
कोटिभानु को सो उजियारो। तेज पुंजको रूप विचारो ॥
तीनि लोक सों बाहर होई। सात भवन सों बाहर सोई ॥
ताके ऊपर अविचल लोका। पाप पुण्य दुखसुखनहिं शोका ॥
काल न ज्वाल अवाधिनहिंहोई। रंजितदास जहँ सुरति समोई ॥
महाअगोचर सुजसों गुप्ता। जहां विराजतहै भगवंता ॥
अमरलोक निज लोक कहावै। चौथा पद निर्वान बतावै ॥
अगमपुरी बेगमपुर ठाऊं। कहा बुद्धिजो सब गति गाऊं ॥
कछुइक बराणि बताऊं वाको। ब्रह्मासुत सतयुगमें भाषो ॥
पुष्पद्वीप है श्वेत अकारा। सब ब्रह्मण्डनसों है न्यारा ॥
जो कोउ जाय बहुरिनहिं आवै। आवागमन सकल बिसरावै ॥

जो कोउ गयो बहुरि नहिं आयो। देही दिव्यरूप अति पायो ॥
सोलह वरष उमिरि नित रहै । अजर अमर नित आनँद लहै॥
बूढ़ा बाला होय न तरुणा । षोड़शभानु रूप जहँ धरणा ॥
तत्त्वस्वरूपी काया पावै । भवसागरमें बहुरि न आवै ॥
पांचतत्त्व बिनहै थिरथावो । ना वह बन्यो न कृत्य बनायो॥
ओर छोर कछु दीखत नाहीं । कबसों है औ कब सों नाहीं॥
है अडोल मर्याद न ताकी । बेपरमान वेद यों भाषी ॥
वेद पुराण पार नहिं पावैं । कछू कछू धरिध्यान बतावैं ॥
अनन्त भानुको सो उजियारो । पिण्ड ब्रह्मण्ड दोउते न्यारो ॥
लोकमध्यअविचलनिजधामा । श्वेतस्वरूप अगम पुर नामा ॥
अगमपुरी निराधारा सूंची । हंस लहैं जिनकी मति ऊंची ॥
बेहद लोक बन्यो अतिभारी । असंख्य भानुकीसी उजियारी ॥
दोहा—हद कहूं तो है नहीं, बेहद कहूं तो नाहिं ॥
ध्यान स्वरूपी कहतहौं, बैन सैनके माहिं ॥
अतिउज्ज्वल रवि दृष्टि न ठहरे। मणिहीरा लागे जहँ गहिरे ॥
कई रङ्गके हीरा भाखे । कलश कँगूरा अस्थिरराखे ॥
ता भीतर द्रुम बहुत अशोका । अछयवृक्ष फललगे निरोका ॥
कल्पवृक्ष बहुरङ्ग बिरङ्गा । फल अरु पात फूल इकसङ्गा ॥
कोमलदल शोभा अतिभारी । अजर पुरुषदरशनअधिकारी ॥
चेतनरूप गहर अति छाहा । साधु रहत तिनकी परछाहीं ॥
षोडश भानु सम देह स्वरूपा । हरिरस मदमाते निधिरूपा ॥
उन वृक्षनके निचनिच मंदर । अनगिनमहल महामठसुन्दर ॥
महलमहलपर ध्वजा पताका । पुरुषोतम पुरषनामलिखिराखा
ध्वजा पताका लहरत ऐसे । सिमिटि बीजुरी बहुतक जैसे ॥

रतन जटित तिनकी अँगनाई। बैठत उठत चलत हरषाई ॥
काम क्रोध नहिं लोभ अधीरा। निर्मल दशा शील गुण धीरा॥
जहाँ न आलस नींद जँभाई । भूखप्यास मिलता नहिं भाई॥
मैल-पसीना आँशू नाईं । दिव्य देहधरि रहे गुसाईं ॥
एक रूप एकै गतिपाई । एक वरण एकै संबदाई ॥
संशय शोक रोग नहिं दहै । मगनरूप मन आनँद लहै ॥
षोड़शवर्ष अवस्था जितही । गुण पौरुष हरिजन के अतिही॥
दिव्यभूषण दिव्यवस्तर अङ्गा। श्यामगात सुन्दर छबि अंगा ॥
जुलफैं लटकि रहीं कजरारी ।कुण्डल छबि सोहत अधिकारी॥
नासा मोती सुबक सुढारा ।सुन्दरतिलक लगतअतिप्यारा॥
दीरघ दृढ कछूक अरुणाई । माथे मुकुट जटित ललिताई॥
घरघर दिव्य आसन सिंहासन। और महासुखहैं हरिदासन ॥

दोहा—भयमेटन औ तम हरण, तुमहिं नवाऊं सीस ॥
चरणदास चरणन परो, भक्तिकरो बकसीस ॥
गुरु शुकदेव कृपाकरि, दीन्हो भेद लखाय ॥
साधुनके पग पूजतै, सकलब्याधिमिटिजाय॥
आस पास हरिजन रहैं, मध्य ईश दरबार ॥
रसिक केलि बहु कुंजहैं, ललित द्वारहैं चार ॥
राजमहल जनपति रहैं, कापै बरण्यो जाय ॥
गिनतशारदाछबि अधिक, गौरीसुत थकिजाय ॥

अनँत भानु को सो उजियारो। वा मण्डलको रूप बिचारो ॥
समतुल और कासु को लाउं। बैन सैन दे ताहि बताउं ॥
चन्द सूर वहिठौर न चीन्हो । हितदृष्टान्तकोपटतरदीन्हो ॥
आदि अनादि पुरातम धामा । जैसे आदिपुरुष घनश्यामा॥

श्वेतहिरूप स्वरूप सुगन्धा । सहज महकजहँउठतसुगन्धा ॥
चार द्वार बहु बाजन बाजें । अनहद शब्द महाध्वनिगाजें ॥
दिव्यरूप जो लगे किवाँरा । तिनके आगे बाग सुढारा ॥
हरो बाग अद्भुतहै भाई । दूजे द्वार महा अरुणाई ॥
तीजे द्वार बाग पियराई । चौथे ऊदो है थिरथाई ॥
उन बागन के आसा पासा । बहुत भवनजहँसाधुनिवासा ॥
मेडी मण्डप बहुत सुढारी । श्वेतबरण सुन्दर अधिकारी ॥
साधुसन्त जहँ हरिजन पूरे । दास भाव भावना शूरे ॥
षोड़श भानु कि सुन्दरताई । जगत जीति पहुँचै जो जाई ॥
सखाभाव पहुँचत वहि ठाईं । सखीभाव भीतर को जाई ॥
धरै स्वरूप अनूपम भारी । सदा सुहागिनिहरिप्रियप्यारी॥
परमपुरुष पुरुषोत्तम पावैं । निकटरहैं नित केलि बढ़ावैं ॥
चारौं मुक्ति जहाँ करजोरैं । भाव बताय तान बहु तोरैं ॥
दरशन कारणकी सुखदाई । धरे स्वरूप रहैं हरषाई ॥
रतन जड़ित जहँ भूमिसुहाई । कोटिभानु छबि रहत लजाई ॥
एकसमयनितऋतुछबिपावत । शीतऊष्णपावस नहि आवत ॥
ऋतु वसन्त पीरी छबि सोहै । बनघन कुंज लता मनमोहै ॥
निज वृन्दाबनहै वहि ठाहीं । सदा बसो मेरे मनमाहीं ॥
दिव्य फूल फूले बहुरंगा । बिन ऋतु फूले रंगबिरंगा ॥
सकल सखी विचरत हरि संगा । गोरी सखी श्याम हरिअंगा ॥

दोहा-पुष्प जु फूले नितरहैं, मौरैं ना कुम्हिलायँ ॥
कई बरण कइ रंगसौं, अति सुगन्ध हरषायँ ॥

उन पुष्पन को नाम न जानौं । कहा नामलै तिनहि बखानौं ॥
बहुत वृक्ष कुंजन घनछाहीं । फल अरु फूल लगे उनमाहीं ॥

काह्लुमन फलैं नहिं फूला । पुष्प रूप है आपहि भूला ॥
कोऊ लाल रूप है छायो । कोऊ श्वेत रूप मन भायो ॥
रंग रंग के वृक्ष बखाने । सो पुरुषोत्तम के मनमाने ॥
बनके माहिं बहुत जहँ क्यारी । पुष्प रंग छबि न्यारी न्यारी ॥
कई भांति की बास तरंगा । मनन रूप बोलत स्वरभंगा ॥
बनबिच श्वेतरूप छबिनाना । गोल चौतरो रूपनिधाना ॥
इकरस चेतन परम सढोला । कोटिभानुछबिअमरअडोला ॥
जहँ परिकर्मा सखी सहेली । बारह भानु रूप अलबेली ॥
दिव्य दमक जहँ हीरा लागे । सात रंगके झिलमिल तागे ॥
ऊदा लाल श्वेत अरु पीरा । हरित श्याम लहरी अतिधीरा ॥
तापर चौंसठ खम्भा दमकैं । मानो कोटिभानु छबि झमकैं ॥
खम्भन लगे लाल रु मुक्ता । पन्ना लगे बेलिकी युक्ता ॥
मूंगा लाल फिरोजा भारी । ध्यान धरो ताको नर नारी ॥
इक सबलगे बखानों ऐसे । जैसी युक्ति लगे हैं तैसे ॥
जड़ लालनकी बिद्रुम डारी । पन्ना पात वृक्ष गतिधारी ॥
चुन्नी पँचरँग फूल सुहाये । फल मुक्ताहल झलकझुकाये ॥
और बनी बहु चित्तरकारी । बेलि बङ्क बूटा अधिकारी ॥
हीरा मोती चेतन होई । जानै साधू बिरला कोई ॥

दोहा—ताकी छबि अति ललित है, शोभा सरस सुजान ॥
लगो चँदोवा दिव्य अति, चेतन करो बखान ॥

लगे चँदोवा झालरि मोती । मानौउडगणझिलमिलज्योती ॥
झालर बनी चँदोवा केरी । दिव्य दृष्टि करि साधुन हेरी ॥
तापर रंगमहलकी शोभा । चेतन आनँद सुखकी गोभा ॥
अस्थिर इकरस भीत सुढारी । बने झरोखा अद्भुत बारी ॥

अजब कँगूरा सुबक सुढारे। चौंसठकलशलगैं अतिप्यारे॥
रतन जटितकी खिड़की सोहैं। तिनके आगे दिनकर को हैं॥
भीत झरोखा कलशन माहीं। नग पन्ना लागे सबठाहीं॥

दोहा–मणि हीरा माणिक लगे, रंगमहलके माहिं॥
बिन पहुंचे निजधामके, क्योंहूं दीखत नाहिं॥
आसपास बहु कुंज हैं, बीच लालको धाम॥
चरणदास को दीजिये, सखियन में विश्राम॥
जैसे चौंसठ खम्भ हैं, तैसे करों बखान॥
छत्र सिंहासन वर्णहूं, अरु सखियन की आन॥

तीस खम्भमें खम्भा बीस। तामें चौदह खम्भा ईस॥
परम बिछौनाहै थिरथाये। मानो सूरज लक्ष बिछाये॥
तापर सिंहासन बड़भागी। श्वेतरूप चेतन अनुरागी॥
सिंहासन परकछू बिछायो। शोभा ताकी कहत लजायो॥
धरो गेंद वा तकिया नीके। छत्तर सोहैं ऊपर पीके॥
पियकी शोभा कहा बखानूं। आदि अन्त ताको नहिंजानूं॥
अजरपुरुष पुरुषोत्तम स्वामी। सब जीवनको अन्तरयामी॥
पारब्रह्म अविचल अविनाशी। बायें अंग रूपकी राशी॥
गौरि राधा कृष्ण श्यामघन। सिंहासनपर लसतमुदितमन॥
आसन जहँ अखिलजगदीशा। मुकुटचन्द्रिका सोहतशीशा॥
मकराकृत कुण्डल छबि ऐसी। जगमें कहा बखानूं जैसी॥
जुलफैं श्याम भुवंगस कारी। कजरारी अरु घूँघरवारी॥
सहज सुगन्ध रहै महकाई। लांबीचिकनी अरु बलखाई॥
बांकी भौंह कुटिल अनियारी। तिरछी पलकैं लागैं प्यारी॥
रसके माते घूम घुमारे। ललचौंहैं दृगहैं कजरारे॥

बांके दीरघ अरु ललचौहैं। चितवत सखियनके मनमोहैं॥
सुबक बुलाक नाकमें सोहै। ध्यान करत मेरो मन मोहै॥
बिज्जुलिसीमुसकानिपियाकी। मनखैंचनिअरुभालहियाकी॥
बदन श्यामघन नैननिहारूँ। कोटिभानु छबिमुखपरवारूँ॥
दिव्य निमो अँग मांहीं सोहै। सूरज कोटिकला छबिमोहै॥
कंठी कंठ धुकधुकी झमके। तामाधिकौस्तुभमणिअतिदमकै॥
मोतियनकी माला बनमाला। हुलसैं देखि धामकी बाला॥
दिव्य बँधी गल जंद जड़ाऊ। नौरतननके बाजू बाऊ॥
पहुँची कड़ा कहा छबि गाऊं। समतुल ताकी कहा बताऊं॥
दिव्य जहांगीरी करमाहीं। ताकीसम कछु कलमें नाहीं॥
रतन चौकमें लाल बिराजैं। शोभा गावत मोमन लाजैं॥
रतन चौकहै पीठ हथेली। लगी जँजीर मुँदरियन भेली॥
चौकी सुघर हियेपर राजै। कटिकिंकिणिघुँघुरूध्वनिबाजै॥
युगल चरण पैंजनि झनकारे। दिव्य टोरे तिनमें ठनकारे॥
कोटि चन्द्र दश नखपर वारूं। तलुअनचिह्न इकीशनिहारूं॥
बायें अंग राधिका प्यारी। कोटि चंद्रछबि मुखपरवारी॥
युगल सखी लै चँवर ढुरावैं। हिरदय हरषि महा सुखपावैं॥
खंभ खंभ ढिग सखी सहेली। चौदह खड़ी ईश अलबेली॥
और सखी बहुतक वहिठाऊं। शोभा जिनकी कहतलजाऊं॥
नित्य किशोरी गौरी सारी। पांच तत्त्व त्रैगुण ते न्यारी॥
दिव्य वस्त्र आभूषण जाना। अधिकरूप छबिबारहभाना॥
कजरारी कच लटकैं बेनी। मोतियन माँगभरी छबि पैनी॥
चूड़ामणि गहनो अति नीको। शीशफूल अरु बेणी टीको॥
करणफूल सँग बन्दी लागी। झुमके थिरकैं महा सुभागी॥

अंजन आँजे नैन ढरारे। तीखे अनियारे पिय प्यारे ॥
घूंघरवारी अलकैं लटकैं। बेसरनासा छबिलिये मटकैं ॥
चम्पाकली नौलरी माला। चन्दन हार सु पहिरे बाला ॥
कँठुला जैसे गले जनेऊ। अरु हियचौकी महा अभेऊ ॥
सखी शिंगार हार सब साधैं। बाजूबंद बाहन पर बाँधैं ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी। सुबक पछेली बँगली रूरी ॥
कँगनी अरु पहिरे जहँगीरी। रतनचौकछबि लगीजँजीरी ॥
छाप छला अरु पहिरे मुँदरी। नुहसत पहिरे सुन्दर अँगुरी ॥
पावँन में पगनूपुर बाजैं। नख शिखलौं आभूषण साजैं ॥
और सखी बिखरी बन माहीं। सो काहू बिधि गिनी न जाहीं ॥

दोहा—सुन्दर छबि पियरे बसन, झुण्ड सखिन को जान ॥
कोड पुञ्ज ऊदे बसन, सुघर सवारी आन ॥
लालबसन बहुतक सखी, श्वेत बसन बहुनार ॥
नील बसन बहुभामिनी, सबको रूप अपार ॥
हरे बसन नारी घनी, घनी गुलाबी वेष ॥
बहुत झुण्ड कइ रंगसो, गायसकैं नहिं शेष ॥

निजबन चौसठ खंभे माहीं। होत अखण्ड रास वहिठाहीं ॥
झुण्ड सबै यों बनि बनि आवैं। हुलसि हुलसि लालन ढिग धावैं
रासकेलि खेलैं बहु रंगा। सदा विहार करैं पिय संगा ॥
कबहूं घुमरि घुमरि घुमरावैं। नैन सैन दै भाव बतावैं ॥
कबहूं थेइ थेइ थेइ थेइ करैं। कबहूं अँगुली नासा धरैं ॥
कबहूं कर उठाय गति चालैं। सांगोपांग बतावत हालैं ॥
कबहूं ठुमुक ठुमुक पग धावैं। घुंघुरूकी गति अधिक बजावैं॥
हो अनुराग रागनी गावैं। बाजे अद्भुत अधिक बजावैं ॥

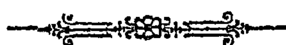
दोहा—कहा बुद्धि कह कहिसकूं, रासकेलि को साज॥
अद्भुत लीला ह्वै रही, वर्णत आवै लाज ॥
अखण्ड धामलीला अमर, नित वृन्दाबन रास ॥
नित बिहार जहँ होतहै, चरणदासको बास ॥
गौरीसुत गाय न सकै, नहीं शारदा बाम ॥
चरणदास कह बुद्धिहै, बरणि सकै निजधाम॥
बड़ी दया मो पै करी, कृष्णकुँवर सुन लाल॥
बाणी आप बनायकै, कीन्हों मोहिं निहाल॥
मम हिरदय में आयकै, तुमहीं कियो प्रकाश॥
जो कछु कहौ सो तुम कहौ, मेरे मुखसों भास ॥
आदि पुरुष परमातमा, तुमहिं नवाऊं माथ ॥
चरणन पास निवास दे, कीजै मोहिं सनाथ ॥
तुमरी भक्ति न छांड़हूं, तनमनाशिरक्योंनजाव॥
तुम साहिब मैं दासहूं, भलो बनो है दाव ॥
गुरु शुकदेव कृपा करी, मूरुख भयो प्रवीन ॥
ममस्तकपर करधरचो, जानि निपट आधीन॥
कोटिनामको फल लहै, तिरबेणी असनान ॥
शोभा गावै लोककी, मूरुख होय सुजान ॥
पढैं सुनैं जो प्रीतिसों, पावैं भक्ति हुलास ॥
नित उठि कर तू पाठ यह, चरणदास कहिभास॥
प्रेम बढै अघ सब हरैं, कलह कल्पनाजाय ॥
पाठ करैं या लोकको, ध्यानकरत दरशाय॥

इति श्रीअमरलोकअण्डधामलीलावर्णन स्वामी-
श्री चरणदासजीकृत सम्पूर्णम् ॥

श्रीशेषशायिने नमः ।



अथ धर्म्मजहाजप्रारम्भः ।



श्रीगुरुचेलासम्वाद ।

शिष्यबचन ।

दोहा—ठाढो हो कर जोरिकै, अरज करै चरणदास ॥
एहो श्री शुकदेव जी, कछु पूछनकी आस ॥

गुरुबचन ।

पूछौ मनको खोलकरि, मेटौं सब सन्देह ॥
अरु तुम्हरे हिरदय विषे, सदा हमारो गेह ॥

शिष्यबचन ।

मैं तो चरणहि दासहौं, तुम तौ परम दयाल ॥
एकन पग पनही नहीं, एक चढैं सुखपाल ॥
यही जु मोंहि बताइये, एक मुक्ति को जाहिं ॥
एकनरकको जाय करि, मारि यमौंकी खाहिं ॥
एक दुखी इक अति सुखी, एकभूप इकरंक ॥
एकनको विद्या बडी, एक पढै नाहिं अंक ॥
एकन को मेवा मिले, एकन चनेभी नाहिं ॥
कारण कौन दिखाइये, करि चरणनकी छाहिं ॥
यही मोहिं समझाइये, मनका धोखा जाइ ॥

ह्वै करि निस्संदेह मैं, चरण रहौं लपटाइ ॥

गुरुबचन ।

जिन जैसी करणी करी, तैसेही फल पाय ॥
भुगतत हैं वे जगत में, ताको बदला आय ॥

शिष्यबचन ।

तुम कही सो हृदय धरी, व्यास पुत्र शुकदेव ॥
सुगति कुगति करणीन को, भिन्न भिन्न कहु भेव ॥

गुरुबचन ।

अब मैं बर्णन करत हौं, ऐशिष धर्मजहाज ॥
तामें बैठे बिधि सहित, रहनी गहनी साज ॥
जो कोइ करणी ना करै, बहुत करै बकबाद ॥
रीता जानौ तासुको, छूटै ना जग व्याध॥
कथनी कै पूजी नहीं, करणी है ततसार ॥
तामें लाभहि लाभ है, बदला दे कर्तार ॥
सूरति कीन्ही साधुकी, तन मन लागी आग॥
बिन करणी कैसे बुझे, हरिसों नाहीं लाग ॥
कथनी कथि दंभी भये, कहै दूर की बात ॥
अन्तरमें करणी नहीं, मनहीं माहिं लजात ॥
दंभी उनको जानिये, जगमें सिद्ध दिखात ॥
तन मन बचन न साधिया, तिहुंबिधि रोपीघात ॥
तनमन साधै साधुसो, बचन साधि जो लेय ॥
उज्ज्वल करणी के सहत, रामभक्ति चितदेय ॥
तनसों करणीही करै, मनसों निश्चय लाय ॥
बचन सु ऐसा बोलिये, जो सबकोहि सुहाय ॥

बिन करणी थोथीं सब बातैं। जैसे बिन चंदाकी रातैं॥
तातें समुझि करो तुम करणी। बिन बोये नहिं उपजै धरणी॥
जैसा बोवै तैसा लुनिये। जानत ज्ञानी पण्डित गुनिये॥
कीकर नींब बुवै सोइ पावै। अरुमेवा बोवै सोइ खावै॥
पिछिली करणी अबके पावै। ताहीको नर करम बतावै॥
होनहार अरु भाग वही है। परालब्ध सोइ बडो कही है॥
खोटी करणी से दुख भारी। होवै रंक पुरुष अरु नारी॥
कहैं शुकदेव सांच यह जानौ। चरणदासलै मनमें आनौ॥

दोहा—कोई कोढ़ी कोइ आंधरा, कोइ रोगी निर्धन्न॥
अंगहीन मांगत फिरै, कोइ भूखा बिन अन्न॥
बिनाबुद्धि कोइ बावरे, कोइ छोटेतन हान॥
कोइ कर्मोंसे अति दुखी, जीवै ना सन्तान॥
कोइ जगत अधीन है, कोइ बिना प्रतीत॥
कोइ सब वस्तूहीन है, यह पापों की रीत॥
जन्म मरण बहु भांतिके, नाना भवन निवास॥
करणीही से होतहै, ऊंच नीच घर बास॥
पशु पक्षी अरु चर अचर, सोभी छूटै नाहिं॥
कर्मोंहीं की चाल सों, भुक्ते जग के माहिं॥

भांति भांतिके कष्ट घनेही। पावत हैं वे कर्म सनेही॥
इनहीं आँखिन सों तुम देखौ। अपने मनमें कारि कारि लेखौ॥
तन छूटे नरके जावै हैं। नाना बिधि के त्रास सहै हैं॥
नरकनकी गति परघट जानौं। शास्त्रमाहिं सबकियो बखानौं॥
अरु इक नरक जगतके माहीं। कोतवाल हाकिमके ठाहीं॥

खोटे कर्मन सूं व्हां जावै। त्रास सहै बहुतै बिललावै॥
शुभकर्म्मी जो निकसै आगे। उठि हाकिम चरणनसे लागे॥
कहशुकदेव सांचहै करणी। सुनु रणजीत करै सो भरणी॥

दोहा—शुभकरणी पिछली करी, उज्ज्वल पाई देह॥
शोभा जिनके भागकी, चरणदास सुनिलेह॥

तनसों सुखी और धनधारी। सुतनाती सुन्दर संसारी॥
नाना विधिके भोग करत हैं। अरु बहुतन के दुःख हरतहैं॥
ऊंचे महल महा सुखदाई। जहां बिराजत है मनलाई॥
तीनों ऋतुमें वै सुखपावैं। बहुतक लोग टहलमें आवैं॥
पिछिली करणी करम जुलाये। जैसे तैसेही सुखपाये॥
काहू मिली तुरंगसवारी। काहू पालकी झालर दारी॥
काहू गज पाये बहुतेरे। लाखौं पुरुष रहत हैं घेरे॥
श्रीशुकदेव कहैं ये बैना। चरणदास लखु अपने नैना॥

दोहा—लाखौं पगसों लगि रहे, रखैं जीवका आस॥
ईश्वर तिनके जेइहैं, वेहैं चरणहिं दास॥

ऐसी ईश्वर पदवी पाई। पुण्य प्रताप कहा नहिं जाई॥
सुनिकै शुभ करमनको कीजो। खोटे कर्म्म सभी तजिदीजो॥
इनहीं आंखिनसों सब सूझै। बुद्धिमान प्रत्यक्ष जो बूझै॥
कोई चढ़े जाहिं रथमाहीं। सूरज सुखी तासुकी छाहीं॥
कोइ किरोड़ पति लाखनवारा। कोई हजारनको व्यवहारा॥
कोई थोड़े में सुख पावै। ह्वैकर सुखी बहुत हरषावै॥
पिछली जैसी करी कमाई। तैसी तैसीही निधि पाई॥
शुकदेवकहियों आलसहरियो। चरणदासशुभकरणी करियो॥

दोहा–देवदानव अरु अप्सरा, मानुष यक्ष गण प्रेत ॥
कर्म्माँहीं से होतहै, पाप पुण्य का हेत ॥

नाहिंतो हरि द्वैद्रिष्टा नाहीं । एक दृष्टि सब ऊपर छाहीं ॥
जोजैसी करणी करि लेवै । हरि तैसाहीं बदला देवै ॥
अपना किया आपही पावै । परालब्धि वह नाम कहावै ॥
घटै बढ़ै वह नेकु न क्योंहीं । पावै वही जुकरणी ज्योंहीं ॥
नारी पुरुषमिलिकरिव्यवहारा । करणीसों उपजें संसारा ॥
बाहै बोवै खेत किसाना । भांतिभांतिके उपजें दाना ॥
बाग लगावै सींचै माली । जब फल लागैं डाली डाली ॥
पक्षी अरु मानुष सुखपावै । चरण दास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा–मालीकरणी जो तजै, सींचै ना षटमास ॥
जब वह बाग उदासहो, दिन दिन वाको नास ॥
दया धर्म पुण्यदानहीं, बड़ करणी है सांच ॥
तीनलोकचौदह भुवन, माहिं न आवै आंच ॥

तीरथ बरत कछू जो कीजै । अरु काहूको दान जु दीजै ॥
याको भी फल नीको पावै । चरणदास शुकदेव दिखावै ॥
शुभकरणी करि भक्ति उपावै । ताते हरिके निकट रहावै ॥
करणी योग महा बलदाई । ईश्वर ह्वै पावै मुक्ताई ॥
चारमुक्ति करणीसों पावै । मन करणीसों ज्ञान जगावै ॥

दोहा–उज्ज्वल कर्म्म सदाकिये, अरपै हित भगवान ॥
लहै मुक्ति सालोक्यही, जन्ममरणकरि हान ॥
सेवाकरि भगवान की, निकट बिराजे जाय ॥
सामीप मुक्तिपाइ तिन्ह, इन्द्रहुसे अधिकाय ॥

ध्यानकिया श्रीकृष्णका, भये जु वाके रूप ॥
तिन सारूप मुक्तीलही, तनधारिअधिकअनूप॥
पांचौ मुद्रा योगबल, दशवें काढ़ै प्रान ॥
मिलाज्योतिमेंज्योतिही, यहसायुज्यपिछान ॥
सबही करणी है बड़ी, भक्तिसवनशिरमौर ॥
बाहँपकरिहरिहेत करि, राखैं अपनी ठौर ॥
अजामिलसोंभीअधिक, जो कोउ पापी होय ॥
नाम जपे हिय शुद्धसों, पातक जावें खोय ॥
महिमा गुरुके ध्यानकी, कोकरिसके बखान ॥
मेरेमन निश्चय यही, जाय मिलै भगवान ॥
करणी सों सत्ती भवै, करणी सों दातार ॥
करणी सों शूरा भवै, जावै स्वर्ग मँझार ॥
भांति २ के सुख जहां, भोगै भोग अपार ॥
धर्म पन्थ कोई चलै, शूद्रहि के नर नार ॥
चारिसमयनितनेमकरि, सदा रहै निष्पाप ॥
गिना जाय हरिजन विषे, होय नहीं जन ताप ॥
जिन जैसी करणी करी, सोनिष्फलनहिंजाय ॥
जाका बदला होगया, शुकदेवा कहे गाय ॥

ब्राह्मण करणी ब्राह्मण होई। क्षत्री कर्मसों क्षत्री सोई ॥
वैश्य कर्म्म सों वैश्य कहावै । शूद्र कर्मसों शूद्र दर्सावे ॥
नहीं तो सब की देह बराबर । पांचतत्त्व त्रैगुण सों कर कर ॥
कान आंख मुख नासा एकी । शीश हाथ पग कायादेखी ॥
एकबाट है सबही आवै । एकहि भांति सबै बानिधावैं ॥

दोहा-जाति वर्ण अरु आश्रम, करणी सों दर्शाय ॥
चरण दास निश्चय करो, मूरुख बिरले पाय ॥
धोबी छीपी आदि दै, ये छत्तीसों पौन ॥
करणी के सब नाम हैं, जैसी करै सो जौन ॥

कर्म्मोंहीं से जग यह भासै । कर्म्मोंहीं से फिर ह्वैनासै ॥
उत्पत्ति परलय कर्म्म करावै । होनिहु कर्म्म ब्रह्म ह्वै जावै ॥
परलय समय कर्म जियसाथा । बुरे भले जो लागे गाथा ॥
संगहि जाय रहै मायासें । माया जाय लगत चरननमें ॥
बासा करि हरि चरनन माहीं । होय लीन वह मिटै जु नाहीं ॥
पूंजी कर्म्म जो माया पासा । फिर उतपतिकी वाको आसा ॥
परलय काल बदी ते जबहीं । उतपति करै जगतकूंतबहीं ॥
चरण दास तुम ऐसे जानौ । कहैं शुकदेव सांच करिमानौ ॥

दोहा-छः द्रव्य प्रलयमें रहे, इनका नाश न होय ॥
सो मैं वर्णन करतहौं, बुद्धि आंखन सों जोय ॥

काल अकाश जीव अरु माया । पाप पुण्य प्रत्यक्ष बताया ॥
फिर उतपति इनहीं सों होई । जानै पण्डित बिरला कोई ॥
काल न एकौ करै पुराना । प्रलय होय सो निश्चय जाना ॥
फिर परलय को लागा रहै । करै समाप्त आपना गहै ॥
उतपति समय और नहिं होई । परलय हुये जो उतपति सोई ॥
कर्म धरे रहैं ज्यों के त्योंहीं । उलटे पलटे नाहीं क्योंहीं ॥
जैसे के तैसे तन धारे । कर्म लगे रहैं उनके लारे ॥
कहै शुकदेव कर्म्मगति भारी । चरणदास कोइ छुटै खिलारी ॥

शिष्यवचन ।

दोहा-चरणदास यों कहत है, सुनो गुरू शुकदेव ॥
ज्यों करि हो निःकर्महीं, ताको कहिये भेव ॥

गुरुवचन।

कहे शुकदेव संदेह मिटाऊं। ज्योंकी त्यों पूरी समुझाऊं॥
खोटी करणी नरकहिं जावै। पाप क्षीण मृतलोकहि आवै॥
भले कर्म्म जा स्वर्ग मँझारा। पुण्यक्षीणमृतलोकहि डारा॥
ऐसे लोक लोक फिरि आवै। कर्म न छूटे दुख सुख पावै॥
जैसे कर्म छुटे सौं कहूं। तो पै दया करतही रहूं॥
खोटे कर्म्म सो सकल निवारै। शुभ करणी को नीके धारै॥
जाके फलको मन नहिं लावै। ह्वै निष्कर्म्म परमपद पावै॥
फल त्यागै सोइ चरणनदासा। चरण कमल की राखै आसा॥

दोहा–सो पावै निर्वान पद, आवागमन मिटाय॥
जन्म मरण होवैं नहीं, फिरिरकाल न खाय॥

शिष्यवचन।

जो जो कहि गुरुदेव जी, सूझ परी प्रत्यक्ष॥
चरण दास को दीजिये, साधु होनकी लक्ष॥

गुरुवचन।

वही साधुआ जानिये, निरवारै सब कर्म्म॥
तन मन वचन साधे रहै, पालै अपना धर्म्म॥
पहिले साधै वचनको, दूजे साधै देह॥
तीजे मनको साधिये, गुरुसौं राखै नेह॥
तिनहींके उपदेशको, राखै अपनो चित्त॥
ताको मनन सदा करै, भूलै ना नित वृत्त॥

शिष्यवचन।

जो जो कही सो जानिया, एहो श्रीशुकदेव॥
साधन तन मन बचनको, सबही कहिये भेव॥

गुरुवचन ।

शिष्य सो तोसों कहतहौं, नीके सुन दै कान ॥
ज्योंज्यों कर्म बचैं दशौ, ताकीकरपहिंचान ॥

वचनके चार दोष ।

प्रथम बचनके चार सुनाऊं । तेरे चितमें नीके लाऊं ॥
एक यही ज़ो झूंठ न बोलै । सांच कहै तब हिरदय तोलै ॥
झूंठ कहनको पातक भारी । जो जप करै सु देह उजारी ॥
झूंठेका जप लागत नाहीं । सिद्धहोयनहिं निष्फलजाहीं ॥
अरु झूंठेकी नहिं परतीतैं । झूंठेकी खोटी सब रीतैं ॥
दूजे निन्दा नाहीं करिये । परके औगुण चित्त न धरिये ॥
निन्दाका भारी है पाप । यासों भी निष्फल है जाप ॥
तीजे कडुआ बचन न भाषै । सब जीवनसों हितही राषै ॥
खोटा बचन महा दुखदाई । जो साधै सो अति बलदाई ॥
खोटा बचन तपस्या खोवै । नरक माहिं लैजाय समोवै ॥
मीठे बचन बोलि सुख दीजे । उनके मनका शोक हरीजे ॥
कह शुकदेवा चौथा सुनिये । चरणदास लै मनमें गुनिये ॥

दोहा—चौथे मौन गहे रहै, लक्षण अधिक अमोल ॥
कर्म लगै जग बातसों, हरि चरचामें खोल ॥

शरीरके तीन दोष ।

तनसों तीनि कर्म्म जो लागे । सो मैं कहूं तुम्हारे आगे ॥
चोरी जारी अरु हिंसाहै । इन पापनसों भारी भयहै ॥
कर्म छुटै जाकी बिधि गाऊं । भिन्न भिन्न तोको समझाऊं ॥
तनसों चोरी कबहुँ न कीजै । काहूकी नाहिं बस्तु हरीजै ॥

चोरी त्यागै सो सतवादी। तापर रीझै राम अनादी॥
जारीके कर्म ऐसे मानौ। परतिरियाको माता जानौ॥
तीजी हिंसा त्यागहि कीजै। दया राखि जीवन सुख दीजै॥
दया बराबर तप नहिं कोई। आतम पूजा तासों होई॥
कर्म छुटनका भारी गैला। ज्यों साबुन उजला पट मैला॥
शुकदेवा कहै तनके कहे। तीनि करम अब मनके रहे॥

मनके तीन दोष।

दोहा—कहौं जु मनके तीनि अब, झीनी जिनकी बात॥
गुरू दिखाये दीखई, और बिधि नाहिं दिखात॥
खोटी चितवन बैरही, अरु तीजा अभिमान॥
इनसों कर्म लगैं घने, मेटैं सन्त सुजान॥

खोटीचितवनि खोलि दिखाऊं। जासों कहिये सो समुझाऊं॥
कबहूं चितवै पर नारी को। कबहूं चितवै फलबारी को॥
मनहीं मनमें भोगै भोगा। हाथ न आवै उपजै शोगा॥
कबहूं चितवै वाको मारौं। कबहूं चितवै फांसी डारौं॥
कबहूं चितवै द्रव्य चुराऊं। वाको धन अपने घरलाऊं॥
कबहूं चितवै ठगई करौं। माल बिराना छलकरि हरौं॥
भांति भांति चितवनि उपजावै। बुरे मनोरथ कर्म लगावै॥
तातै याका करै उपाऊ। होय जो साधू कर्म छुटाऊ॥
जो चितवै तौ हरि गुरु चरना। ब्रह्मबिचार सदाही करना॥
खोटी चितवनि चितवै नाहीं। सदा रहै थिरताके माहीं॥
कहि शुकदेव सो हिरदै रहै। इत उतको चित नाहीं बहै॥

दोहा—दूजा कर्म जु बैर है, महा पापकी पोट॥
सदा हिया जलता रहै, करै खोटही खोट॥

बैर भावमें औगुण भारी। तन छूटै जा नरक मझारी॥
बैरी याद रहै मन माहीं। हरिसों हेत लगन दे नाहीं॥
ताते बैर भाव नहिं कीजै। याको कर्म्म लगननहिं दीजै॥
अरु तीजा जानौ अभिमाना। गुरू कृपासों ताको जाना॥
हूं हूं हूं हूं करता रहै। नीची होय तो अन्तर दहै॥
कबहूं फूलै मनके माहीं। मो समान कोउ ऊंचा नाहीं॥
मैहीं योंकर योंकर करिया। मोबिनुकारजकछू न सरिया॥
अपने को चतुरा बहु जाने। और सबन को मूरख मानै॥
अभिमानी ऐसा मन लावे। हरिके गुण किरिया बिसरावे॥
गर्व भरा खोटी बृति धारे। अपने मनमें कबहुँ न हारे॥
शुकदेव कहै वाहि पापीजानो। नरक जायगा निश्चय आनो॥
रणजित सुनु अभिमाननकीजै।कर्म बचाय परम सुख लीजै॥
दोहा—कृत्य घनी बेमुख भवै, गुरु सों विद्या पाय॥
उनको जानै तनकही,आपन को अधिकाय॥

कृतघ्नीका दृष्टान्त।

जैसे इक दृष्टान्त सुनाऊं। कथा पुरानी कहि समुझाऊं॥
महापुरुष इक स्वामी पूरा। ज्ञान ध्यानमें था भरपूरा॥
लक्षण सभी हुते वा माहीं। आठपहर हरिही की छाहीं॥
उनको शिष्य आन इक भयो। वहि उपदेश जु नीको दयो॥
करिकै प्यार निकट जोराखा। प्रीतिकरी अरु सबकछुभाखा॥
फिरि रामतकी आज्ञा लीन्ही। उनहूं करि किरपा तब दीन्ही॥
पहुंचा एक नगर अस्थाना। हांके मनुषन सिध बड़जाना॥
ठहराया अरु पूजा कीन्ही। बहुत नरनने कण्ठी लीन्ही॥
बहुतक प्राणी आवैं जावैं। संध्या भोर शीश बहुनावैं॥
महिमा देखि फूलि मनमाहीं। कहाकिहमसमगुरुभीनाहीं॥

दोहा—गद्दी पर बैठा रहै, तकिया बडा लगाय ॥
बहुत रहैं आज्ञा विषे, शिरपर चँवर ढुराय ॥

गुरु परताप नहीं वह जानै। अपनीही बुधि बडी जु ठानै ॥
मूरुख आगे क्यों नहिं भया। दीनहोय करि द्वारेगया ॥
थोडेहीसे बहु इतराना। गुरुकी कृपा प्यार ना जाना ॥
वार वार शोचै मन सोई। हमरो गुरु क्या ऐसो होई ॥
उनको तो नर कोइ कोइ जानै। हमको सिगरो देश बखानै ॥
दिन दिन बढ़ता दीखै आगे। मेरे भाग बडेही जागे ॥
मेरे मनमें ऐसी आवै। उनका शिष्य अब कौन कहावै
वही अचानक गुरु ह्वां आया। बैठेही शिर शिष्य नवाया ॥

दोहा—जैसे आते वैष्णवहि, करता वह दंडौत ॥
ऐसीही गुरुसे किया, आदर किया नबौत ॥

देखि गुरू मन हांसीठानी। वाको जाना बहु अभिमानी ॥
मुखसोंकहिकरिबहुझिरकारा। कहा कि तू अभिमानी भारा ॥
नीकी बुद्धितेरी गइ खोई। बसी मत्सरता घटमें सोई ॥
मेरा सब उपदेश बिसारा। जग मोहनका मनमें धारा ॥
दश वीसन को शिष्यकरिभूला। गद्दी उपर बैठा बहु फूला ॥
शिष्यने कहा और क्या कीया। वही किया आज्ञा तुम दीया ॥
तुमनेही सतसंग बताई। कीजो दीजो जित मनलाई ॥
शिष्य सखा करि संगत बढ़ाई। मेरी तुम्हरी भई बडाई ॥
देखि ईर्षा तुमको आई। हमरी देखी बहु अधिकाई ॥
फिरिहँसि गुरु कहि तू अज्ञानी। मैं कहि संगति तैं नहिं जानी ॥
मैं कही भक्तनका संग कीजो। सतपुरुषन के चरण गहीजो ॥
दिन दिन ज्ञान होय सरसाई। हरि गुरु सों ह्वै प्रीति सवाई ॥
तेरी तो गति औरै भई। महा अविद्या में मतिठई ॥

दोहा—झरना मूंदे ज्ञानके, छाय रहा अज्ञान ॥
राम रुठाव नहीं किया, भई मुक्ति की हान ॥
कहा बात पूजी कहा, इतने में गयो भूलि ॥
मति ओछी घट थोथरा, तापर बैठा फूलि ॥
सिद्ध प्राप्त विभवमें, देह विसर्जन होय ॥
वह भी जो गुरु को तजै, जाय नरक को सोय ॥
कछू तपस्या ना करी, नाहिं किया कछु योग ॥
नातो लगी समाधिही, ले बैठा तू भोग ॥
रजगुणतमगुणलेलिया, तजा सतोगुण अङ्ग ॥
हरि गुरुको दइ पीठही, करि विषयिन को सङ्ग ॥
भक्ति भावको छोडि कै, करी दम्भकी हाट ॥
मुक्तिपन्थकोतजि दिया, लई नरककी बाट ॥
इन बातन सों क्या सरै, बहुत भया बिख्यात ॥
तुमसे अधिकी मूढ़ नर, जगके घने दिखात ॥
हुकुम बडा माया बडी, नामी वडे जु भूप ॥
नर नारी बहु टहल में, सुन्दर अधिक अनूप ॥
सन्तन की गति और है, हरि गुरुसों सनमुक्ख ॥
मुक्त होय छूटैं सबै, जन्म मरण के दुक्ख ॥
जगत बडाई में फँसे, परी अविद्या छाहिं ॥
नरककुगति यमदण्डही, फिर चौरासी माहिं ॥
हरि औ गुरुको शिरपर धरिये । सत पुरुषनकीसङ्गति करिये ॥
रहिये साधुनके सँग माहीं । ध्यान भजन जहँ छूटै नाहीं ॥
है परिपक्व जहां मन रहो । गुरु मत दया दीनता गहो ॥
सहज सहज उपदेश लगावो । भूलेको हरि बाट बतावो ॥
तारन तरन वहुत जन भये । क्षमा दीनता धारे गये ॥

पै उनको अभिमान न आया। नेक न पडी अविद्या छाया ॥
आपा मेटी गुरूही राखा। जब बोले तब गुरुही भाखा ॥
तू अभिमानी जन्म गँवाया। पाप बोझ शिरघना उठाया ॥
दोहा–वोही नभकी ओरसों, बाणी भई जुआय ॥
किये गुरूसों मानतें, चौरासी को जाय ॥
ह्वां सो गुरु रमते भये, शिष्यहि दे फटकार ॥
कहा कि तेरे तन विषे, हूजो बडो विकार ॥
ता पाछे कछु दिननमें, देही भयो बिकार ॥
निकट न आवें तासुके, ह्वांके सब नर नार ॥
कष्ट भयो अर्द्धंगको, रहो न काहू योग ॥
आठ पहर वाको भयो, निराशोगही शोग ॥
तन तजिकै नरकै गयो, फिरि चौरासी माहिं ॥
जो गुरु सों मान करै, ताकी गतिहोय नाहिं॥
कहै गुरू शुकदेवजी, चरणदास परबीन ॥
मनसोंतजिअभिमानको, गुरुसों रहिये दीन ॥
मान न काहूसों करै, सबही सों आधीन ॥
समरत हरिकी भक्तिमें, जगत काज सों हीन ॥

अगमचेतदृष्टान्त।

दशकर्म्मों को जानिये, महापापकी खानि ॥
तनमन बचन सँभारिये,यही जुआधिकि सयानि॥
कहूं एक दृष्टान्तही, सो परमारथ भेश ॥
सुनि समुझे हिरदे धरै, तौलागै उपदेश ॥
नगर एक सुहावन, बसैं लोग सुखमान ॥
नर नारी सुन्दर सबै, अरु धनवन्तेजान ॥
नयाकरैं जहँ भूपही, बरष दिनाके माहिं ॥
संबत बीते तासुको, फिर वै राखैं नाहिं ॥

पकड डारदैं नदी पारा। जहां भयानकअधिकउजारा॥
पशू आदि ताको भखिजावैं। स्वपनासा देखैं बिनशावैं॥
नयाभूप करि आज्ञा मानैं। ताको अपना ईश्वर जानैं॥
रहैं हुकुम माहीं करजोरैं। वाको बचन न कबहूं मोरैं॥
छत्तरधारी ह्वांहीं डारैं। जो मैं आगे कही उजारैं॥
कई सैकडों ऐसे भये। चेते नाहीं निष्फल गये॥
राजा नया और इक किया। सो वह समझा चेता हिया॥
मनही मनसें कहै बिचारे। बहुत भूप जंगल में डारे॥

दोहा—बरस दिना जब बीति हैं, हमहुँ को देहैं डारि॥
सरिताही के पारही, अधिकां जहां उजारि॥

याकी कछू उपाय बिचारौं। ता सेती यह जन्म न हारौं॥
एक दिना उन यही बिचारा। देखन गयो नदी के पारा॥
जहां भूप जाजा करि मरते। तिनके हाड वहाँही गिरते॥
खडा जु होय देखि मन आई। नीकी ठौर बनाऊँ ह्वांई॥
दृष्टिउठाय ऊंचि जो कीन्ही। कामदारको आज्ञादीन्ही॥
बन काटौ आज्ञा दइ एता। फिरवां पांचकोशमें जेता॥
सुन्दरसा इक कोट बनाओ। तामें सुन्दर बाग रचाओ॥
करौ हवेलीताके माहीं। जैसी भूपनहूँ के नाहीं॥
गिलम बिछौने परदे लावो। अरु तय्यारी सबै करावो॥
होयचुके जब मोहिं सुनावो। बहुत इनाम अधिकतुमपावो॥

दोहा—वैसीही बनने लगी, जैसी आज्ञा दीन॥
बनते बनते बनचुकी, सुन्दर अधिक नवीन॥

फिरि राजा को आनि सुनाया। राजा सुनि बहुतै सुखपाया॥
अच्छी चीज वहां पहुँचाई। ह्वां जो रही न सुरति लगाई॥
कहा कि एक दिना ह्वां जाना। क्षण क्षण होय अवधिकी हाना।

पांचक गाँव कोट के साथा । किये दियेलिखि अपने हाथा ॥
अपना एक हितू मन भाई । भरी कचहरीं लिया बुलाई ॥
करि इनाम ताको वह दिया । वाका देखा सांचा हिया ॥
और कही जो राजा होवै । वाहि तलाक याहि जो खोवै ॥
वोही आठ महीने बीते । करणी करि भये मनके चीते ॥
दोहा—ह्वै निश्चिंत आनँदभये, चिन्ताभय नहिं कोय ॥
अपना कारज करिचुके, ह्यां ह्वां एकहि होय ॥
सुखही में वह वर्ष बिताया । अवधिबीतिफिरिवहदिनआया ॥
सब उमराव जुघरि कर आये । नया भूप करने को लाये ॥
याहि सिंहासन सों दियोडारी । कहा कि तुम्हरी बीती बारी ॥
ऐसे कहिकर गहि लै चाले । पार नदी के जंगल घाले ॥
शुभकरणी को करि वह राजा । अपने महलन जाय बिराजा ॥
इतसे भी उत सुख बहुभारी । ना कोइ बैरी ना जंजारी ॥
अपनी करणीसे सुखपावै । रहे अशोक न चिन्ता आवै ॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा । शुभ करणी करि पाया बासा ॥
दोहा—ऐसे मानुष देहको, जानहु नगर समान ॥
राजा यामें जीवहै, शुभ करणी परमान ॥
नाहिं तो चौरासी जङ्गलहै । भांति भांतिका जितही भयहै ॥
पशू पशूको जित भषिजावै । नित भयमानि नहीं सुखपावै ॥
बहु दुखपावै खोटी करनी । जैसी करनी तैसी भरनी ॥
शुभकरणीको जो नर धावै । बहुतभांति सुख सुरपुरजावै ॥
दोहा—भूप उभारि अपनी किया, अपना पूरण काम ॥
ऐसेही शुभ कर्म्म सों, तुमहूं पावो धाम ॥

दूसरी कथा ॥

अरु इक कथाकहौंअतिनीकी । जा सुनि जाय अविद्या जीकी ॥

इक राजा था बहु परबीना । सो वह पुत्र बिना था दीना ॥
एक समय वहि रोग जो आया । पुत्र विना बहुतै कलपाया ॥
कौनकाज अब ह्यांको करि है । जो मेरी देही यह मरि है ॥
रामत करत सिद्ध इकआया । राजाने सब वाहि सुनाया ॥
सिद्ध कहि बालक गोदघलावो । बेटाकरि तिहि राज बिठावो ॥
राजा कही जो ध्यान लगावो । राज भाग में ताहि बतावो ॥
फिरिउनकहीजुखोलिदिखाऊं । साहूकारको पुत्र बनाऊं ॥
वाके भाग्य लिखी यह राजा । ताको सुतकरि कीजे काजा ॥
फिरि उन वाको गोदजुलीन्हा । ह्वांको राज काज सब दीन्हा ॥
कोइक दिनमें उन तन त्यागा । पुत्र राज्य करने तब लागा ॥
राज्य पितासों नीका कीन्हा । प्रजाआदिको सबसुख दीन्हा ॥

दोहा—राज करत बर्षें भई, सुख ले अरु सुख दीन ॥
वाके नग्गरके विषय, द्रव्य: बिना नहिं हीन ॥

एक दिना ऐसो भयो काजा । सोवत चौंकि उठा वह राजा ॥
भोर भये सबफौज बुलाई । हरिकी आज्ञा सो समुझाई ॥
कहा जहांतक परजा मेरी । ताको लूटो जाय सबेरी ॥
आज्ञाले सब फौज पधारी । प्रजा लूटी नीके सारी ॥
दूजेफिर कही ह्वां तुम जावो । जिनकूं लूटाभवन जलावो ॥
घर परजाके सभी जलाये । नीच ऊंचने बहु दुख पाये ॥
तीजे बचन भूप यो भाखो । कहा फौजसों खोज न राखो ॥
बडों बडों पर शस्तर मेलो । लडके बाले कोल्हू पेलो ॥
यह सुनि सकलप्रजा घिरआई । राजापास पुकार सुनाई ॥
वहुतक राजा भये अनूठा । अपनी प्रजा कोई नहिं लूटा ॥
अच्छी चीजे सबको सुखदिया, अबभे तुम दुखदाय ॥
कहा कि एते यह कहि दीजिये, सबही को समुझाय ॥

यह कहि साहूकार ने, जो था याका बाप ॥
कुयश चला संसारमें, बहुत लगाये पाप ॥
साहुकार पण्डित घने, और बडेही लोग ॥
कोल्हूकी सुनि कतलकी, बहुतक माना शोग ॥
आये हैं फरयाद को, सुने बिगडते काज ॥
सकल प्रजाको मारिकै, किसका करिहौ राज ॥
सकलप्रजा तुव शरणहैं, बकसि देउ महराज ॥
अपनी अपनी भूमि में, फेरि बसैं सब साज ॥
राजा कही सो मैं नाहिं जानूं। अपने मुखसे कहा बखानूं ॥
कहा पुरुष सो इक तुम आनो। जिनका कहा सांच तुम मानौ ॥
यह सुनि ज्वाब सवालहि वारे। आकरि बैठे सबन मँझारे ॥
सो इक नर बहुतै इतबारी। जिनकी साखि हुती बहुभारी॥
तिनको लै राजा के पासा। खडे किये सब चरणन दासा॥
राजा उठि उनहींके माहीं। मिलि बैठो पुनि वाही ठाहीं ॥
राजा कही जु हरिकी वोरैं। ध्यान लगायो मनको मोरैं ॥
घडी चारि जब ध्यान लगाया। नभसे शब्द यही जो आया ॥
दोहा—ढील भूप तैं क्यों करी, इनको कीजे जेल ॥
बडे कतलही कीजिये, छोटे कोल्हू पैल ॥
तीनहि बार लगाया ध्यानी। बारम्बार यही भइ बानी ॥
भूप कही कहा दोष हमारा। कोपित भयो जो सिरजनहार॥
अब तुम परजासों कहिदेवो। कतल पेलना कोल्हूलेओ ॥
आय नर कहि सबमें खोली। सुनि परजा ऐसे उठि बोली॥
आपसमें सब कहने लागे। हम हैं मूरुख बडे अभागे ॥
हम शुभकर्म कबहु नाहिं कीन्हें। तिथि पर्बहि केहुदान नदीन्हें॥
कथा कीर्त्तन में नाहिं गये। कुटुंब जालमें पागे रहे ॥

हरिकी भक्ति नहीं चित लाई। तातें अब होती मुकताई॥
दोहा–हरिही को बिसराइया, पूत महल के काज॥
नाम रहैगा जगत में, सोभी रहा न आज॥
चले नरक को निश्चय जैहैं। मार यमोंकी तिक्षनखैहैं॥
कांपत है सब देह हमारी। आपसमें भाषैं नर नारी॥
ऐसे ही सब रो रो बोलैं। व्याकुलभये धरणिमें डोलैं॥
एकठावँ ह्वै मता उपाया। सो राजा को जाय सुनाया॥
कर जोरे मुख तृण गहिलीन्हे। नखशिखतनमनदीनजुकीन्हे॥
इक षटमास जु हमैं बचाओ। अपने हरि को अर्ज सुनाओ॥
जामें जप तप धर्म बढावैं। बोलैं सांच झूठ बिसरावैं॥
चोरी जारी हिंसा त्यागैं। रातिदिना हरिही सों लागैं॥
दोहा–नित प्रति उठि शुभकर्म करि, लहैं धाममें बास॥
काम क्रोध बिसराय करि, होय चरणहीं दास॥
अब तुम हमैं बेगि बकसावो। मास खटनकी छूट दिलावो॥
हम रय्यत हैं सभी तुम्हारी। एकबार करो अरज हमारी॥
और कही तुम्हैं बोझ हमारा। राजा सुनि उनओर निहारा॥
कही कि मैं अब कैसे कहूं। आठपहर डरताही रहूं॥
अरज करत कांपै तन सारा। तेजवंत है वह दरबारा॥
पै तुम देखि दया उपजाई। मेरे भी मन ऐसी आई॥
बैठि अकेला ध्यान धरूंही। तुम्हरे कारण अरज करूंहा॥
दिनयों बीता निशि जब आई। भूपध्यानकरि अरज सुनाई॥
दोहा–अरज करी उन दीन ह्वै, बार बार यह भाखि॥
या परजाको मासषट, क्षमा दृष्टि करि राखि॥
जो जो इनके मन विषे, सो सो करैं अपाय॥
छटे मासके ऊपरै, एक श्वास नहिं जाय॥

देखि भूपकी दीनता, पिघिले दीनदयाल ॥
नभ से बाणी यह भई, वही समय ततकाल ॥
यह परजा तुव कारणै, बकसी है षट मास ॥
ऊपर जा दिन एक जब, कीजो इनका नास ॥
अज्ञा भई भूप की जबहीं। सोयो पलँग निडर ह्वै तबहीं ॥
भोर भये बाहर को आया। सकलप्रजाकोनिकटबुलाया ॥
कहा कि षटही मास बचाया। अपने मनका करिल्यो भाया॥
यह सुनि परजा सब हरपाई। अपने अपने घरको आई ॥
केहुं सिरकी केहुं छप्पर डारा। पक्का मंदिर नाहिं बिचारा ॥
चोरी जारी सबै बिसारी। ठाले भये सभी ब्योहारी ॥
अरु साधुनकीसी वृतधारी। बालक मर्द और सबनारी ॥
रहे नहीं वे खोटे मनके। भये तपस्वीसे सब वनके ॥
दोहा—गडा हुता जो द्रव्यही, करीं न ताकी आंट ॥
राखि लिया षटमास को, अरु सब दीन्हा बांट॥
जिनजिनकारहातिनअसकीन्हा। जिनपैनाथा तिनकादीन्हा ॥
आपसमें कहे धन कह कारें हैं। छठे महीना पाछे मरि हैं ॥
यही समुझि उपजा बैरागा। सबहीइन्द्रिनका रस त्यागा॥
फींकेलगे भोग सब जगके। सहजछूटिगये कामजो अघके
सबकी दशा एक जो भई। मौत जानि करि चिन्ता ठई ॥
दिन दिन दुर्बल होतेजावैं। हरिही का जप ध्यान लगावैं ॥
एक एक दिन लागै प्यारा। भजनकरैं जगिन्यारा न्यारा॥
जिद्द अरु बाद न कोऊ ठानैं। इकइक घरी अमोलक जानै॥
कहैं कि खोवैं तौ कितपावैं। कथा कीर्तन सों चित लावैं ॥
कथा कीर्तन जित तित होई। साधु समागम ह्वैगये सोई ॥

घर घर शुभ कर्मन व्यौहारा। धर्म पकड़ि अधरमसबडारा ॥
ज्यों ज्यों दिवस अवधिके आवैं। घने घने शुभ कर्म कमावैं ॥
दोहा-जाको होवै मौत भय, जगमें लगे न चित्त ॥
झुकै रामकी ओरही, बहुत लगावै हित्त ॥
उन मनुषनकी यह गति भई। जगकी चाल डारि सबदई ॥
लाड़ चाव त्योहार न कोई। ब्याह सगाई पुत्र न होई ॥
काम क्रोध नहिं उपजै मोहा। लोभमान नहिं प्रीति न द्रोहा ॥
ऐसे रहि शुभ कर्म्म जु करैं। सदा मौत से डरते रहैं ॥
सहजसहजाफिरिवहदिनआया। डरे नहीं शुभ कर्म कमाया ॥
आपसमें कहैं हमको क्याहै। यमकी मार नरक भय नाहै ॥
राजा जान्यो वह दिन आया। अपना सेवक तुरत पठाया ॥
कही कि फौज सबै बलि आवैं। कतल करन परजा को धावैं ॥
फौजैं सजिकरि ठाढ़ी भई। आज्ञा ओर दृष्टि जो दई ॥
राजाके मन ऐसी आई। उनसब पुरुषन लेहु बुलाई ॥
सांचे सबही के इतबारी। फेरि बुलावो अबकी बारी ॥
यही शोचि फिरि शीशउठाया। आज्ञाकारी निकट बुलाया ॥
दोहा-कामदार सों यों कही, वैसो पुरुष बुलाय ॥
जिनमें मिलिबैठा प्रथम, हरिसों ध्यान लगाय ॥
फिरि उनहीं को लियो बुलाई। मिलि बैठा सबका सुखदाई ॥
कहीकिसबमिलिसुरतिउठावो। राम ओर को ध्यानलगावो ॥
अज्ञाहो सोई तुम मानौ। मेरा दोष कछू मत जानौ ॥
मोको अज्ञाहोय सो करिहौं। अपने हिये नेकनहिं धरिहौं ॥
राजा कहिफिर ध्यानलगाया। ऐसा शब्द गगनसों आया ॥
राजा मैं अब बकसि दियाहै। सकल प्रजाको शुद्धकियाहै ॥
जिन करमोंसे कोप भयाथा। तिनके कारण खड्ग लियाथा ॥

सर्व प्रजा सो बातैं डारी। करिसुकर्महरिभक्तिसँभारी ॥
दोहा-ताते आज्ञा यों दई, रचौ कुटुंब घर बार ॥
शुभकर्म्मन को कीजिये, खोटेकर्म्म निवार ॥
राजा कही खोलि दृगदीजे। अज्ञाभई सोइ अब कीजै ॥
खोलि आँख करजोरे भाखे। बकसे गये तुम्हारे राखे ॥
जो तुम कहौ सोई अब करैं। वचन तुम्हारे हिरदय धरैं ॥
राजा कही यही तुम कीजो। रामनामको संगी लीजो ॥
गुरुका ध्यान धरो मनमाहीं। बिपति जासुसों आवत नाहीं॥
अपनी त्रिया त्रियाकै जानो। परतिरियाको माता मानो ॥
परधनको पाहन सम देखो। शुभकर्मनको करो विशेखो ॥
बोलो सांच झूठकूं नाखो। निंदा हिंसा नैक न राखो ॥
हो रहियौ सबके सुखदाई। कड़ुवा बचन न बोलो काही॥
जो व्यौहार करो सो सांचा। लोक परलोक न आवै आंचा॥
दोहा-कहैं श्रीशुकदेवजी, सुनौ चरणही दास ॥
राजाने उपदेश दै, खोई सबकी त्रास ॥
फिरि वै पुरुष बिदा ह्वै आये। हरि राजाके बचन सुनाये ॥
जिन चालनसों बकसे सारे। सो रखियो तुम हिये मँझारे ॥
उज्ज्वल कर्म भूलि मति जैयो। हरिकी भक्ति माहँही रहियो ॥
सुनिकरि आपसमें फैलाई। एक एक ने सुनी सुनाई ॥
सबने मानी निश्चय कीन्ही। प्रकटसुअपनीआंखिन चीन्ही॥
हाथ कँगनको दर्प्पण केहा। जैसी करणी भुगतै जेहा ॥
खुशीभये लागे व्यवहारा। रामभक्तिको लिये समारा ॥
कहि शुकदेव चरणही दासा। सब प्रजा रहे उमग हुलासा ॥
दोहा-शुकदेवकहैं चरनदाससुनि, मैं उपदेशूं तोहिं ॥
जो पहिले हरिको भजे, पाछे दुःख न होहिं ॥

दृष्टान्त तीसरा।

(इन्द्रनाम ब्राह्मणके दश पुत्रोंकी कथा)

कथाकहौं इक और पुरानी। करणीकरै सुससुझै प्रानी॥
इन्द्रनाम इक ब्राह्मण हुता। जाके दश सुत अरु इकसुता॥
सुता ब्याहि दइ घरकी हुई। जाके पीछे माता मुई॥
पिता मुवा दश पुत्र रहेथे। आपसमें सबबैठि कहेथे॥
ऐसी कछू जु करणी कीजै। जगमें ऊंची पदवी लीजै॥
इकनें कही हूजिये भूपा। सुन्दर देही धरौ अनूपा॥
तेजमुलकमें होवै भारी। हुकम जुमानैं नर अरु नारी॥
और एक ऐसे उठिबोला। सावधान ह्वै अन्तर खोला॥

दोहा–राजाही का हुकम तो, थोरेही सें जोय॥
ऐसी करनी कीजिये, भूप चक्कवै होय॥
एकद्वीप नौखण्ड में, जाको पूरा राज॥
एक और उठि बोलिया, यहभी ओछासाज॥
चक्रवर्ति से इन्द्रबड़, देवन हूं को भूप॥
इसर बडी आनन्द बडे, दुखकी लगै न धूप॥

करणी करत इन्द्रही लोगा। होकर राजा कीजै भोगा॥
जहाँ अप्सरा नृत्यकरत हैं। सुन्दर अधिकी रूप धरतहैं॥
और बडा भाई यों भाखा। सुरपतिहूँको नाहीं राखा॥
कहा कि पदवी ब्रह्माकीसी। और न दीखै काहू हासी॥
जाके एक दिवसही माहीं। चौदह इन्द्र ह्वै ह्वै जाहीं॥
सब ब्रह्माण्ड आसरे वाके। विनाशि जायँ मिटिजावैं ताके॥
तीनि लोकका पिता वहीहै। वेद पुराणन माहँ कही है॥
करणी करिकरि ब्रह्मा हूजै। ऐसी पदवी क्यों नहिं लीजै॥

दोहा—सगरे यों उठि बोलिया, सत्य सत्य यह बात ॥
ऐसाही अब कीजिये, ठहराई सब भ्रात ॥

दशहू करन तपस्या लागे। पारब्रह्मकी ओरी पागे ॥
अधिक तपस्या कीन्ही भारी। मास सूखिगा दीखै नारी ॥
हाड त्वचा चिपटी रहगई। लोहू धातु कछू ना ठई ॥
सबही चित्रहिसे रहगये। कष्ट तपस्या ऐसे सये ॥
फूल पात जलहू नहिं लीन्हा। ऐसा तप दशहूने कीन्हा ॥
तनत्यागे दूजेही जन्मा। दशहू भ्रात हुये जो ब्रह्मा ॥
जिनके दश ब्रह्माण्ड बने हैं। एकएक तिनमाहिं ठने हैं ॥
करणी कबहुँ न निष्फल जावै। जो मनधारै सोई पावै ॥

दोहा—करणी सों भये इन्द्रहू, करणी ब्रह्मा होय ॥
करणी सो ईश्वर भये, शुकदेवा कहे सोय ॥
दश हजार के बीसही, वर्ष तपस्या कीन्ह ॥
हरि जाको वदलोदियो, माँगो सो वर दीन्ह ॥
चारौ युगके माहिं जो, करणीही परधान ॥
गुरु शुकदेवा कहत है, चरणदास उर आन॥
उज्ज्वल कर्म्मन के किये, दिनदिन उज्ज्वल होय ॥
मनमें उपजै भक्तिही, प्रेम पदारथ सोय ॥

चरणदास तुम करणीकीजो। याहीमें मन नीके दीजो ॥
ऐसा जन्म वहुरि नहिं पैहो। बीतिजाय पुनि बहु पछितैहो॥
मनुष देह या दुर्लभ जानौ। वाको पा शुभकरणी ठानौ ॥
या देहींमें करी कमाई। जाय स्वर्गमें नौनिधि पाई ॥
भक्तिकरी देहीके माहीं। जा बैकुण्ठ सुआये नाहीं ॥
या देही में ज्ञान भया है। जीव ब्रह्म जो होय गयाहै ॥

मूरुखकरणी को नहिं जानै। कथनी कथिरबहुत बखाने ॥
थोथी कथनी काम न आवै। थोथा फटकै उडि २ जावै ॥
दोहा-कथनीही के बीचमें, लीजो तत्त्व विचार ॥
सार सार गहिलीजियो, दीजो डारि असार ॥
थोथी कथनी वही जु जानौ। बिन करनी जो करै बखानौ ॥
लोक अलोक न शोभा पावै। बकिबकिबकिखाली रहजावै
कथनी के शूरा बहु जानै। करणीमें कायर अरुयाने ॥
शूरा वही जो करणी करै। दया धर्म्मलै सन्मुख अरै ॥
पाँवे धरै सों नाहिं उठावै। करणी करता चला जुजावै ॥
फिरै जबहिं फल लैकर आवै। सो वह शूरा मल्ल कहावै ॥
कायर बीचहि सो फिरि आवै। सो वह करनी को बिसरावै ॥
अपना खोंट न जानै भोंदू। वह तो कथनीही का गोंदू ॥
दोहा-ऐसे जगमें बहुत हैं, वैसे जगमें नाहिं ॥
कोई कोइ हि देखिये, सतगुरु के साधि माहिं ॥
होनहार को बहुत बतावै। पै ताको कछु मर्म न पावै ॥
कहैं कि होनी होय सुहोई। ताको मेटिसक नहिं कोई ॥
याको समझ उपाय न करिया। श्रद्धा तजि कायरह्वै परिया ॥
समझि निखट्टू गेहि भये हे। वेष धारि बिन करणी रहे हे॥
जानत नाहिं जु पिछली करणी। अब कै भई जु होनी भरणी ॥
परालब्ध अरु भाग्य कहावै। पिछिले कर्म्मनसे उपजावै ॥
अबके करै सु आगे पावै। कछू २ फल अभी दिखावै ॥
कै काहू गाली दै देखो। कै काहूको मारि बिशेखो ॥
कै काहूको भोज खवावो। कै काहूको शीश नवावो ॥
कै कोइ चोरी जूआ खेलौ। कै काहूको गुस्सह झेलौ ॥
दोनोंका फल आगे आवै। चरणदास शुकदेव बतावै ॥

प्रकट देखिये यही तमाशा। नीच ऊंच करणी परकाशा॥
दोहा—कोटि यही उपदेश है, यही जु सगरी बात॥
करणी ही बलवन्त है, यों शुकदेव दिखात॥
मनकी करणी ज्ञान ह्वै, परमातम लखिलेय॥
ब्रह्म रूप ह्वैजाय जब, छूटै सबही भेय॥
भवसागर मैं भय घने, ताकी लगै न आंच॥
झूठेको भय बहुत है, भय नहिं ब्यापै सांच॥
करणीही सों पाइये, पारब्रह्म का खोज॥
सतगुरु पै चालि जाइये, मेटैं सबही सोज॥
इच्छा ब्रह्मकरी सोइ करणी। ईश्वररूप धरालै धरणी॥
महतत्व कारि अहँकार जुकीये। तीनरूप उनको करिदीये॥
राजस[1] तामस[2] सात्विक[3] जानो। यही त्रैगुण मनमें आनो॥
राजस सों जगको उपजावै। सात्विक सों पाले सिरजावै॥
तामस सों बिनशावै तोडै। बहुत सृष्टि नहिं भूपर जोडै॥
जोडै़ तौ वह कहां समावै। धरतीका परमाण कहावै॥
योजन पचासक्रोड़ बताई। वेद पुराणन माँहि जो गाई॥
धरती करणीही सों ठाढ़ी। कछुवा शेष भये जो आढ़ी॥
करणीही सों घन बरसावै। बादल मिलती पवन चलावै॥
दोहा—करणी सों कर्तारही, धरा ब्रह्मका नावँ॥
माया भी तौ उन कारि, खेली बहुविधि दावँ॥
कोई निराकार बतलावै। कोई निर्गुण कहि समुझावै॥
कोइकहै दोनोंसे न्यारा। है जु अकर्त्ता अलख अपारा॥
कहैं कि माया कियो पसारा। जेता दीखै यह संसारा॥
तौ कहु माया कितसों आई। अन्त यही हरिने उपजाई॥

१ रजोगुण ब्रह्मा॥ २ तमोगुण शिव॥ ३ सतोगुण विष्णु॥

वही सृष्टिका कारण काजा । वाले जगत प्यारकारि साजा ॥
देह देह में वह दरशावै । चातुरहो चतुराई पावै ॥
जैसे बरतन गढ़ैं कुम्हारा । सब में दीखै सिरजनहारा ॥
चित्र मध्य चित्रासी[1] सूझै । सुरतिलगाय लगाय उरूझै ॥
जबहीं बनी बनाई नीके । कहि शुकदेव जु अपने जीके ॥

दोहा—बिना किये कछु होय ना, आपहि लेहु विचार ॥
करणी देखी दूरलौं, शोचा बारम्बार ॥
चरणदास तोसों कहौं, उठि उद्यम को लाग ॥
आलस सकल गवांयके, विषयनसे मतिपाग ॥
कारज लोक अलोक के, बिन करणी हो नाहिं ॥
करणीही सों होतहैं, करणी सबके माहिं ॥
खोटे कर्म्मन सों दुखी, या दुनियाके बीच ॥
करणीही सों होतहैं, नर ऊंचा अरु नीच ॥
संगति मिलि करने लगै, ऊंचे नीचे कर्म्म ॥
बुधिमैली जो होतहै, खोवे अपना धर्म्म ॥
सतसंगति ते धर्म्म है, कुसंगतीसों जाय ॥
शुकदेवकहैं चरणदाससुन, दोनोंदियेदिखाय ॥
धर्मगया जब सत गया, भ्रष्टभई अतिबुद्धि ॥
तबहीं पाप रु पुण्यकी, कछू रही ना शुद्धि ॥
पाप पुण्यही सत्यहै, ठहारे रहा ब्रह्मण्ड ॥
इन दोनों के मिटतही, होय खण्डहि खण्ड ॥
पाप पुण्य व्यवहारहै, ताहि देखु प्रत्यक्ष ॥
जाही सेती प्रेत यम, देवत गण अरु यक्ष ॥
चौरासी अरु मनुष सब, चंद सूर लौं जान ॥
पाप पुण्य के फेर में, सबही पड़े पिछान ॥

---

१ चित्रकार ॥

पाप किये नरकै पड़ै, पावै दुःख अपार ॥
पुण्य किये सुख बहुतहै, देखो दृष्टि उघार ॥
बिरलै जनको होतहै, पाप पुण्य की सूझ ॥
सोइ छुटै जग जाल सों, बहुतै रहै अरूझ ॥
लाख बातकी बातहै, कोटि बातकी जान ॥
पाप पुण्य सों जानिये, लाभ होयकै हान ॥
करणी बिन थोथा रहै, कछू न पावै भेव ॥
विभव प्राप्त कहुं होय ना, कहैं जु यों शुकदेव ॥
होनी कहैं जु वेभी सारे । करणी करते दृष्टि निहारे ॥
विन करणी व्यवहार न चालै । नहीं तौ बैठे रह जा ठालै ॥
कृत्य करै सो भी यह करणी । बनिया हाट पंडिया वरणी ॥
करणीही सों खावै पीवै । योग करै बहुतै दिन जीवै ॥
मनमांजै सबही परकाशै । करणी विन झूठी सब आशै ॥
करणीही सो सिधि ह्वै जावै । अष्टसिद्धि करणी सों पावै ॥
जीवन्मुक्ती करणी हेती । सुनिले सकल शास्त्रसों तेती ॥
गुरुसों निश्चय यहै जु कीनी । रणजीता मैं तुमको दीनी ॥
दोहा-यह तौ धर्म जहाजहै, मैं तोहिं दई निहार ॥
भवसागर में डारियो, चढ़ै सो उतरै पार ॥
बादवान पुनि खेइयो, दीजो ताहि चलाय ॥
पानी पाप निकासियो, नेकहु ना भरिजाय ॥
चढ़ि उतरै जो पारही, पावै सुखका धाम ॥
आनंदही आँनदलहै, करै तहाँ विश्राम ॥

शिष्यवचन ।

दोहा-धन्य श्रीशुकदेव हौ, वचन तुम्हारे धन्य ॥
सब संदेह मिटाय करि, निश्चल कीन्हो मन्य ॥

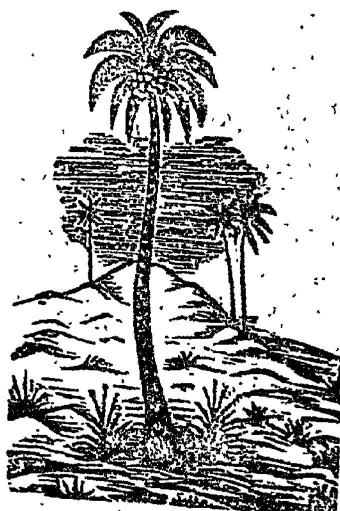
व्यास पुत्र तुम मम गुरुदेवा। करूं मानसी तुम्हरी सेवा॥
मनमें तुम्हरी पूजा साजू। तुम सों पूंछि करौं सब काजू॥
मेरे ध्यान शिंतावी[1] आये। जो थे सो सन्देह मिटाये॥
मैं तौ ध्यान करतही रहूं। तुम्हरी मूरति हिरदय गहूं॥
मेरे जीवन प्राण अधारा। मैं नहिं रहौं चरणसे न्यारा॥
तुम्हरो चरण दास कहाऊं। बारबार तुमपै बलिजाऊं॥
तुमहीं को ईश्वर करि मानूं। पारब्रह्म तुमहीं को जानूं॥
और न कोई दूजी आसा। मो हिरदयमें राखौबासा॥

दोहा–अपने चरणहिंदासको, सब विधि दिया अघाय॥
अस्तुतिकरूं तौक्याकरूं, मो पै कही न जाय॥

इति श्रीस्वामीचरणदासजी कृत गुरुचेलेका
संवाद धर्मजहाज सम्पूर्णम्॥

---

१ शीघ्र। जल्दी।



श्रीशंकराय नमः ।



अथ श्रीअष्टांगयोगप्रारम्भः ।

गुरु शिष्य संवाद ।

शिष्यवचन ।

दोहा—व्यासपुत्र धन धन तुम्हीं, धन धन यह अस्थान ॥
मम आशा पूरी करी, धन धन वह भगवान् ॥
तुम दर्शन दुर्लभमहा, भये जु मोको आज ॥
चरण लगो आपादियो, भये जु पूरण काज ॥
चरणदास अपनो कियो, चरणन लियो लगाय ॥
शिरकरधरिसबकुछदियो, भक्तिदई समुझाय ॥
बालपने दरशन दिये, तबहीं सब कछु दीन ॥
बीज जु बोया भक्तिका, अब भया वृक्ष नबीन ॥
दिन दिन बढ़ता जायगा, तुम किरपाके नीर ॥
जब लग माली ना मिला, तब लग हुता अधीर ॥
अरु समुझाये योगही, बहु भाँती बहु अंग ॥

ऊरधरेता ही कही, जीतन विंद अनंग ॥
अरु आसन सिखलाइया, तिनकी सारी बिद्धि ॥
तुम्हरी कृपासों होहिंगे, सबही साधन सिद्धि ॥
इक अभिलाषा औरहै, कहि न सकूं सकुचाय ॥
हिये उठै मुख आयकरि, फिरि उलटीही जाय ॥

गुरुवचन ।

दोहा—सतगुरु से नहिं सकुचिये, एहो चरणनदास ॥
जो अभिलाषा मन बिषे, खोलि कहौ अबतास ॥

शिष्यवचन ।

सतगुरु तुम आज्ञा दई, कहूं आपनी बात ॥
अष्टांगयोग[1] बुझाइये, जाते हियो सेरात ॥
मोहिं योग बतलाइये, जो है वह अष्टांग ॥
रहनी गहनी विधिसहित, जाके आठों अंग ॥
मत मारग देखे घने, ह्यां सियरे भये प्रान ॥
जो कुछ चाहो तुम करो, मैं हौं निपट अयान ॥

गुरुवचन ।

अष्टांगयोग समुझाइहैं, भिन्न भिन्न सब अंग ॥
पहिले संयम सीखिये, जाते होय न भंग ॥

शिष्यवचन ।

संयम काको कहत हैं, कहौ गुरू शुकदेव ॥
सो सबही समुझाइये, ताको पाऊं भेव ॥

गुरुवचन ।

योगियोंके अवश्यमेव कर्तव्य ।

प्रथम सूक्षम भोजन खावै । क्षुधा मिटै नहिं आलस आवै ॥
थोड़ासा जल पीवन लीजै । सूक्षम बोलै बाद न कीजै ॥

---

१ यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि ये अष्टांगयोग कहलाते हैं ।

बहुत नींदभर सोवै नाहीं । दूजा पुरुष न राखै पाहीं ॥
खट्टा चरफर खार न खावै । बीरज क्षीण होन नहिं पावै ॥
करै न काहू वैरी मिंता । जगवस्तुनकी राखै न चिंता ॥
निश्चलह्वै मनको ठहरावै । इन्द्रिनके रस सब बिसरावै ॥
त्रिया तेल नहिं देह छुवावै । अष्ट सुगन्ध अंग नहिं लावै ॥
मनुषन की राखै नहिं आसा । गुरुका रहै चरनही दासा ॥

दोहा—काम क्रोध मद लोभ अरु, राखै ना अभिमान ॥
रहै दीनताई लिये, लगै न माया बान ॥

छल नहिं करै न छलमें आवै । दम्भ झूँठके निकट न जावै ॥
यंत्र टोना भूत नहिं धावै । झूँठ जानिके सब बिसरावै ॥
धातु रसायन मन नहिं लीजै । झूँठ जानि याहू तजि दीजै ॥
स्वांग तमाशे बाग न जैये । आसन ऊपर बैठा रहिये ॥
दृढ़ ह्वै लगे युक्तिके माहीं । ताते विघ्न होय कछु नाहीं ॥
रूठा रहै जगत लोगन सों । न्यारोरहै सबी भोगन सों ॥
इन्द्र आदि लौं सुख संसारी । नेक न चाहै चित्त मझारी ॥
सिमिटि रहै हिय माहि समावै । ऐसे योग सधे सिधि पावै ॥

दोहा—ऋद्धिसिद्धि अरु कामना, तिनकी रखै न आस ॥
मान बड़ाई चपलता, त्यागै चरणहि दास ॥

गहि संतोष क्षमा हिय धारै । संयम करिकारि रोग निवारै ॥
अहङ्कारको छोटा करिये । कुटिल मनोरथ मननहिंधरिये ॥
बसिये जितहि देश सुस्थाना । निर उपाधि धरती अस्थाना ॥
भली भूमि लखि गुफा बनावै । नीची ऊंची रहन न पावै ॥
जमीं बराबर चौरस होई । होय लदाव कि मधरी सोई ॥
सांकर द्वार कपाट लगावै । कहूं छिद्र रहने नहिं पावै ॥
तामहँ बैठि योग तप कीजै । दूजो पुरुष न भीतर लीजै ॥

कहि शुकदेव चरणहीं दासा । जगसों रहिये सदा उदासा ॥
दोहा-यह सब निश्चयही करै, योग युक्तिके आदि ॥
पहिले ऐसा होय करि, पीछे साधन सादि ॥

योगके आठ अंग ।

आठ अंग कहुं योगके, सुनो चरणहीं दास ॥
मेरे वचनन के विषे, चित दै करो निवास ॥
यमके अंग प्रथम सुनिलीजे । दूजे नियम कहूं चित दीजे ॥
तीजे आसन हितकरि साधौ । प्राणायाम चौथे आराधौ ॥
प्रत्याहार पांचवां जानो । छठौ धारणा को पहिंचानो ॥
सतवें ध्यान मिटै सब बाधा । कहूं आठवाँ अंग समाधा ॥

शिष्यवचन ।

धन्य धन्य तुम श्रीगुरुदेवा । मेरे प्राणनाथ श्रीशुकदेवा ॥
व्यास पुत्र तुम दीनदयाला । मम अनाथको कियो निहाला
आठ अंग मोहिदियो सुनाई । अबकहो भिन्न भिन्न समुझाई॥
एक एकको जुदा बखानो । जासों जाय दास पर जानो ॥

गुरुवचन ॥

दोहा-एक एक का कहतहौं, जुदा जुदा विस्तार ॥
श्रवणन सुनो बिचारिकै, लैलै हियमें धार ॥

अथ यमअंग वर्णन ।

अहिंसा १

प्रथम कहौं यमके दश अंगा । समझे योग न होवै भंगा ॥
प्रथम अहिंसाही सुन लीजै । मनकारि काहू दोष न कीजै ॥
कडुवा वचन कठोर न कहिये । जीवघात तनसों नहिं दहिये ॥
तन मन वचन न कर्म लगावै । यही अहिंसा धर्म कहावै ॥

सत्य २.

दूजे सत्य सत्यही बोलै । हिरदै तौलि बचन मुख खोलै ॥

अस्तेय ३.

तीजे असते त्याग सुनीजै । तन मन सों कछु नाहिं हरी जै॥
तन चोरी के लक्षण नाखै । मनकी चोरी को नहिं राखै ॥

ब्रह्मचर्य ४.

चौथा ब्रह्मचर्य बतलाऊं । भिन्न भिन्न करि ताहि सुनाऊं ॥

अष्ट प्रकारका मैथुन ।

दोहा-ब्रह्मचर्य यासों कहैं, सुनहु चरणही दास ॥
आठ अंग सोनारि की, नेक न राखै आस ॥

यती होय दृढ़ कांछ गहीजै । वीर्य क्षीण नाहिं होने दीजै ॥
मैथुन कहूं अष्ट परकारा । ब्रह्मचर्य रहै इनसे न्यारा ॥
सुमिरण तरियाका नहिंकरिये । श्रवणन सुरतिरूप नहिं धरिये
रस शृङ्गार पढ़ै नहिं गावै । नारिनसों नाहिं हँसै हँसावै ॥
दृष्टि न देखै विष नहिं दौरै । मुख देखै मनहोजा औरै ॥
बात इकन्त करै नहिं कबहीं । मिलन उपाय जु त्यागै सबहीं॥
अथवा स्पर्श निकट न जावै । कामजीति योगी सुखपावै ॥
अष्टप्रकारके मैथुन जानो । इन तजि ब्रह्मचर्य पहिंचानो ॥
कहैं शुकदेव चरणहीदासा । ब्रह्म सत्य में करै निवासा ॥

क्षमा ५.

दोहा-पँचवीं सुखदाई क्षमा, जलन बुझावै सोय ॥
जो दुख आवै घटाबिषै, पातक डारै खोय ॥

कोई दुष्ट कछू कहिजावो । गाली देकर कोइ खिझावो ॥
कै कोइ शिरपर कूडा डारो । कै कोइ दुख देवो अरु मारो ॥
वाकी कछू न मनमें लावै । उलटा उनको शीश नवावै ॥
ऐसी क्षमा हियेमें लावो । बोलौ शीतल अग्नि बुझावो ॥

१ श्रवण स्मरण कीरतन, चितवन बातइकन्त । दृढसंकल्प प्रयत्न तनप्राप्ति अष्ट कहंत १॥

धीरज ६.

छठां अंग धीरज का जानौ। धीरजही हिरदय में आनौ ॥
योगयुक्ति धीरज सों कीजै। सब कारज धीरज सों लीजै ॥
धीरज सों बैठे अरु डोलै। धीरज राखि समुझिकरबोलै ॥
आनि परे दुख ना अकुलावै। धीरज सों दृढ़ता गहिलावै ॥
दोहा–धीरज रहा तौ सब रहा, काहूसे न डराय ॥
सिंह प्रेत अरु कालका, धीरज सों डरजाय ॥

दया ७.

दया सातवीं अब सुनिलीजै। सब जीवन की रक्षा कीजै ॥
लख चौरासी का सुखदाई। सबके हित की कहे बनाई ॥
रहिये तन मन बचन दयाला। सबही सों निर्वैर कृपाला ॥

आर्जव ८.

अठवें कहूं आर्जव खोलै। कोमलहृदयसों कोमलबोलै ॥
सब को कोमल दृष्टि निहारै। कोमलता तन मनमें धारै ॥
कोमल धरती बीज बवावै। बढै बेगि फूलै फललावै ॥
ऐसे कोमल हिया बनावै। योग सिद्धिकरि पदपहुंचावै ॥
यही आर्जव लक्षण जानो। शुकदेवकहैरणजित पहिचानो॥

मिताहार ९.

दोहा–मिताहार जो नवम है, समझ लेहु मनमाहिं ॥
सतगुन भोजन खाइये, ऐसा वैसा नाहिं ॥
खावै अन्न बिचारिकै, खोटाखरा सँभार ॥
तैसाही मन होतहै, जैसा करै अहार ॥
सूक्ष्म चिकना हलका खावै। चौथाभागछोडिकरि पावै ॥
वानप्रस्थ कै हो संन्यासै। भोजन सोलह ग्रास गिरासै ॥
अरु गृहस्थ बत्तीस गिरासा। आवै नींद न बहुत न श्वासा ॥

ब्रह्मचारी भोजन करै इतना । पठन माँहँ वीरजरहैजितना ॥

शौच १०.

दशवां शौच पवित्तर रहिये । कर दातोन हमेश नहइये ॥
जो शरीर में होवै रोगा । रहै न तन जल छूवन योगा॥
तौ तन माटीसूं शुधि कीजे । अब अंतरकी शुद्धि सुन लीजे॥
राग द्वेष हिरदय सों टारै । मन सों खोटे कर्म निवारै ॥

दोहा—दशप्रकारका कहा यह, पहिल योगकी नीव ॥
नेम कहूं अब दूसरा, सोहै साधन सीव ॥

अथ नियम अङ्गवर्णन ।

इन्द्रियवश १.

दूजा अङ्ग नियम का गाऊं । भिन्न भिन्न सब अंग सुनाऊं॥
पहला तप इन्द्री वश कीजे । इनके स्वाद सभी तजिदीजे ॥
खातें पीतें सोवत जागत । योगी इन्द्रिनकूं वश राखत ॥
तनकूं वश कर मनकूं मारै । ऐसी विधि तपका अंगधारै ॥

संतोष २.

दूजा अंग कहूं संतोषा । हानि भये नाहिं मानै शोका ॥
लाभ भये नाहीं हरषावै । ऐसी समुझ हिये में लावै ॥
परारब्ध तन होय सो होई । संकलप विकलप रखै न कोई ॥

आस्तिकता ३.

दोहा—तीजा आस्तिक अंग है, जाका सुनो विचार॥
समझ समझ मनमें धरो, ताको गहो संचार॥

शास्त्र सुनि परतीति जो कीजे । सत्तब्रह्म निश्चय करि लीजे ॥
बुद्धि निश्चय आतम के माहीं । जगत सांच करि मानै नाहीं ॥

दान ४.

चौथा दान अंग विधि होई । पात्र कुपात्र विचारै सोई ॥
एकदान उपदेश जु दीजे । भवसागरसो पार करीजे ॥

दूजा दान अन्न अरु पानी। दीजे कीजे बहु सनमानी॥
और पराये दुख की बूझै। सुखदानी परमारथ सूझै॥

इश्वराराधन ५.

पंचम ईश्वर पूजा करिये। तन मन बुद्धि जहांलै धरिये॥
ह्वै निष्काम तजै सब आसा। सेवा करै होय निज दासा॥
दोहा–पाती फूल जु भाव सो, सह सुगंध करिधूप॥
शुकदेव कहैं यों कीजिये, पूजा अधिक अनूप॥

श्रवण ६.

छठें सिद्धांत श्रवण सुनि बानी। करि विचार गहिये मनमानी॥
सार असार विचार जु कीजे। पानीको तजि पयको पीजे॥
अरु सतगुरु सों निश्चय करिये। परखि सँभारि हिये में धरिये॥
करणी करै तिन्हों से मिलना। वंचक अयोगी के नहिं सुनना॥

लज्जा ७.

सतवां वही जू कहिये लाजा। सो वह सकल सँवारे काजा॥
साध गुरूसैं लाज करीजै। तन मन डोलन नाहीं दीजै॥
करम विपर्यय सब परिहरिये। हिय आखिनमें लज्जा भरिये॥
शुकदेवकहसुनिचरणहिदासा। लज्जा भवन माहिं करिवासा॥
दोहा–कुटुंब मित्र जग लोगहीं, सबसूं कीजे लाज॥
बडी लाज हरिसूं करो, नीके सुधरै काज॥

दृढता ८.

अष्टमहू मति दृढ जो कहिये। ह्वा विशेष साधनकूं चहिये॥
शुभ करमन की इच्छा करनी। हो न सकै तोभी हिय धरनी॥
बहकैना काहू बहकाये। कैसेहू नहिं हलै हलाये॥
जग सुख देखि न मनमें आनै। स्वर्ग आदिसुखतुच्छहिजानै॥
कोइ अस्तुति आदर करिसेवै। कोइ कुभाव करि गाली देवै॥

दानों में निश्चय रहै जोई । शुकदेव कहैं दृढ़मति सोई ॥

जाप ९.

नवमें जाप करै गहिमौना । मन जिह्वासूं कीजे जौना ॥
होयसकै मन पवन गहीजे । गुरुमन्तर जप तामें कीजे ॥

दोहा—हरिगुरकी अस्तुति पढ़े, सोभी कहिये जाप ॥
शुकदेव कहैं रणजीत सुनु, त्रैविधि नाशै ताप ॥
दशवें समझो होमही, कीजे दोय प्रकार ॥
अँगन माहिं साकल्य कूं, वेद कहै ज्यों डार ॥
दूजे पावक ज्ञानकी, तामें इन्द्री होम ॥
वाकूं परगट भूमि है, याकूं हिरदा भौम ॥

यमका अंग सभी कह दीन्हा । नेम कहा सोभी तुम चीन्हा ॥
निरे योगहीके मत जानौ । सबके कारजको पहिचानौ ॥
आपे योग पहलये चहिये । शुभकरमन के मारग गहिये ॥
जो ये होय तौ होवे योग । नाहीं बहे जगत्के भोग ॥
जिज्ञासीकूं पहल सुनीजे । पाछे भेद योगको दीजे ॥
यम अरु नियम दोऊ बतलाये। अच्छी नीकी भाँति सुनाये ॥
अब तीजे आसन समझाऊं । जुदे जुदे कहि सबै सुनाऊं ॥
योग पहिल आसनही साधे । आसन बिना योग बरबादे ॥

अथ आसनवर्णन।

दोहा—चरणदास निश्चय करौ, बिन आसन नहिं योग ॥
जो आसन दृढ़ होय तौ, योग सधै भजि रोग ॥

लख चौरासी आसन जानो । योनिनकी बैठक पहिचानो ॥
तिन में चौरासी चुन लीन्हें । दुरलभभेद सुगम सो कीन्हे ॥
सो तुमकूं पहिले बतलाये । जिनकूं साधोगे चितलाये ॥
तिनमें दोय अधिक परधाने । तिनकूं सब योगेश्वर जानै ॥

आसनसिद्धि पद्म कहलावै । इनकूं करि निश्चल ठहरावै ॥
अरु आसन सब रोग भजावैं । ये दो आसन योग सधावैं ॥
इनकूं साधै जो जन कोई । ध्यान समाधि लगावै सोई ॥
चरणदास शुकदेव कहैं यों । आसन दोनों बरणौं हैं ज्यों ॥

अथ पद्मासनविधि ।

पहिले आसन पद्म बताऊं । ज्योंकी त्यों मूरति दिखलाऊं॥
पहिले बावाँ पावँ उठावै । दहिने जङ्घा ऊपर लावै ॥
दहिना पाँव फेरि यों लाकै । बाँवी साथल ऊपर राखै ॥
बावाँ कर पीछेसों लावै । बाम अँगूठा गहि तन तावै ॥
ऐसे हाथ दाहिना लावै । दहिन अँगूठा पकड़ दृढ़ावै ॥
ग्रीवा लटक चिबुकही आवै । नासा आगे दीठि लगावै ॥
देवदृष्टिहो कौतुक दरशै । कहै शुकदेव अभैपद परशै ॥
दोहा—कै हिरदै राखै चिबुक, कै सम राखै देह ॥
कै घोंटौ दोउ हाथ रखि, कै अँगुठा गहिलेह॥

अथ सिद्धासनविधि ।

दूजा आसन सिद्धजु कीजै । बावाँ पाँव गुदाढिग दीजै ॥
दाहिन पांव लिंगपर आवै । दृष्टि सुभृकुटी पै ठहरावै ॥
अचरज जहाँ अधिक दरशावै । खुले कपाट मोक्ष गति पावै ॥
आसन साधि व्याधि परिहरै । भूँख नींद जोपै बश करै ॥
दोहा—एँडी बावैं पांवकी, सीवन मध्ये राख ॥
लिंग गुदा के मध्य में, मूल बोलिये साख ॥
संयम सूं इन्द्री गहै, राखै सरल शरीर ॥
दृष्टि उठा भ्रुकुटी धरै, मिटै जु दोनों पीर ॥
दहिने लावै लिंगपर, भाग बराबर राखि ॥
बारी बारी कीजिये, शुकदेवा कहै भाखि॥

अथ प्राणायामअंगवर्णन ।

दोहा–चौथे प्राणायामहीं, कहूं सुनौ चित लाय ॥
जा बल जीतै पवनकूं, चढ़ै गगनकूं धाय ॥
षटचक्कर कूं छेदकरि, सुखमनहींकी राह ॥
दलसहस्त्रके कमल में, पहुँचे करै उछाह ॥
हिरदै में अस्थान है, प्राण वायुका जान ॥
वाके रोंके सब रुके, वायुन में परधान ॥
जैसे गंगा एकही, घाट घाट को नावँ ॥
ऐसे प्राणहिं वायुके, नावँ कहे बहु ठावँ ॥
चौरासी अस्थान पर, चौरासीही वाय ॥
तामें दश ये मुख्य हैं, बरणौं सुनिये ताहि ॥
प्राण अपान समानही, और व्यान उद्यान ॥
नाम धनंजय देवदत्त, कूरम किरकल जान ॥
दशवायू जो एकही, तिनमें दीरघ दोय ॥
सो वै प्राण अपान हैं, तिन्हैं पिछाने कोय ॥
अपानजाय प्राणैं मिलै, रहै प्राणके प्रान ॥
शुकदेवकहि वर्णनकरूं, अब इनके अस्थान ॥

प्राणवायु हिरदै के ठाहीं । बसै अपान गुदा के माहीं ॥
वायु समान नाभि अस्थाना । कंठ माहिं बाई उद्याना ॥
व्यान जु व्यापक है तन सारे । नागक वायु सों उठै डकारे ॥
पलक उघाड़ै कूरमबाई । देवदत्तसूं होय जँभाई ॥
किरकल वायु जु भूँख लगावै । मुखै धनंजय देह फुलावै ॥
सबमें प्राण वायु मुख जानौ । सो हिरदै के मध्य पिछानौ ॥
हिरदाही देही के माहीं । जो कुछ है सो छांहीं छांहीं ॥
योगेश्वर छांई फल पावै । छांसूं अनहद नाद जगावै ॥

चक्रवर्णन ।

दोहा–अब चक्कर वर्णन करूं, पाछे प्राणायाम ॥
वरणूं नारी सुषमना, सुधरैं सबही काम ॥
हैं वै सूरति कमल की, छोटे और विशाल ॥
मूरखुं लेकर शीशलौं, एकहि जिनकी नाल ॥
कुं०–लालरंग पहिला कहूं, चक्रधार तिहिं नावँ ॥
चार पैंखरी तासु की, हैं जु गुदाके ठावँ ॥
हैं जु गुदा के ठावँ, देह ताहीपर साजै ॥
चारौं अक्षर तहाँ, देव गन्नेश विराजै ॥
पवन सुरत ह्वां लै धरै, खोलि कहैं शुकदेव ॥
दूजा लिंगस्थानहीं, जाको सुन अब भेव ॥
पीतवरण षट पैंखरी, नामजु स्वाधिष्ठान ॥
षट अक्षर जापै दिये, ब्रह्मा दैवत जान ॥
ब्रह्मा दैवत जान, संग सावित्री दासा ॥
इन्द्रसहित सबदेव, तहां सबही का बासा ॥
मणिपूरक चक्कर कहूं, तीजा नाभिस्थान ॥
नीलवरण दश पैंखरी, दश अक्षर परमान ॥
दोहा–विष्णु जहाँका देवता, महालच्छिमी संग ॥
चरणदास अब कहतहूं, चौथे को परसंग ॥
अनहदक्र हिरदय विषे, द्वादशदल अरु श्वेत ॥
शिवशक्ती जहँ देवता, द्वादश अक्षर भेद ॥
पँचवां चक्कर कंठ मैं, विशुद्ध नाम जिहिकेर ॥
षोडश दल जीवदेवता, षोडश अक्षर हेर ॥
छठयों भौंहन बीच मैं, अज्ञा चक्कर सोय ॥
ज्योति देवता जानिये, दो दल अक्षर दोय ॥

शिष्यवचन ।

दोहा—कमलोंपर अक्षर कहे, समझ न आई मोहिं ॥
कौन कौन अक्षर तहां, सतगुरु कहिये सोहिं ॥

गुरुवचन ।

पहिला कमल अधार सुनाऊं । व श ष स अक्षर वरण बताऊं ॥
दूजा कमल जु स्वाधिष्ठाना । ब भ म य र ल जु बखाना ॥
तृतीये मणिपूरक जो कहिये । ड ढ ण त थ ही लहिये ॥
द ध न प फ जो गाये । ये दश अक्षर वरण बताये ॥
चौथे चक्र अनाहद माहीं । द्वादश अक्षर वरण बताहीं ॥
क ख ग घ ङ जो जाना । च छ ज झ ञ ट ठ जु माना ॥
पँचवां षोडशविशुद्ध जो आछे । आदिअकार अकार सु पाछे ॥
छठा जो अज्ञा चक्कर मानौ । हंस वरण दो अक्षर जानौ ॥

दोहा—भवँर गुफामंडल अखंड, तिरवेणी जहँ न्हान ॥
नित भवी जहँ होत है, करै पापकी हान ॥
उलट पवन बध षटन, ऊपर पहुँचै जाय ॥
शुकदेवकहैंचरणदासजू, सुषमन सहजसमाय ॥
कमल सहसदल सातवां, शीश मध्यही वास ॥
तहां देवता सत्तगुरु, पूरी करैं जु आस ॥
ह्यांतक सुषमनका सिरा, सो सातों की नाल ॥
हैं वे उलटे षट कमल, तलै अपान बयाल ॥
अपानवायुकूं साधिकरि, ऊपर लावै मोड ॥
जब होवैं उलटे कमल, मुखआकाशकोओड ॥
अपानवायु ज्योंज्यों चढै, चक्र चक्र के पास ॥
त्यों त्यों सीधे होय सब, पूरा जान अभ्यास ॥
अपानवायु आवै जबै, चक्र अनाहद माहिं ॥
दश प्रकार के नादही, शनैःशनैःखुलिजाहिं ॥

पहिले नाद खुलै जो ऐसा । चिडी चीकला बोलै जैसा ॥
एकहि बार कहै यों चिन्न । दूजीबार खुलै चिन चिन्न ॥
क्षुद्रघंट ज्यों तीजी जानौ । चौथी नाद शङ्ख पहिंचानौ ॥
पँचवीं नाद बीन ज्यों गाजै । छठवीं उपज ताल ज्यों बाजै ॥
सतवीं नाद मुरलिया ऐसी । अठवीं उठै पखावज जैसी ॥
नवें नफीरी नाद सुनावै । दशवें सिंह गर्ज उपजावै ॥
नौतजि दशवें सूं हित लावै । अनहदसुनि अनहद होजावै ॥
होय जीवसो ब्रह्म अगाधा । जो कोइ सुनै सो अनहदनादा ॥
दोहा—खुलै जो अनहद नाद ज्यों, सो साधन सुनि लेहु ॥
जासों पहुँचै सिद्धि को, या करणी चित देहु ॥
अधारचक्रसूं खैंचकरि, अपान वायु सजलेइ ॥
स्वाधिष्ठान के पासही, तीन लपेटैं देइ ॥
याकी विधि सब तोहिं सुनाऊं । जैसे है तैसे समुझाऊं ॥
पहिले मूल द्वार को शोधै । बंध लगाय अपान निरोधै ॥
पहिले चक्कर में ठहरावै । खैंचि दूसरे के ढिग लावै ॥
वाके आसौ पास फिरावै । दहिने तीनि लपेट लगावै ॥
फिरि मणिपूरक में पहुँचावै । फेरि अनाहद में लैजावै ॥
अनहद खुलै सुनै सुख पावै । फिरि ह्वां प्राण अपान मिलावै ॥
हिरदय कंठ मध्य ठहरावै । संयम सों ताको परचावै ॥
बंध दूसरो तहां लगावै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

अष्टपदी ।

पहिले अनहदनाद खुलैहिय ऊपरे । कंठ सु नीचे रोंकि ध्यान ह्वांई धरे ॥ जहां अपरबल होय जु अनहद शब्दही । फिरियों जानो जाय कंठके मध्यही ॥ तहां किये अभ्यास ध्यान राखैघना । होवै अधिकीनाद सुनै साधूजना ॥ केतक

थोसन माहिं ब्रह्म रन्धरकनै । जाय खुलैं जहँ नाद सुरतिदै ह्वां सुनै ॥ शनै शनै यों होय जानकोइ साधही । हिरदयते अरु ब्रह्मलोकलों एकै नादही ॥ मीठी और सवाद बहुतही पाइये । सतगुरु के परताप जहां मनलाइये ॥ ब्रह्मलोककी बात सुनै होवै जु ह्वां । सबही सूझैं वस्तु जो कछु होवैं तहां ॥

दोहा—अनहदके सम और ना, फल वरणे नहिं जाहिं ॥
पटतर कछू न देसकूं, सब कछु है वा माहिं ॥
पांच थकै आनँद बढ़ै, अरु मनुआ वश होय ॥
शुकदेवकहिचरणदाससुनि, आप अपनजा खोय ॥
नाड़िनमें सुषुम्ना बड़ी, सो अनहद की मात ॥
कुम्भक में केवल बड़ा, सो वाही का तात ॥
मुद्रो बड़ी जु खेचरी, वाकी बहिनी जान ॥
अनहद सा बाजा नहीं, और न या सम ध्यान ॥
सेवकसे स्वामी भवै, सुनै जु अनहद नाद ॥
जीव ब्रह्म है जात है, पावै अपनी आद ॥
चरणदास अब कहत हूं, वही जु प्राणायाम ॥
शुकदेव कहै ताके किये, पावै मन विश्राम ॥

बहत्तरहजारआठसौचौंसठनारी॥ सबकी जड़है नाभिमें झारी॥ तिनमहँ दश नाड़ी शिरमोरी । पँच बायें पँच दहनी ओरी ॥ जिनमें तीनि अधिक परधान । इड़ा पिंगला सुषुम्ना जान ॥ उनमें सुषुम्ना अधिक अनूप । सो वह कहिये अग्निस्वरूप ॥ दश नाड़ी अस्थान बताऊं । ठौरठौर तेहि कहि समझाऊं॥

दोहा—नाडि शङ्खिनी गुदामें, किरकल लिङ्गस्थान ॥
पूषा सखन दाहिने, जसनी बायें कान ॥

गंधारी दृग वामही, हस्तिनि दहिने नैन ॥
नारि लंबका जीभमें, सब सवाद सुखदैन ॥
नासा दहिने अंग है, पिंगल सूरज बास ॥
इड़ा सुबायें और है, जहँ ससियर परकास ॥
दोऊके मध्य सुषमना, अद्भुत वाको भेव ॥
ब्रह्म नाड़िहू कहत हैं, यों कह सो शुकदेव ॥
इडा ब्रह्म जमना जहां, सुषमन विष्णु निवास ॥
और सरस्वति जानिये, येहो चरणहिं दास ॥
शिव पिङ्गल गंगासहित, सो वह दहिने अंग ॥
तिरवेणी याते भई, मिली जु तीनौ संग ॥
कबहुँ इड़ा सर चलतहै, कबहूं पिङ्गल माहिं ॥
मध्य सुषुम्ना बहतहै, गुरु बिन जानै नाहिं ॥
सो वह अग्निस्वरूप है, बड़ी योग सरदार ॥
याहीते कारज सरै, ऐसी सुषुमन नार ॥

इनसों प्राणायाम करीजै। पूरक कुंभक रेचकहीजै ॥
इडा पिंगला मारग थाकै। उलटि सुषुम्ना चालनलागै ॥
बायें खैंचना पूरक जानौ। ठहरावनको कुंभक मानौ ॥
फेरि उतारै रेचक वोई। प्राणायाम कहावै सोई ॥

दोहा—इड़ा पवन पूरक करै, कुम्भक राखै रोक ॥
रेचक पिंगल सों करै, मिटैं पापके थोक ॥

पिंगल रोकै पवन न जावै। इडा और सो वायु चलावै ॥
कुम्भककरिहियाचिबुकलगावै। जितकातित मनको ठहरावै ॥
सोलह मात्रा पूरक लीजै। चौसठि कुम्भकमें जप कीजै ॥
रेचक फिरि बत्तीस उतारै। धीरेधीरे ताहि निवारै ॥
पहिल पहिलही कीजे आधे। तीनि महीने ऐसे साधे ॥

यासे आगे फेरि बढ़ावै । दोय आठ अरु चारी चढावै ॥
बढत बढत ऐसेही बढै । योंहीं चौसठि ताहीं चढै ॥
इडा वायुसों पूरक कीजै । पिंगला सों रेचक तजि दीजै ॥
फिरि पिंगलसों पूरक धारै । बहुरि इडाहीसों निरवारै ॥
ऐसे बारीबारी करिये । तीजे प्राण वायु अब हरिये ॥
होयसकै कुम्भक सरकावै । चौसठिमें भी परै बढावै ॥

शिष्यवचन ।

दोहा—चरणदास कहै करजोरिके, सुनौ गुरू शुकदेव ॥
कौन समै याको करै, राति दिना कहिदेव ॥
मात्रा कासों कहत हैं, जो बतलायो जाप ॥
केतौ करै अहारही, जाको कहिये नाप ॥

गुरुवचन ।

दोहा—ॐबिन्दीके सहितही, ताही मात्रा जान ॥
बीजमन्त्र तासों कहत, प्रणवकूं पहिंचान ॥
कोमल भोजन कीजिये, आधी रखिये भूख ॥
पवन बसै सुखसों जहां, तन नहिं पावै दूख ॥
साठिघरी दिन रातिकी, आठ तासु के याम ॥
लीजै चौथा भागही, कीजै प्राणायाम ॥
चारभाग ताके करै, चार समै ठहराय ॥
चार चार घटिका करै, दृढव्रत चित्त लगाय ॥

और दूसरी भाँति सुनीजै । होय न सकै तो याको कीजै ॥
बारहलौं ॐपवन चढावै । कुम्भक माहिं बीस ठहरावै ॥
बारह पिंगल पवन उतारै । राति दिनामें चारहि बारै ॥
फेरि बढावै कुम्भक दुगुनी । केते द्यौसनमें फिर तिगुनी ॥
फिर पिङ्गलसों पूरक लीजै । इडा वायु रेचकही कीजै ॥

वेरिया एक इडा सो खैंचे । पिंगला दूजी वारजू ऐंचे ॥
कबहुँ सासूँ कबहूँ वासू । रेचक करै सुपूरक जासू ॥
कुम्भक तिगुनी सो अधिकावै । होयसकै जितनी सरकावै ॥

दोहा-भाँति दूसरी और सुनू, साधन अधिक अनूप ॥
गुरु बिन भेद न पाइये, महा गूपसूँ गूप ॥

अष्टपदी।

प्राणवायुकी युक्ति कहौं जेहि बात है । द्वादश अंगुल नासिका आगे जात है॥ संयमहीसों सहज जु उलट घटाइये । शनैशनैही सावज्ञ ताहि समाइये ॥ अपान वायुको खैंचि प्राण घर लाइये । फिरि बाहरसों रोंकि जु तिन्हैं मिलाइये॥ तीनि कर्म पूरकके कुम्भकके कहे । रेचकही के कर्म दोय निश्चयभये ॥ दो रेचकके कर्म पूरकके तीनहीं । ये सबही रहिजाय होय जब क्षीनहीं ॥ पूरक रेचक छुटै केवल कुम्भक यही । ठौर समैका बंधनराखै नाशही ॥ या किरियाको अन्तजानो तुम ह्वां तहीं ।प्राणवायुको रोंकै कायाके महीं ॥

दोहा-साठहजार इकीसलख, सबके श्वास परमान ॥
यह तौ रोंकै देहमें, जबलग एकहि प्रान ॥
याकेहू ये सौ दिना, साधन ह्वै जु सिद्धि ॥
केवल कुम्भक जानिये, पूरी ह्वै जु विद्धि ॥

अष्टपदी ।

इतनी होवै शक्ति रुकन जब श्वासकी । रहै नहीं परमाण जु गिनती मासकी ॥ द्वादशकै सौ वरष सहसकै लाखही । चाहै जब लग रखै सांच यह साखही ॥ गुप्त महा यह जान कठिन है साधना । कोटिनमें कोइ एक करै आराधना ॥ देखा देखी बहुत मनुष याकूं लगैं । कोई चढै परमान घने

मगमें थकैं ॥ चरणदास यह समुझि कहैं शुकदेवही । शनैशनै सों करै पाय या भेवही ॥

दोहा—मूल बंध अरु खेचरी, मुद्राही को जान ॥
दोनोंके साधे बिना, अपान न होवे प्राण ॥

खेचरि मुद्राकहूं बखाने । जाको कोटिनमें कोइ जाने ॥
सकल शिरोमणि योग मँझारी। ज्यों मन खोवै छत्तर धारी ॥
शीश फूल ज्यों गहनो माहीं । या बिन ताड़ी लागै नाहीं ॥
साधन कर कर जीभ बढ़ावे । सो ब्रह्मरंधरताईं लावे ॥
उरेताल वा ठौर कहावे । रसना सूं ह्वां बंध लगावे ॥
जासूं पवन न सरकन पावे । श्रवण नैनजू बाट रुकावे ॥
प्राणवायु बाहर नहिं आवे । मुख नासाहोइ निकसि न जावे॥
शुकदेव कह चरणदास बताऊं ।आगे मूलबंध समुझाऊं ॥

दोहा—मूल बन्ध जानो यही , एँडी गुदा लगाव ॥
थक दहनी बावीं कभी, सिद्धासन ठहराव ॥

मूलबन्ध जा कारण दीजे । सो मैं कहूं सबै सुनि लीजे ॥
आधार चक्रसूं पवन उठावे । स्वाधिष्ठानहिं के ढिग लावे ॥
दहिनी ओरकूं ताहि फिरावे । ऐसैं तीन लपेट लगावै ॥
सीधा हो ऊपर कूं धावे । मणिपूरक चक्कर में आवे ॥
शनई शनई ताहि चढ़ावे । चक्कर चक्कर में पहुँचावे ॥
भवचक्कर के ऊपर ताईं । ब्रह्मरंध्र के लावे ठाईं ॥
ऐसे षट चक्कर कूं सोधै । प्राण वायु को यों परमोधै ॥
अपान वायु जो ह्यांतक आवे । प्राण वायु ह्वे सहज समावे ॥
शुकदेव कह सुन चरणहिं दासा। सहज शून्यमें करै निवासा ॥

अथ अष्ट प्रकारके कम्भकवणन ।

शिष्यवचन ।

दोहा–प्राणायाम कि विधि सबै, गुरु तुम दई सुनाय ॥
सो लेकरि हिरदै धरी, ताहि न देउँ भुलाय ॥
चरणदासके शीश पर, तुमहीं गुरु शुकदेव ॥
कुम्भक अष्ट प्रकारके, तिनको कहिये भेव ॥
लक्षण नाम स्वभाव गुण, जुदे जुदे समुझाय ॥
चरणदासके मन विषे, सुनबेको अतिचाय ॥

गुरुवचन ।

दोहा–अब आठौं कुम्भककहूं, नाम भेद गुण रूप ॥
शुकदेवकहैं परसिद्ध हैं, योगहिमाहिं अनूप ॥
प्रथमैं कुम्भकही कहूं, नाव जु सूरज भेद ॥
दूजे ऊजाई सुनो, साधे छूटैं खेद ॥
शीतकार अरु शीतली, पँचवीं भस्त्रिक जान ॥
छठींजु भ्रमरी नामहै, नीके समझि पिछान ॥
नाम मूर्च्छा सातवीं, अठवीं केवल होय ॥
रणजीता सबसे बडी, आयु बढ़ावैं सोय ॥

पवन पूर पूरकही कीजे । पाछे बन्ध जलन्धर दीजे ॥
कुंभक रेचकके मधि जानौ । ह्वाँई बन्ध उड्यान पिछानौ ॥
पवन जोरहीसूं गहि लीजै । अर्ध ऊर्ध्व संकोच न कीजै ॥
मध्यम कीजै पश्चिम तानै । ब्रह्म नारिके माहिं समानै ॥
नाडी पवन खैंचिये ऐसे । भरिये सब संधान जु जैसे ॥
अपानवायु कूं ऊपर लावै । प्राणवायु नीचे लै जावै ॥
जोपै यह साधन बनि आवै । योगी बूढ़ा होन न पावै ॥
तरुण अवस्था दीखै ऐसी । नितही रहै जानिये जैसी ॥

अथ सूर्यभेदन ।

कुं०-कुम्भक सूरज भेदही, पहिले देहुँ सुनाय ॥
सुख आसनकै कीजिये, अथवा बज्र लगाय ॥
अथवा बज्र लगाय, पूरक दहिनेस्वर कीजै ॥
नख शिख सेती रोंकि, वायुकूं बन्ध करीजै ॥
बायें सेती रेचियें, हौरै हौरै जान ॥
कपाल सोधनी जानिये, चरणदास पहिंचान ॥
दोहा-वायु किरम पीड़ा हरै, कीजै वारम्वार ॥
कुम्भक सूरज भेदनी, शुकदेव कह हियधार ॥

अथ ऊजाई ।

अब ऊजाई कुम्भक सुनिये । समझ सीख मनमाहीं गुनिये ॥
दोउ सुर समकर पवन चढ़ावै । पेट कण्ठ लौं ताहिं भरावै ॥
ताको रोंकै दृढ़ करि राखै । सहज इड़ासों रेचक नाखै ॥
ऐसे जो कोइ साधन करै । रोग सलेषम के सब हरै ॥
हिरदय कण्ठ माहिं जो होई । कफका रोग रहै नाहिं कोई ॥
रोग जलन्धरही का भागै । भजै वायु दुख पावक जागै ॥
बैठत चलत पवनको भरै । यही उजाई कुम्भक करै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । तीजी शीतकार समुझावै ॥

अथ शीतकार ।

दोहा-ओड़ जँभाई नासिका, लीजै खिंचै जु पौन ॥
ताहि कछू ठहरायकै, छोड़े मुखसों जौन ॥
धीरे धीरे रेचिये, सीसी शब्द उचार ॥
सुन्दर होवै तेजवत, अधिक रूपको धार ॥
भूख प्यास व्यापै नहीं, आलस नींद न होय ॥
तनचेतनही होतहै, रहै उपाधि न कोय ॥

यहि विधि साधतहीरहैं, होय योगिन में भूप ॥
शुकदेवकहै चरनदास सुनि,कुम्भक यही अनूप॥

अथ शीतली ।

कहूं शीतली कुम्भक आगे । जो कोइ करै भाग तिहिं जागे॥
तालु मूल जिह्वा बल सेती । प्राणवायु पीवै कर हेती ॥
कुंभकराखै सबतन माहीं । ढीला गात रमावै ह्वाहीं ॥
नासा सेती रेचक कीजै । एकमाससिधि हो सुखलीजै ॥
पीवै पवन जीभको मोड़ । सहजै छोड़ै नासा ओड़ ॥
दोनों रंधरसे तजि दीजै । यों अभ्यास पूर करि लीजै ॥
तापतिली गोला जु रहोई । वाके तनमें रहै न कोई ॥
देह पुरानी नौतन होय । तीनि वरष साधै जो कोय ॥
जैसे सांप कांचुली ओहिं । श्वेत बाल तजि काले होहिं ॥
काहु भाँतिका दुख नहिं व्यापै । भूख प्यास पित भाजै आपै ॥

अथ भस्त्रिका ।

दोहा—अब कहुँ कुम्भक भस्त्रिका, पितकफवायु नशाय ॥
अगिनि बढ़ै अभ्याससों, तीनि गाँठिखुलिजाय॥

आसनपद्म सु याविधि करै । वामजंघ दहिनो पग धरै ॥
बावों पग दहनीपर लावै । जाँघनसों दोउ हाथमिलावै ॥
ग्रीवा पेट बराबर राखै । आगे सुनु शुकदेवा भाखै ॥
मुख मूँदै रेचै नासासूं । पूरक चपल करै श्वासासूं ॥
रेचक पूरक ऐसे कीजै । बारम्बार तजै अरु लीजै ॥
जैसे खाल लोहारा भरै । रेचक पूरक आतुर करै ॥
करत करत जबहीं थकिजावै । नेक ठहारि दूजी विधि लावै ॥
फिरि पूरक सूरजसों करै । पवन उदरके माहीं भरै ॥
तर्जनि अँगुली सों दृढ़ रोकै । नासामध्य धारिकरि जोखै ॥

दोहा–कुंभक पिछली भाँतिकरि, रेच इड़ासों बाय ॥
कफ पित वायु नशायकै, लेवै अग्नि बढ़ाय ॥
कुण्डलिनी देवै जगाय, यह कुम्भक सुखदाय॥
करै जुहित व्रत धारिकै,चरणदास चितलाय ॥
कुण्डालिनी सरकायकै, वेधै तीनों गाँठ ॥
ऐसी पँचवीं भस्त्रिका, रहै न कोई आँठ ॥
ब्रह्मनाड़िकाके छिद्रमाहीं । रोकिरही मुखदेराहि ह्वाहीं ॥
लाय लपेटै नाभी ठाहीं । दृढ़ह्वै बैठी सरकै नाहीं ॥
सवा विलस्ताकि जाकी देही । तामें आस्थित जीव सनेही ॥
शक्ति नागिनी यही जु कहिये । याका भेद गुरूसों लहिये ॥
महा अपरबल जागै नाहीं । ताते नर सब मरि मरि जाहीं ॥
कोइ इक योगी ताहि डुलावै । सुषमन वाट गगन लैजावै ॥
ब्रह्मरंध्र में जाय समावै । लगै समाधि बहुत सुखपावै ॥
जो कछु होय सो कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥
दोहा–शिव शक्ती मे लाभ वै, रहै न दूजो भाव ॥
कुण्डलिनी परबोधका, जो कोइ करै उपाव ॥

शिष्यवचन ।

दोहा–व्यास पुत्र शुकदेवजी, किरपाकरीः दयाल ॥
चरणदास आधीनही, समझो भयो निहाल॥
एकबार फिरि खोलिकै, कुण्डलिनी समुझाव॥
याके सबही भेद को, सुनबेको अतिचाव ॥

गुरुवचन ।

दोहा–फिरभी तोसों कहतहौं, कुण्डलिनी विस्तार॥
ताके सगरे भेदही, सुनिकै हियमें धार ॥
नाभिस्थान नागिन रहै, कुण्डल शशीअकार॥

प्राण पियारा वही है, आगे सुनो विचार ॥
कुंभक कर्म्म कोई करे, देवे शक्ति जगाय ॥
जैसे लागी लष्टिका, नागन शीश उठाय ॥

सीख गुरूसों कुंभक साधै। नीकी विधि ताको अवराधै ॥
पवन ठवक लग ताहि जगावै। तब ऊरध को शीश उठावै ॥
नाभि ठौर ताका है वासा। पद्मराग मणि ज्यों परकासा ॥
आठ लपेटे बाई जानौ। ताते शक्तिकुण्डली मानौ ॥
नाड़ी सहस लगी हैं वाको। औपर छुटी जानियै ताको ॥
जिनमें तीर नारि अधिकाई। इड़ा पिंगला सुषमन गाई ॥
तिनकेमाहिं शिरोमणिसुषमन। नालकमल जानतयोगीजन ॥
जायपहुँची ब्रह्मरंधर ताहीं। ऊरध कमल सातवें माहीं ॥
आवन जानि पवन की बाटा। सकत चढ़न ऊरधका घाटा ॥
कह शुकदेव चरणहीं दासा। आगे कहूं जु हो परकाशा ॥

दोहा—नागिन सूक्षम जानिये, बाल सहस वा भाग ॥
शुकदेव कहैं अकारही, रक्त वरण ज्यों नाग ॥
कुंभक हो अत्यन्त जब, तब ऊरधको जाय ॥
ब्रह्मरंध्र में आयकरि, घडी दोय ठहराय ॥
ईब्रत का करि पानहीं, पूरण हो अभ्यास ॥
उडते देखै सिद्ध तब, वाके माहिं अकास ॥

पै देखतहै नैन बिनाहीं। चहै करै लीला उन माहीं ॥
खेचर मिलि खेचर ह्वै जावै। यह भी शक्ति उडनकी पावै ॥
अधिकी ठहरै लगै समाधी। यह तौ कहिये खेल अगाधी ॥
शिव शक्ती जहँ मेला होई। होय लीन मन उनमन सोई ॥
योग युक्ति करि याको पावै। परासक्त अपने वश लावै ॥
चाहै अर्द्ध ठौरलै आवै। जब चाहै ऊरध लैजावै ॥

कबहूँ हिरदयके माधि आनै। याही को आपनपौ जानै॥
इच्छा करै सिद्धि की जैसी। होय प्राप्तसो बेगिहि तैसी॥
चहै अस्थूल सूक्ष्म तन धारूं। वैसाही होय जाय सवारूं॥
कह शुकदेव सुन चरणहिंदासै। जो कुंडलिनी हृदयप्रकासै॥

दोहा—कुण्डलिनी परकाशही, भौंरा एक अनूप॥
सोउ प्रकाशत है तहाँ, सुवरणकोसो रूप॥
हिरदयमें उजियारही, होत चपल यहि भाँति॥
जैसे धूमर मेघमें, बिजलीही दमकाति॥

शुकदेव कहे चरणदास बताऊं। और अनूठी सिद्धि सुनाऊं॥
चाहै पर देही में वरूं। अपनी कायाको परिहरूं॥
रेचक प्राणायाम प्रतापै। कुण्डलिनी जो अपनी आपै॥
रेचक किये वाहरे आवै। परकायामें जाय समावै॥
आस्थित होय जाय यों जानो। सदा विराजत ऐसे मानो॥
ऐसे पहिली देह गिरावै। ज्यों मणिको डोरा तजिजावै॥
जब चाहै अपने घट माहीं। परासक्तही आवै ह्वाहीं॥
काया पलट कहत हैं याको। कोइक योगी जानत ताको॥

दोहा—चाहै तनको छोड़ करि, देह कलप धरि और॥
मनमाने जहँ गमनकरि, फिरि आवै अपठौर॥

अथ भ्रामरीकुंभक।

दोहा—छठी जु कुम्भक भ्रामरी, सुनिये चरणहिदास॥
शुकदेवा हौं कहतहूं, तामें करो विलास॥
जैसे भृंगी धुनिकरै, यों उपजै हिय माहिं॥
दोनों स्वरसों कीजिये, परगट सुनिये नाहिं॥
बलसेती पूरक करै, यही शब्द लै साथ॥
भृंगीकीसी धुनि सहत, रेचै मन्द सुहात॥

या अभ्यासके कियेसे, चित चंचल रहै नाहिं ॥
योगीश्वर लीलाकरै, चिदानन्द के माहिं ॥

अथ मूर्च्छा ।

सतवीं कुंभक मूरछा, पूरक ऐसे होय ॥
खैंचत होवै सोरसा, मेघधार ज्यों जोय ॥
बन्ध जलन्धर दीजिये, सहज कण्ठ तल जान ॥
रेचत थाई मूरछित, होय यही पहिचान ॥
सुखदाई सुखकी करन, कही सोई शुकदेव ॥
केवल कुम्भक आठवीं, गुरुसों पावै भेव ॥
पूरक रेचकही सहित, ये कुम्भककरि लेहि ॥
केवल कुम्भक नासधै, जबलग ह्यां चितदेहि ॥
केवलकुम्भकआशधरि, येहू साधतलोग ॥
बलपावै वश पौनहो, और भजैं तन रोग ॥

अथ केवलकुम्भक ।

आयुबढ़ावै सिद्धिदे, लागै और समाधि ॥
केवल कुम्भकगुणभरी, विन परमाणअगाधि ॥
केवल कुम्भक जबसधै, तब ये सब रहिजाहिं ॥
जैसे सूरज उदयते, तारे सब लुकि जाहिं ॥
केवल कुम्भक योग में, ज्यों नगरीमें भूप ॥
रेचक पूरकके विना, जैसे बँधा जु कूप ॥
सो तुमसों पहिले कही, विधिगतिसबसमुझाय ॥
सो तुम सुनि हिरदयधरी, देहौ ना बिसराय ॥

प्राणायाम बड़ातप सोई । प्राणायाम सों बल नहिं कोई ॥
प्राणवायुको यह वश लावै । मनको निश्चल करि ठहरावै ॥
आयुर्दा को यही बढ़ावै । तनमें रोग रहन नहिं पावै ॥

पाप जलावै निर्मल करै । उपजै ज्ञान तिमिर सब हरै ॥
योग युक्तिकी जड़ यह जानो । याहि टेकगहि करना ठानो ॥
अड़िग आसनसों याको कीजे । नवो द्वार पट नीके दीजे ॥
पाँचो इन्द्रीके रस पेलौ । इड़ा पिंगला सुषमन खेलौ ॥
कह शुकदेव चरणहीं दासा । प्रत्याहार सुनु विषै निरासा ॥

इति प्राणायामका अंग सम्पूर्णम् ।

अथ पांचवाँ प्रत्याहार अंगवर्णन ।

दोहा-प्रत्याहार जो पांचवाँ, समझाऊं चरणदास ॥
शुकदेव कहे कहुँ खोल कारि, नीके समझो तास ॥

प्रत्याहार पांचवां कहिये । सो योगीको निश्चय चहिये ॥
विषय और इन्द्री जो जावे । अपने स्वादनको ललचावै ॥
तिनकी ओर न जाने देई । प्रत्याहार कहावे एई ॥
रोंकिरोंकि इन्द्रिनको लावे । ध्यान आत्मा माहिं लगावै ॥
जैसे कछुआ अंग समेटै । रंक शीतकाल में लेटै ॥
जैसे माता पूत खिलावे । बालक वस्तुओंको ललचावे ॥
सरप आग अरु शस्तर कोई । कछू और दुखदायी होई ॥
तिनको बालक नाहीं जानै । पकड़नको दौड़े मन आनै ॥

दोहा-बालक जानत है नहीं, दुखदायी सब एह ॥
जो पकरूंगा हाथसे, दुख पावेगी देह ॥
माता जानत है सबै, खोटी खरी विकार ॥
राखै सुतको खैंचिकारि, वारम्वार निहार ॥
ऐसेही बुधि ज्ञान सों, पांचौ इन्द्री रोग ॥

विषय औरसों फेरिये, लहै न अपना भोग ॥
ज्यों ज्यों इनको भोगदे, परबल होती जाहिं ॥
विना भोग होनी नहीं, वह बल रहै जुनाहिं ॥
नैन जु भोगैं रूपको, और गन्धको घ्राण ॥
षटरस भोगै जीवही, शब्दहि भोगै कान ॥
स्पर्श भाग त्वचाको, बाढ़ै अधिक विकार ॥
पांचौ इन्द्री जानिले, इनका यही अहार ॥
इनसे मिलिमिलिमनबिगड़,होयगयाकुछऔर ॥
इन्द्री रोकै मन रुकै, रहै जु अपनी ठौर ॥
ज्यों ज्यों होवै प्राणवश, त्यों त्यों मनवश होय ॥
ज्यों ज्यों इन्द्री थिररहैं,विषय जाय सबखोय ॥
तातै प्राणायाम कारि, प्राणायामहिं सार ॥
पहिले प्राणायाम कर, पीछे प्रत्याहार ॥

इति प्रत्याहारअंग सम्पूर्णम् ।

अथ छठवाँ धारणाअंगवर्णन ।

दोहा–तत्त्वनकी कहुँ धारणा, तिनमें करै प्रवेश ॥
शनई शनई साधिकरि, पहुँचै निर्भय देश ॥

पहिले भूमि धारणाकीजै । ठौर काल जीमें चितदीजै ॥
पीतवरण चौकोर अकारो । विधि दैवत है तहाँ विचारो ॥
प्राणलीनकरि पांच घड़ीहीं । चितआस्थिर होवैगा जबहीं ॥
यासों पृथिवीको वश करिये । यही धारणा जो नित धरिये ॥
हिरदयसे ऊपर जल जानो । कण्ठतईं ताको पहिंचानो ॥

चन्दफांक अरु श्वेत अकारो। हृषीकेश तहँ देव निहारो ॥
ह्रां हूं पांच घरी अस्थापै। प्राणलीन कारि चितदै आपै ॥
व्यापै ना विष काहू विधिको। शुकदेवकहैंफलजलकेसिधिको॥

दोहा—कण्ठसे ऊपर तालुका, लो पावक अस्थान ॥
लालरंग तिरकोन है, रुद्र देवता मान ॥
तहां लीनकारि प्राणको, पांच घड़ी परमान ॥
भयव्यापैनहिं जालको, अग्निधारणा जान ॥
जाके आगे वायु है, भ्रुकुटीलों मर्य्याद ॥
मेघ वर्ण षट् कोणहै, ईश्वर दैवत साध ॥
प्राणलीन जहाँ कीजिये, पांच घड़ी रे तात ॥
पै है खेचर सिद्धि ही, तत् पदही ह्वै जात ॥
ब्रह्मरंध्र आकाश है, बड़ा जु तत्त्वन माहिं ॥
श्याम वरण ब्रह्म देवता, योगी जहां सिराहिं ॥
प्राणलीनघटिपांचकारि, पावै मुक्ति अनूप ॥
व्योम तत्त्वकी धारणा, जहां छाहँ नहिं धूप ॥
पृथ्वी संग लकारही, जलके संग बकार ॥
पावक संग रकारहै, मारुत संग मकार ॥
पंच तत्त्व अकाशही, सबके ऊपर जान ॥
अक्षर जहाँ हकारही, शुकदेव करै बखान ॥
पहिलि धारणा थंभनी, दूजी द्रावण होय ॥
तीजी दहनी जानिये, चौथि भ्रामिनी सोय ॥
पँचवीं नाम जु शांखिनी, इनको लेवो जान ॥
शुकदेवा अब कहत है, आगे और विधान ॥

प्रथम धारणा गुरुकी लीजे। अपना रूप उन्हींसा कीजे ॥
ऐसे ध्यान सभी सुधि पावे। जैसी धारै सो हो जावे ॥

वेगहि सब साधन सधि आवै। आलस कायरता भजिजावै॥
लोक प्रलोक सभी सुख लेवे। जो गुरुको ऐसो व्रत सेवै॥
दूजे परमातमकी धारण। मुक्ति देन अरु बंध निवारण॥
धारनसों चित घना लगावै। सिमिटि सभी ओरनसों आवै॥
जो कछु होय सो आगेहि आगे। टेक पकरि मारगमें लागे॥
चरणदास शुकदेव बतावै। सती शूरिमा ज्यों मन लावै॥

दोहा—प्राण वायुकी धारणा, परमेश्वर पहिचान॥
परमातम ह्वै जात है, जो पै रोपै प्रान॥
बारह मात्रा सों चढ़ै, ह्वां तक पहुँचै जाय॥
बारहवें अरु छानवे, कुंभकमें ठहराय॥
यही धारणा अंग है, शनै शनै कर ध्याव॥
याते दुगुनी ध्यान में, प्राण वायु पहुँचाव॥
दूजा जानि समाधि लौं, ध्यानहिं सेती एहु॥
पांच हजार औ एकसौ, चौरासी गिनिलेहु॥

इति धारणाका अंग सम्पूर्णम्॥

अथ सातवाँ अंगवर्णन।

शिष्यवचन।

दोहा—अंग धारणा का कहा, सो धारा चित माहिं॥
ध्यान अंग वर्णन करौ, मैं रहुँ चरणन छाहिं॥

गुरुवचन।

दोहा—चरणदास अब ध्यान सुनु, कहूं तोहिं समुझाय॥
शुकदेव कहे सुनि सुनि समुझि, करौ तोहि चितलाय

ध्यान जु चारि प्रकारके, कहूं जु उनकी रीत ॥
पदस्थ पिंडरूपस्थ है, चौथा रूपातीत ॥

अथ पदस्थध्यान ।

दोहा—हियपदपंकज ध्यान करि, फिरि करि सारी देह ॥
नखशिखलौंछबिनिरखिके, चरणनमें चितदेह ॥
कै कुंभकही कीजिये, हुवां प्रणवका जाप ॥
मन निश्चल हो सहजमें, भाजैं त्रैविधि ताप ॥
पदस्थ ध्यान याको कहैं, करै सो जानै भेव ॥
पिंडस्थध्यान वर्णन करैं, खोलि खोलि शुकदेव ॥

अथ पिंडस्थध्यान ।

दोहा—ब्रह्मण्ड सोई यह पिंडहै, यामें करि करि वास ॥
कमलनके लखि देवता, लहै परापत तास ॥
सोधै सगरे पिंडको, षट्चक्रहुको ध्यान ॥
शोधत शोधत आचढ़ै, भवँर गुफा अस्थान ॥
तिरवेणी संगम बहै, ज्योति जहां दरशाय ॥
सातजन्मसुधिहोयजब, ध्यान करै मनलाय ॥
आगे कमल हजारदल, सद्गुरु ध्यान प्रधान ॥
अमृत दरिया बहिचलै, हंस करै जहँ न्हान ॥
ऊपर तेजहि पुंज है, कोटिभानु परकाश ॥
शून्य शिखर ता ऊपरै, योगी करै विलास ॥

अथ रूपस्थध्यान ।

रूपस्थध्यानकोभेदसुनि, कीजै मन ठहराय ॥
देखै त्रिकुटी मध्य है, निश्चल दृष्टि लगाय ॥
ध्यान किये पहिले जहां, अगन फूल दृष्टाय ॥
केते द्योसन माहिंहीं, दीप ज्योति प्रगटाय ॥

शनै शनै आगे जहां, दीपमाल दरशाय ॥
फिरि तारोंकी मालसी, दामिनि बहु दमकाय॥
बहुत चन्द सूरज घने, देखे कोटि अनन्त ॥
अणज्योंकारि सूभर भरे, ध्यानमाहिं दरशन्त ॥
झिलमिल २ तेजमय, भासै सब संसार ॥
तन मन उपजै सुख घना, आनँद अधिक अपार॥
जल अथाहमें डूबि ज्यों, देखै दृष्टि उघार ॥
जो दीखै तौ नीर ही, दशदिशिअपरम्पार॥
यह तो ध्यान प्रत्यक्ष है, गुरू कृपासों होय ॥
कहशुकदेवचर्णदासकर, तन मन आलस खोय ॥

अथ रूपातीतध्यान।

रूपातीत शून्य ध्यानहिं जानो। शून्यहिको परब्रह्म पिछानो॥
त्रिकुटी परै शून्य अस्थान। सो वह कहिये पद निर्वान ॥
चिदानन्द ताको हिय आनो। वाहीमें मनहीको सानो ॥
आठपहर जहँ चित्त लगावो। याके कीन्हेसों लय पावो ॥
ज्यों अकाशमें पक्षी धावै। धावत धावत दृष्टि न आवै ॥
बहुरि अचानक दीखै आई। वह ध्यानी ऐसा ह्वै जाई ॥
इसपरमशून्यकाअधिकी ध्याना।सब ध्याननमें है परधाना ॥
सो योगी यह लहै ठिकाना। सायुज्यमुक्तिहोइजाय निदाना॥

दोहा–यासों लगै समाधिही, निद्रा कहिये योग ॥
ध्याता होवै लीनही, रहै न त्रिकुटी सोग ॥
सातवाँ कहा जु ध्यानहीं, अठवाँ कहूं समाधि ॥
ज्ञान ध्यान जहँ बीसरै, तहां न विद्यावाद ॥

इति ध्यानांग सम्पूर्णम्।

अथ आठवाँ समाधिअंग वर्णन ।



अष्टपदी ।

अठवीं कहूं समाधि लक्षण वर्णन करूं । तोको सब समुझाय तेरी दुबिधा हरूं ॥ जबहीं लगै समाधि योगी आनँद लहै । योग भया सिध जान क्रिया कोइ ना रहै ॥ मिलि ध्याता अरु ध्यान एक होवै जहां । दूजा रहै न भाव मुक्ति बर्तै जहां॥ निरउपाधि निर्खंद ऐसा वह देशहै । करम भरम अरु धरम नहीं कोइ लेशहै ॥ आपारहै न कोय सकल आसागरै । चिन्ताका दुख नाहिं वासना सब जरै ॥ पंच विषय जहँ नाहिं नहीं गुणती नहीं । होवै ब्रह्मस्वरूप जीवताक्षी नहीं ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति होवेही नहीं । चौथे पदको पाय होय जहँ लीनहीं ॥ ऐसे कहै शुकदेव सुनो चरणदासही । यह निर्द्वंद्व समाधि करौ तहँ वासही ॥

दोहा—जहां कछू गम्य ना रहै, विद्या वेद न बाध ॥
ऋधिसिधि मिटि आनँदलहै,ऐसी शून्य समाधि॥

अष्टपदी ।

तहां किये परवेश रहै न अकारही । रूप नाम गुण क्रिया यही साकारही ॥ पाप पुण्य सुख दुःख जहां नाहिं पाइये । मतमारग कुल धर्म न देत दिखाइये ॥ भूख प्यास अरु उष्ण जहां नाहिं शीतहै । हर्ष शोक नाहिं नेक वैर नाहिं प्रीतहै ॥ इन्द्री मन नाहिं रहत गलित ह्वै जात है । सिध साधक गुरु शिष्य न भाव रहत है ॥ उडुगन चन्दन सूर न दिवस न रातहै । त्वंपद ईश्वरब्रह्म न जान्यो जातहै ॥ जैसे जलमें नीर क्षीरमें

क्षीरही । असिपदमें यों जीव नीरमें नीरही ॥ अहं मिटै मिटि-जाय जु आपा थोकही । नापरमातम आतम बंध न मोक्षही ॥ ऐसे कह शुकदेव यों होय समाधि में । वैसाही ह्वै जाय सोई था आदिमें ॥

दोहा—हुता आदि परमातमा, बिचउठि लगा विकार ॥
सिलि समाधि निर्मल भवै, लहै रूप ततसार ॥

अष्टपदी ।

जहँ आतमदेव अभेव सेवक नहिं सेव है । स्वामी भी ह्वां नाहिं पूजा नहिं देव है ॥ नौधा नेम न प्रेम ज्ञान नहिं ध्या-नहै । जड चेतन कछु नाहिं सुरति नहिं ज्ञान है ॥ विधि निषेध नहिं भेद अन्वय व्यतिरेक ना । निश्चय अरु व्यवहार कछु तामें न ह्वां ॥ उत्तम मध्यम भाव न शुभ ना अशुभ है । सिंह सर्प डर नाहिं औ शस्तरको न भै ॥ पावक दग्ध न करै बहावै जल नहीं । ह्वां नहिं पहुँचे काल न ज्वाला है तहीं ॥ ऐसा भवन समाधि भागि सों पाइये । तजिकै जक्त उपाधि तहां मठ छाइये ॥ यतन करै लख माहिं और सब भेषही । को-टिनमें कोइ होय समाधी एकही । ह्वांतक पहुंचै जाय सोई सिध साध है । कहै शुकदेव पुकारि जु कठिन समाधि है ॥

दो०—भक्ति योग अरु ज्ञानकी, त्रैविधि कहूं समाधि ॥
गुरू मिलै तौ सुगमहै, नाहीं कठिन अगाधि ॥

अथ भक्तिसमाधि ।

दोहा—सब इंद्रिनको रोंकिकै, करि हरि चरणन ध्यान ॥
बुद्धि रहै सुरतिहु रहै, तौ समाधि मत मान ॥
ध्याता बिसरै ध्यानमें, ध्यान होय लय ध्येह ॥
बुद्धि लीन सुरति ना रहै, पद समाधि लखि लेह ॥

अथ योगसमाधि।

दोहा—आसन प्राणायाम करि, पवन पंथगहि लाह ॥
षट चक्करको छेद करि, ध्यान शून्य मन देहि ॥
आपा बिसरै ध्यानमें, रहै सुरति नहिं नाद ॥
लीन होय किरिया रहित, लागै योग समाध ॥

अथ ज्ञानसमाधि ।

दोहा—जब लग तत्त्वविचारि करि, कहैं एक अरु दोय ॥
ब्रह्मव्रत बांधे रहै, ह्यांलग ध्यानहिं होय ॥
मैं तू यह वह भूलि करि, रहै जू सहज स्वभाय ॥
आपादेहि उठाय करि, ज्ञानसमाधि लगाय ॥
ज्ञान रहित ज्ञाता रहित, रहित ज्ञेय अरु जान ॥
लगी कभी छूटै नहीं, यह समाधि विज्ञान ॥
पूछे आठों अंग ते, योग पंथकी बात ॥
शुकदेव कहै तामें चलौ, गुरूकृपा लै साथ ॥

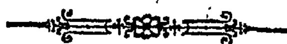
इति अष्टांगयोग सम्पूर्णम् ।



॥ श्रीयोगिजनवल्लभाय नमः ॥



अथ षट्कर्महठयोगवर्णन ।



शिष्यवचन ।

दोहा—अष्टांग योग वर्णन कियो, मोको भइपहिचान ॥
छहौं कर्म हठयोगके, वरणो कृपानिधान ॥

गुरुवचन ।

पहिले ये सब साधिये, काया होवै शुद्धि ॥
रोग न लागै देह को, उज्ज्वल होवै बुद्धि ॥

अरु साधै षट्कर्म बताऊं । तिनके तोकों नाम सुनाऊं ॥
नेती धोती वसती करिये । कुंजर करम देह सब हरिये ॥
न्योली किये भजै तन बाधा । देखि देखि जिन गुरुसों साधा ॥
त्राटक कर्म दृष्टि ठहरावै । पलक पलकसों लगन न पावै ॥

अथ नेतीकर्म ।

कुं०—मिही जु सूत मँगायकै, मोटी बाटै डोर ॥
ऊपर मोम रमाय कै, साधै उठि करि भोर ॥
साधै उठि करि भोर, डेढ़ बालिस्त कि कीजै॥
ताको सीधी करै, हाथ अपनेम लीजै ॥
नासारंध्रमें मेल कर, खींचै अँगुली दोय ॥
फेरि विलोकन कीजिये, नेती कहिये सोय ॥
दोहा—कान नाक अरु दांतको, रोग न व्यापै कोय ॥
उज्ज्वल होवै नैनही, नित नेती करि सोय ॥

अथ धोतीकर्म ।

धोती कर्म यासों कहैं, पट्टी सोलह हाथ ॥
कोट अठारह नाभवैं, करै जु नित परभात ॥
कुं०—चौड़ी अंगुल चारिकी, मिही वस्त्रकी होय ॥
जलमें भेइ निचोय करि, निगल कंठसों सोय ॥
निगल कंठसों सोय, सिरा बाहर रहिजावै ॥
फेरि निकासै ताहि, पित्त कफ दोऊ लावै॥
काया होवै शुद्धही, भजै पित्त कफ रोग ॥
शुकदेव कहै धोती करम, साधै योगी लोग ॥

अथ वस्तीकर्म ।

कुं०—तीजे बस्ती कर्महीं, कहौं सुनो चितलाय ।
क्रिया करै गणेशही, कुंजी तहां लगाय ॥
कुंजी तहां लगाय, मूलको धोवन कीजै ।
पंसारन संकोच, सुरतदे यह करिलीजै ॥
नीर गुदासों खैंचिकरि, थांभै उदर मँझार ॥
कछू डोल अरु बैठकर, फिरि दे ताहि उतार ॥

दोहा–यही जु बस्ती कर्म है, गुरु बिन पावै नाहिं ॥
लिंगगुदा के रोग जो, गर्मीके नाशिजाहिं ॥

अथ गजकर्म ।

दोहा–गजकर्म याही जानिये, पिये पेट भरिनीर ॥
फेरि युक्तिसों काढ़िये, रोग न होय शरीर ॥

अथ न्योलीकर्म ।

न्योली पदमासन सों करै । दोनों कर घुटनो पर धरै ॥
पेटरु पीठ बराबर होय । दहने बायें नले बिलोय ॥
मैल पेटमें रहन न पावै । अपान वायु तासों वश आवै ॥
तापतिली अरु गोला शूल । होन न पावै नेक न मूल ॥
जो गुरु करिकै ताहि दिखावै । न्योलीकर्म सुगम करि पावै ॥
और उदरके रोग कहावै । सो भी वै रहने नहिं पावै ॥

अथ त्राटककर्म ।

त्राटक कर्म टकटकी लागै । पलकपलकसों मिलै न तागै ॥
नैन उघारे ही नित रहै । होय दृष्टि थिर शुकदेव कहै ॥
आँख उलटि त्रिकुटीमें आनो । यह भी त्राटककर्म्म पिछानो ॥
जेते ध्यान नैनके होई । चरणदास पूरण हो सोई ॥

दोहा–कपालभाँति अरु धौंकनी, बाघी शंख पषाल ॥
चारिकर्म ये और हैं, इनहिं छहोंके नाल ॥

इति त्राटककर्म ।

अथ खेचरीमुद्रा ।

शिष्यवचन ।

दोहा–एकबार फिर भी कहो, मुद्रा पांच दयाल ॥
मोसे रंक अधीनपर, होकर बहुत कृपाल ॥

गुरुवचन।

अष्टपदी—आगे मुद्रा तोहिं कहीं समुझाइया। फिर भी कहूं अब खोलि सुनो चितलाइया॥ पहिले मुद्राखेचरी को साधन भनूँ। जैसे आगे करी सबीं ऋषि मुनिजनूँ॥ ताते जलके कुरलेकरि जु बगाइये। ता पाछे चौबस्त को चूरणलाइये॥ जिह्वा हाथमें पकरि मर्दन छीलनकरै। दोहनताननकरै बहुरि दशनन धरै॥ फिरि करि चालन ताहि छेद नहिं कीजिये। तातू ज्यों कटिजाय यत्न सोइ लीजिये॥ ब्रह्मरंध्रको धोयकै मैल निवारिये। बायें अँगूठे ऊपर कागको धारिये॥ सहज सहज सरकायकै आगे लाइये। यह सब साधन कठिन गुरूसे पाइये॥ दो अँगुलीकी कूंचीसूंकरि मेलना। जिह्वा उलटी राख जु नितप्रति खेलना॥ यह उपाय षट मास करै ताजि मानहीं। रसना यों बँधिजाय चढ़ै अस्थानहीं॥

दोहा—चार काज यासूं सरैं, फलदायक बहुभाँति॥
योग माहिं बड़ भूप है, अधिकी जाकी क्रांति॥

अष्टपदी।

एक जु प्राणायाम जीभसूं कीजिये। दूजे बन्ध उदान यहीसूं दीजिये॥ तीजे करि करि ध्यान निरखि जहँ ज्योतही। चौथे अमृत पिवै खुलै तहँ सोतही॥ खैंचै त्रिकुटी पाट सहज अरु फेरिये। द्रवै सुधा रसनीर जहां मन घेरिये॥ अमृतही के स्वादको कौन बखानई। जो कोई अँचवै हंस सोई फुन जानई॥ दिन दिन पलटै देह रक्त दूधाभवै। बीस वरस अरु चार माह ऐसा हवै॥ इक्ष्याचारी होय वरस छत्तीसमें। सब लोकनमें जाय जु अपनी शक्तितें॥

१ स्याह मिर्च, पीपल, सोंठ और मधु।

दोहा–जेते विष व्यापै नहीं, रोग न दहै शरीर ॥
जो कोइ पीवै युक्तिसूं, कामधेनु को क्षीर ॥
भूख प्यास अरु नींदके, रहै न तीनौ लेव ॥
नाद बिन्द गुटका बँधै, कहै यही शुकदेव ॥
तीन महीने चार का, बालक गोदी माय ॥
ना वह पीवै नीरही, अन्न नहीं वह खाय ॥
वह तौ जीवै दूधसूं, वाकूं वही जु काम ॥
लगो रहै माता कुचन, निसरै एक न याम ॥
अमृत पीवै योगिया, ऐसे चरणहिदास ॥
पहरहु यह छाँडै नहीं, कामधेनुको पास ॥
ऐसे धारै तौ बनै, सुधा रसीला संत ॥
दिव्यकाया होजाय जब, धनकहै कमलाकंत ॥
आठपहर लागारहै, पीवै कैकरि ध्यान ॥
मैं कहा जैसाही बनै, परसै पद निरवान ॥
भेद गुरूसे ये लहै, और छिपावै वाहि ॥
जोजोफलयाकेअधिक, होय परापति ताहि ॥
योगेश्वर अरु देवता, मुनी ऋषीश्वरजान ॥
रखवारे वाके घने, करन न देवैं ध्यान ॥
टेक गहै सो जापिये, और करै ह्यां ध्यान ॥
यती सती अरु गुरुमुखी, जाकी ऐसी आन ॥
बड़ी जु मुद्रा खेचरी, मुखमें याका वास ॥
जो कहि मैं शुकदेवही, जानलेहु चरणदास ॥

अथ भूचरीमुद्रा ।

दोहा–दूजी मुद्रा भूचरी, नासा जाको वास ॥
प्राण अपान जुदी जुदी, एक करै चरणदास ॥

जितकीतितरखप्राणको, वा घरलाय अपान ॥
ताहि मिलावै युक्तिसूं, कारिकारिसंयमध्यान ॥
जब वह जीतै पवनकूं, मन चंचल ठहराय ॥
गगन चढ़नकी आशहो, कहैं शुकदेव सुनाय ॥
गुदाद्वार बँध दीजिये, एँड़ी पांव लगाय ॥
आसन सिद्ध ज़ु कीजिये, मन पवनावश लाय॥
अपानवायु जब वशभवै, ऊरध खैंच चलाय ॥
सनई सनई जा चढ़ै, प्राण वायु ह्वै जाय ॥

अथ चाँचरीमुद्रा।

दोहा—तीजी मुद्रा चाँचरी, जाको नैनन वास ॥
नासा आगे दृष्टिकूं, राखे मन धर आस ॥

अंगुल चार नासिका आगे। चित अस्थि रकारि देखन लागे ॥
खुले पांच तत करै जु कोई। मन अरु पवन जहां थिर होई॥
फिर ह्वांसूं नासा परि आवै। अचल टकटकी तहां लगावै ॥
जहँ बहुतक अचरज दरशावै। विभव स्वर्गके आगे आवै ॥
जितसूं पलट तिरकुटी माहीं। ध्यान करै कहुँ अन्त न जाहीं॥
दीरघ तारासा परकासै। उदय होय सूरज ज्यों भासै ॥
चित चेतन दोउ मेला करै। लै उपजै अरु दुविधा हरै ॥
यही चाँचरी मुद्रा जानौ। चरणदास याकूं पहिंचानौ ॥

अथ अगोचरीमुद्रा।

कहूं अगोचारि चौथी मुद्रा। तामें सुख पावै योगींद्रा ॥
या मुद्राका शरवन वासा। शुकदेवकहैंसुनचरणहि दासा ॥

दोहा—ज्ञान सुरति दोउ एक ह्वै, पलट अगोचरजाय ॥
शब्द अनाहदमें रतै, मन इन्द्री थिरपाय ॥

अथ उन्मनीमुद्रा ।

पँचवीं मुद्रा उनमनी, दशवें द्वारे वास ॥
सिद्धसमाधि मिलै जहां, दग्धहोय सब आस ॥
आनंदहि आनँद जहां, तहां न कालकलेश ॥
तीनौं गुन नाहिं पाइये, ह्यां नहिं मायालेश ॥
जीवातम परमात्मा, होय जाय वा ठौर ॥
ध्याताध्याननध्येयजहाँ, तहां न किरिया और ॥

अथ बन्धवर्णन ।

महाबन्धसाधनविधि ।

महाबन्ध तोहिं पहल बताऊं । पाछे मूलबन्ध समझाऊं ॥
बायां पाँव सिवन गहि दीजै । मूल द्वार एँड़ी बँध कीजै ॥
दहिनी जंघ जंघपरलावै । गउमुख आसन नाम कहावै ॥
राखै चिबुक हृदय परलाय । पवनराह पूरवको जाय ॥
ध्यान त्रिकूटी संयम करै । प्राणवायु हिरदे में धरै ॥
महाबन्ध ऐसे करि साधै । गुरु प्रताप याही आराधै ॥
बिना पुरुष तिरियाकूं जानौ । बन्ध बिना मुद्रा पहिंचानौ ॥
निर्फल जाय पुरुष बिननारी । महाबन्ध बिन मुद्राधारी ॥
माहिं कण्ठके ध्यान लगावै । सुरत निरत ह्वाई ठहरावै ॥
दोहा–महाबंध अस्थित करै, सो योगी ह्वै जाय ॥
पवन पंथ मुद्रित करै, ध्यान कण्ठमें लाय ॥
शशि घरकूं सूरज घरलावै । रेचक पूरक पवन फिरावै ॥
महाबंध करै अभ्यासा । अमृत अचवै बुझै पियासा ॥
जरा अमृत देही नाहिं आवै । महाबंध तीनौ गुन पावै ॥
जठर अग्नि परचै बहुभारी । निशिदिन माहिं करै अठवारी ॥
पहर पहर मैं पवन भरीजै । प्रथम अलप अभ्यास करीजै ॥

सिय सेवन तापन नहिं करै । कामअग्नि काया नहिं जरै ॥

दोहा–ऐसी विधि साधै पवन, योग पंथ धरि पाय ॥
पहर पीछला बनत जन, आयुरदा बढिजाय ॥

अथ मूलबंध ॥

दोहा–मूलबंध अब कहतहूं, अपानवायुवश होय ॥
ऊपरकूं खैंचन करै, मिलै प्राण मैं सोय ॥
कमल कमल सीधे भवै, नाभि तलेहो राह ॥
आगे मारग सुगमहो, पहुँचै योगीनाह ॥

मूलबंध गुण ऐसा होई । वायु अधोगति जाय न कोई ॥
रेता ऊरध यासूं सधै । दिन दिन आयु सवाई बधै ॥
यासूं कारज सब बनिआवै । रोगरक्तके सभी नशावै ॥
योगी पाहले या आराधै । अपान वायुकूं नीके साधै ॥
अब मैं मूलबंध बतलाऊं । ज्योंकात्यों साधन दिखलाऊं॥
गुदा वास याका तुम जानौ । गुदा द्वार बँधन दैना ठानौ ॥
बायें पांव कि एँडीसेती । मूल द्वार रोकै करिहेती ॥
ऊरधहीकूं खैंचन कीजे । शुकदेव कहै नीके सुनलीजे ॥
अरु कबहूं मन ऐसी धरै । आसन पदम करनकूं करै ॥
कपड़ेकी इक गेंद बनावै । गुदा मध्य कसबंध लगावै ॥
योंभी वायु सधै वा भाँती । जोपै लगारहै दिनराती ॥
पवन तत्त्वके ऊपर जावै । प्राण अपान सहज मिलजावै॥
नाद बिंद रल मिलजा दोई । एक वरस साधै जो कोई ॥
योग माहिं यह भी परधान । बूढ़ी देह पलटहो ज्वान ॥
जठरअग्नि बाढ़ै अधिकाय । जो चाहै तौ बहुतै खाय ॥
सुन चरणदास कहै शुकदेव । जो गुरु पूरा देवै भेव ॥

अथ जलधरबंध ।

दोहा–मूलबंध तोसूं कहा, गुण कह सब समुझाय ॥
बंध जलंधर कहतहूं, सुन सरवन करिचाय ॥

तीजा बंध जलंधर जानौ । कंठ वास ताका पहिंचानौ ॥
ग्रीवा लटक चिबुकहियैलावै । कंठ पवन रोकै परचावै ॥
हिरदे प्राण पूरकरि रहिये । बंध जलंधर यासूं कहिये ॥
ऊरध पवन नीचेको जाय । अरध पवन ऊरधकूं लाय ॥
उदर मध्य लै ताहि बिलोय । ब्रह्मरंध्र जा पहुँचै सोय ॥
इह विधि ब्रह्मपंथकूं धावै । सहजै सहजै मध्य समावै ॥
जरा मरण जहँ भयनहिं व्यापै । लहे अमरपद होरहआपै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । जो पै बंध उड्यान लगावै ॥

अथ उड्यानबंध ।

दोहा–बंध उड्यान आगै कहा, जिह्वा उलट लगाय ॥
कान आँख मुखनाकके, स्वर सब बंधकराय ॥
इह सुबंध महिमा अधिक, लागै बजर किवाँर ॥
सात द्वारकी बाटहो, निकसै नाहिं बयार ॥
पांचौ मुद्रा बंध सब, दिखलाया यह देश ॥
शुकदेव कहै रणजीत सुन, और कहूँ उपदेश ॥

अष्टपदी ।

चौरासीही जानि जु आसन योगके । सिद्धपदम तिनमाहिं बड़ेही थोकके ॥ बहु नारिनके माहिं जु नौनारीभनी । तिन में सुषमन जानबड़ी गुरुसूं सुनी ॥ तीन बंधके माहिं मूलकूं जानिये । मुद्रौहीमें बड़ी जो खेचरी मानिये ॥ वायुनमें परधान प्राणकूं देखिये । सबकुंभकहूं माहिं केवल बड लेखिये ॥ बानी-चारौ मध्यपराही गाइये । चार अवस्थामाहिं तुरिया बडपाइये ॥

परमशून्यको ध्यान परसूंहे परै ॥ याकीसम कोइ नाहिं ध्यान तिनको धरै ॥ अजपाहीके जाप बराबर औरना। शीलछमासे मीत न कोई देहमां ॥ पूजन मैं बडि जान जु आतमकी करै। ज्ञानसमान न दान सकल विपताहरै ॥ गुरुसा रक्षक और नहीं कोइ लोकमें। योग युक्तिसा स्वाद नहीं कोइ भोगमें ॥ कहै गुरुशुकदेव सुनो रणजीतही। बडी जो गांस खोल तुमकूं जु दी ॥

छन्द–अमरी करतैं बजरी रोंकै बजरी करतैं वाई। रोंकै क्षींक साधना करिकै नासालेहु जँभाई ॥ जल संयमसूं नभकूं देखै संयम नाद सु ज्योती। संयम पवनहोय थिरकाया सो वश राखै मोती ॥ जिया बिछावै मृत्यक ओढ़ै बूढ़ी होय न काया। संयम नींद बिंद नहिं जावै यह शुकदेव बताया ॥ दहिने स्वरमें भोजनकीजे बायें स्वरमें पानी। दहिने स्वरमें अमरी रेचै देह न होय पुरानी ॥ दहिने स्वरमें जलसूं न्हावै बायें स्वरमें लङ्गी। शिव आसनसूं सोवनकीजै नारि न कीजे सङ्गी ॥ पावकसूं तापन नहिं कीजे जो तापै तो नैना। भोजन गरम न खट्टा खावै फटै झिरै नहिं मैना ॥

दोहा–गरमीही के रोग में, चन्द चला रवि चन्द ॥
शीत रोग सूरज चला, शशिपर राखै बन्द ॥
तीन रोजकै पांच दिन, कै दिन राखै सात ॥
रोग देखि जैसी करै, होय निरोगा गात ॥
सूरज रात चलाइये, द्यौस चलावै चन्द ॥
पवन फिरै ऊपा बधै, श्वास चलै जो मन्द ॥
कान आँख अरु दांतके, सबही रोग भजाहिं ॥
श्याम बाल नहिं श्वेतहों, करै जु नीकी दाहिं ॥

रुई पुरानी बहुतही, दिनकूं दहिने राखि ॥
बायें राखै रैनिकूं, खोली साधन भाखि ॥
शीत उष्ण व्यापै नहीं, विष नहिं व्यापक होय ॥
बीसवरस साधन किये, रहै विकार न कोय ॥
बासी ग्रास न खाइये, छूछम करै अहार ॥
जल बहुते पीवै नहीं, सपरस करै न नार ॥
तन मन साधै वचनही, पाप न लगने देह ॥
शुकदेवकहैचरणदाससुनु, अधकी साधन येह ॥
सब जीवन सुख दीजिये, सबसों मीठा बोल ॥
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥
दया पुष्प चन्दन नवन, धूप दीप दे मन्न ॥
भाँति भाँति नैवेद्य सूं, करै देव परसन्न ॥
जो कोइ आवै राजसी, देहु बड़ाई ताहि ॥
जाकूँ देखो तामसी, करो नम्रता वाहि ॥
जो कोइ होवै सात्विकी, मिलै ताहि तजिमान ॥
गुढ़ी खोल चर्चा करो, लीजे ततमत छान ॥
सबहीकूं परसन्न करै, आप रहै परसन्न ॥
बासलहो हरि ध्यानही, ह्वां कहै सब धंन धन्न ॥
राजस तामस सात्विकी, क्षेत्तर तीनहिं भाँति ॥
क्षेत्रक आतम देवहै, सबको साहिये क्रांति ॥
सब में देखै आपकूं, सबकूं अपने माहिं ॥
पावै जीवनमुक्ति को, यामें संशय नाहिं ॥
सबमें देखै आतमा, आपनमें करि ध्यान ॥
यही ज्ञान ब्रह्मज्ञान है, यही जु है विज्ञान ॥
अहंकार मिटि ब्रह्महो, परमातम निरवाण ॥

शुकदेवाहो कहतहूं, चरणदास हिय आन ॥
जो तैं पूंछा सो कहा, भेद कहा सब खोल ॥
अरु तेरे हियमें कछू, सकुच खोल कर बोल ॥

शिष्यवचन।

दोहा–अपनालखि किरपाकरी, समझायो बहुभाँति ॥
योग ओरतैं गुरूजी, हिये में आई शांति ॥
तुम्हरी कहअस्तुति करूं, मोपै कही न जाय ॥
इतनी शक्ति न जीभको, महिमा कहै बनाय ॥
किरपाकरी अनाथ पर, तुमहो दीनानाथ ॥
हाथ जोड़ि मांगौं यही, मम शिर तुम्हरा हाथ ॥
मोसे रंक गरीबकी, तुम गहि पकरी बाँह ॥
भव बूड़त राखा मुझे, चरणकमलकी छाहँ ॥
आपहि तुम किरपाकरी, मैं कित लहता तोहिं ॥
तुमको पाऊं ढूँढ़िकरि, इतनी शक्ति न मोहिं ॥
व्यासपुत्र शुकदेव तुम, जक्त माहिं विख्यात ॥
तुम दर्शन दुर्लभ महा, पुरुषनको न दिखात ॥
बड़े भाग मेरे जगे, पूरुविले परताप ॥
किरपा श्रीगोपालकी, आय मिले तुम आप ॥
चरणदास अपनो कियो, दियो परम संतोष ॥
बैठिकरूंगो ध्यानही, अबकुछ रह्यो न शोक ॥
चलत फिरत ह्यां आइया, तुमभरिदीन्ह्यो मोहिं ॥
नैन प्राण तन मन सभी, देखत अरपै तोहिं ॥
चाहमिटी सबसुख भये, रहा न दुखका मूल ॥
चाहूं तौ चाहूं यही, तुम चरणनकी धूल ॥

गुरुवचन ।

दोहा--योग तपस्या कीजियो, सकल कामना त्याग ॥
ताको फल मत चाहियो, तजौ दोष अरु राग ॥
अष्टसिद्धि जो पै मिलै, नेक न कीजै नेह ॥
धरि हिरदय परमातमा, त्यागे रहियो देह ॥
जेती जगकी वस्तुहै, तामें चित्त न लाय ॥
सावधान रहियो सदा, दियो तोहिं समुझाय ॥
बार बार तोसें कहूं, ह्यां मत दीजो चित्त ॥
सिद्ध स्वर्गफलकामना, तजि कीजो हरिमित्त ॥
जो कीजै हरि हेत ही, एहो चरणहिदास ॥
भक्तियोग अरुशुभकरम, नीकी ठौर निवास ॥

शिष्यवचन ।

दोहा--ऐसेही सब करूंगा, तुम चरण नपरताप ॥
अष्टसिद्धि समझो चहों, वर्णन कीजैं आप ॥
समझौं तो त्यागूं उन्हें, करवायो पहिचान ॥
कहानाम लक्षण कहा, कौन रहै अस्थान ॥

गुरुवचन ।

दोहा--शुकदेव कह वर्णन करूं, अष्ट सिद्धि के नाउ ॥
लक्षणगुण सबही सहित, नीके तोहिं समुझाउ ॥

अथ अष्टसिद्धिके नाम ।

प्रथमै अणिमा सिद्धि कहावै । चाहै तौ छोटा ह्वै जावै ॥
अणु समान छिपि जावै सोई । ऐसी कला जु पावै कोई ॥
दूजी महिमा लक्षण एता । चाहै बड़ा होय वह जेता ॥
तीजी लघिमा वह कहवावै । पुष्प तुल्य हलका ह्वै जावै ॥
चौथी गरिमा कहूं विचारी । चाहै जितना होवै भारी ॥

पंचवीं प्रापति सिद्धि कहावै । जित चाहै तितही ह्वै आवै ॥
छठवीं पराकाम्य गुण धरै । शक्ति पाय चाहै सो करै ॥
सतवीं सिद्धि ईशिता रानी । सबको अज्ञा माहिं चलानी ॥

दोहा--वशीकरणसिधिआठवीं, कहैं जु श्रीशुकदेव ॥
चाहै जिसको वशकरै, अपनाही करि लेव ॥
चरणदास सिद्धैं कही, समझलेहिमनमाहिं ॥
जो हैं जनवे रामके, इनमें उरझैं नाहिं ॥

योगकिये आठोंसिधि पावै । कै भोगै कै चित न लगावै ॥
योग किये मन जीता जावै । पलटै जीव ब्रह्मगति पावै ॥
योगेश्वर चाहै सो करै । भरी रितावै रीती भरै ॥
योगेश्वर ईश्वर ह्वै जाई । दिन दिन बाढ़ै कला सवाई ॥
तजिये भोग योगही करिये । तिरगुणपरै ध्यानहीं धरिये ॥
चौथेपदमें करै निवासा । काहूविधिका रहै न श्वासा ॥
योग करै सोई परवीना । शुकदेवकहैं प्रकट कहिदीना ॥

दोहा--पोथी माहीं देखि करि, करै जु कोई योग ॥
तनछीजै सिधि ना भवै, देही आवै रोग ॥
देखि देखि गुरुसों करै, लै अज्ञा रहु संग ॥
सिद्धि होय साधन सबै, कछू न आवै भंग ॥
योग तपस्या में बड़ा, पहुँचावै हरिपास ॥
जन्म मरण विपता मिटै, रहै न कोई आस ॥

शिष्यवचन ।

दोहा--मैं समझी जानी सभी, सूझभई हिय माहिं ॥
किरपाकरि जो जो कहा, ताको बिसरूं नाहिं ॥
व्यासदेव श्रीजनक जै, जै जै श्रीशुकदेव ॥
जैजै यह शुकतारहै, समुझायो करि हेव ॥

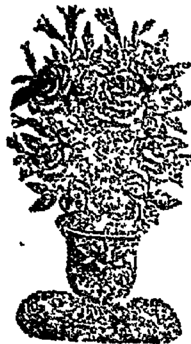
हिय हुलसो आनँद भयो, रोम रोम भयो चैन ॥
भये पवित्तर कानये, सुनिसुनि तुम्हरे बैन ॥

छप्पय ।

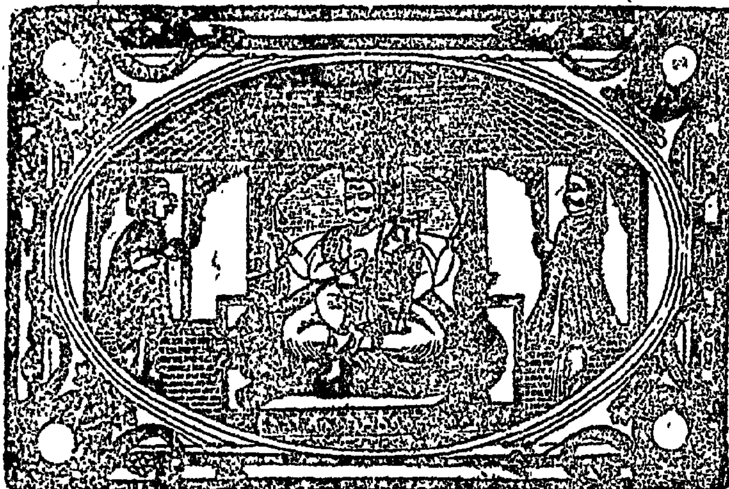
गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु, गुरु देवनके देवा ॥
सर्व सिद्धि फल देनगुरु, तुमहीं मुक्ति करेवा ॥
गुरु केवट तुम होयकरि, करौभवसागर पारी ॥
जीव ब्रह्म करिदेत हरो, तुम व्याधा सारी ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, चरणदासके शीशपर॥
किरपाकरिअपनोकियो,सबहीविधिसोंहाथधर॥

इति श्रीस्वामीचरणदासकृतषट्कर्महठयोगवर्णन

सम्पूर्ण ।



॥ कैलासविहारिणे नमः ॥



अथ योगसन्देहसागरप्रारम्भः ।

दोहा—अर्थ बतावो पण्डिता, ज्ञानी गुणी महन्त ॥
जो तुम पूरे साधुहौ, भक्ता हरिके सन्त ॥
चरणदास पूछै अरथ, भेदी होय कहो ॥
समझौ तौ चर्चा करो, नाहीं मौन गहो ॥

ब्रह्मण्डे सों पिण्डे जानो । ठौर ठौर घटमें पहिंचानो ॥
सात समुंदर घटमें कहां । कछुवा रहै बतावो जहां ॥
शेषनाग कोहि ठौर विराजै । रूपवराह कौन छबि छाजै ॥
कहा चार कायामें खान । चौरासी लख योनि बखान ॥
षट चक्कर को जो तुम जानौ । नाम सहित सबभेद बखानौ ॥
नाभि कुण्डलीका परमान । कैसे जागै कहौ बखान ॥
सहज सहज वह कहां समावै । योगी होय सो भेद बतावै ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सोतो जानै सबही भेव ॥

दोहा—कहां जु बासा पवनका, मन कौनी अस्थान ॥
कहां हियेकी आँखिहै, कैसे करै पिछान ॥

प्राण पुरुष अन्तर्गत कैसे । क्योंकरि भेद बतावो जैसे ॥
इड़ा पिंगला सुषुम्ना नारी । कैसे पलटैं बारी बारी ॥
आठ प्रकारके कुम्भक जानै । सो युक्ती मेरे मनमानै ॥
चार अवस्था[1] चार शरीरा[2] । वाणीचारि[3] नाम कह वीरा ॥
कै प्रकार अजपाका जाप । कै अंगुल श्वासाका नाप ॥
क्यों आवै अरु क्यों वह जाय । याका ज्ञानी करौ लखाय ॥
परापश्यंती मध्यमा कहा । कहा वैखरी देहु बता ॥
रणजीताका गुरु शुकदेव । सोतौ जानै सबही भेव ॥

दोहा—पद तीनौ कहु विष्णुके, स्वप्न जाग्रत भेद ॥
बावन अक्षर देह में, पुष्पद्वीप कह स्वेद ॥

कहँ इकीस काया में लोग । इन्द्र करैं कहाँ नित्तहि भोग ॥
ब्रह्मादिक शिव कहां त्रिदेवा । काविधि उनको पावै भेवा ॥
षोडश चन्द्र कहां परकाशा । बारह सूर्य्यनका कित बाशा ॥
तारामण्डल कैसें दरशैं । त्रिकुटी संयम कैसे परशैं ॥
त्रैवेणी को कैसे पावै । रं रकार कह शब्द जगावै ॥
वरणों अक्षर ओंकारा । तासे भयो सकल संसारा ॥
जाका कैसे कीजै ध्यान । कौन दिशा अरु को अस्थान ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सोतौ जानै सबही भेव ॥

दोहा—निर्गम सुगम भेदकहु, श्वास उसाँस बताव ॥
कायामें विष कहां है, बिन्दु कुण्ड दरसाव ॥

जीव ब्रह्ममें केता बीच । कौन कौन कायामें नीच ॥

---

१ जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरिया । २ स्थूल, सूक्ष्म, कारण । ३ परा, पश्यन्ति, मध्यमा, वैखरी, महाकारण ।

अमृतकुण्ड कौन अस्थान। बङ्कनालकी कहु पहिंचान॥
ब्रह्मरन्ध्रका भेद लखाव। कामधेनुका वरण बताव॥
मानसरोवर ताल बताय। तामें हंसा कैसे न्हाय॥
बिना सीप कहँ उपजै मोती। बिना घीव कहँ जगमग ज्योती॥
बिन सूरज कहँ नितही धूप। भवँरगुफाका कैसा रूप॥
शून्य शिखरका कीधरद्वारा। के खिरकी अरु कहा अकारा॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सोतौ जानै सबही भेव॥

दोहा—कहां दशौ दिगपालहैं, कहँ इन्द्रिन के देव॥
अहार वास पँचतत्त्वको, वरणि बतावो भेव॥

काशी अरु मथुरा है दोय। कहां देहमें कहिये सोय॥
अरसठि तीरथ घटमें ज्योंकर। सबका गुरु पुष्करहै क्योंकर॥
कहां बसै वाई उद्यान। कहां बन्ध लागै उद्यान॥
कहँ कपाटका कुंजी ताला। द्वादश कला कौन मतवाला॥
कण्ठ कूप उलटाहै कौन। नेजू कहा बतावो जौन॥
पनिहारी कहो कैसे भरैं। घड़िया कहां कहां भरि धरैं॥
कै प्रकार अमृत का स्वाद। कौन ठौरसों अनहद नाद॥
अग्र डोर कैसे करि पावै। मकर तारका भेद बतावै॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सो तौ जानै सबही भेव॥

दोहा—घण्ट तालका लम्बका, और अम्ब का बोल॥
चारि वस्तु ये कौन हैं, इन्हैं बतावो खोल॥

कौन कमलपर गुरू विराजै। कै प्रकार अनहद धुनि बाजै॥
कै वानी हैं अनहद तूरा। जानैगा कोइ साधूपूरा॥
तेजपुञ्जकै योजन आगे। अमरलोक कवि सूजनलागे॥
तीन शून्यकहँ चौथा शून्य। जितही भूले पढ़ि अरु गून्य॥
कै कहिये कायाके द्वारे। भिन्न भिन्न कहु मेरे प्यारे॥

बहतरहजारआठसैचौंसठिनारी। इनको भेद बहुत है भारी॥
बहत्तरि कोठे कहां कहां। नाम बतावो जहां जहां॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सोतो जानै सबही भेव॥
दोहा-सात द्वीप नौ खण्डको, भिन्न भिन्न कहु भेद॥
कायामें केहि ठौर है, कहा नाम किसहेत॥
चौरासी बाई का नावँ। कहां कहां है कैसीदावँ॥
जलका कोठा कीधर होय। कहां अग्निका कहिये सोय॥
ब्रह्मज्वाल कहु कैसे जागै। किस आसनसे निद्रा भागै॥
किन आसनसे वीरज जीतै। दशमुद्रा कैसे कर नीतै॥
नामरूप मुद्रों का जान। तीन बंध. का नाम बखान॥
चौरासी आसनका नावँ। और बतावो मन के पावँ॥
स्वर्ग मृत्यु अरु कहां पताल। कहां सत्य अरु कहां तिताल॥
चरणदास का गुरु शुकदेव। सोतो जानै सबही भेव॥
दोहा-कै प्रकारका योग है, कै प्रकारकी भक्ति॥
पांच भूमिका ज्ञानकी, सातकलाकी शक्ति॥
का नगरी का राज करै। को जीवै अरु कौन मरै॥
पेट बड़ा किसका है जान। पूजा बड़ी ताहि पहिचान॥
सबमें बड़ा कौन आहार। ताको सुरता लेहु निहार॥
ताबिन एक घड़ी नहिं रहै। भेदी होय सो भेद कहै॥
सबमें बड़ी कहा जो पूजा। जाकी सम दीखै नहिं दूजा॥
कहा सो सबको लगमलगा। कौन पुरुष सो भगमभगा॥
कहा घटै सो घटैई घटै। कहा बढ़ै सो बढ़ैई बढ़ै॥
ताहि बतावो गुरु शुकदेव। सोतौ जानै सबही भेव॥
दोहा-क्षरके कहा जु अर्थ है, अक्षरदेहु दिखाय॥
निअक्षर के रूपको, भिन्न भिन्न दरशाय॥

ओंकारका अर्थ बतावो। महत्तत्त्व का रूप दिखावो॥
मन चक्कर का कैसा रंग। मन मनसा दोउ कैसे संग॥
कौन घाटहो लहौ समाध। कित जा देखै खेल अगाध॥
चौबिस शून्य हैं जहां जहां। वज्जर ताला लागै कहां॥
वज्रद्वार बिन पावै कहां। बिन पाये उरले घर रहा॥
आठ महलका करौ बखान। कासों कहिये पद निर्वाण॥
जो तुम जानौ ऊरधरेता। तौ तुम भेद कहौ अब केता॥
दीय मुद्रा अरु मुद्रा राज। जासों सुधरैं काया काज॥
काया महलके जो तुम भेदी। ठौर ठौर कहु घटमें जेती॥
पांचतत्त्वकी इन्द्री दश। यही बतावो आगे वश॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सोतौ जानै सबही भेव॥

दोहा—चारभेद चौदह चौवारे, भेदी होय सो जानै॥
चरणदासशुकदेवकाबालक, सो यह भेदबखानै॥

छप्पय—चन्द कला कित छिपै बढ़ै जब कितसों आवै। बादर कित सों होय फटै जब कहां समावै॥ दीपलोय बुझिजाय जाय कित मोहिं बतावो। राति दिना कित जाय धूवा केहि ठौर लखावो॥ चरणदास शुकदेवसों पूंछतहौं शिरनायके। तन छूटै जीजाय कित आवत है किहि ठायँते॥

क०—देखो है तमाशा देह समुझिके विचारिलेहु, मूरख नर होय जोया बातमें हँसैगो। चीतेको मारि मृग नखशिख सुखाय गयो, बाघनीको मारिबोक सिंहको ग्रसैगो॥ बिल्लीको मारी चूहे प्रेमको नगारोदियो, दादुरहू पांच सर्प मारिकै बसैगो। कहै चरणदास ऐसे खेलसों लगाई आस, चिरियाके शीश टोरो बाजको लसैगो॥

दोहा-परलागूं शुकदेवके, और बार न जावँ ॥
गुनभेद मोसों कह्यो, सबै नावँ अरु ठावँ ॥
सो तुमसों पूँछन करौं, हौं पुरुषनके दाय ॥
यासागर संदेहको, दीजै अर्थ बताय ॥

इति श्रीस्वामीचरणदासजीकृतयोगसंदेहसागरसंपूर्णम् ॥



अथ ज्ञानस्वरोदयप्रारम्भः ।

दोहा-नमो नमो शुकदेवजी, करौं प्रणाम अनन्त ॥
तुम प्रसाद स्वरभेदको, चरणदास वर्णन्त ॥
पुरुषोत्तम परमातमा, पूरण बिस्वा बीश ॥
आदिपुरुषअविचल तुहीं, तोहिं नवाऊं शीश ॥
कुं०-क्षर ॐ सो कहत हैं, अक्षर सोहं जान ॥
निअक्षर श्वासा रहत, ताहीको मन आन ॥
ताहीको मन आन, रातादिन सुरतिलगावो ॥
आपा आप विचारि, और ना शीश नवावो ॥
चरणदास माथि कहत है, अगमनिगमकी सीख ॥
यही वचन ब्रह्मज्ञानका, मानो बिस्वा बीस ॥
ॐ सो काया भई, सोहं सो मन होय ॥
निअक्षर श्वासा भई, चरणदास भल जोय ॥
चरणदास भल जोय, खैंचि मनवां तहँ राखो ॥

क्षर अक्षर निरअक्षर, एकै दुबिधा नाखो ॥
जब दरशै यक एकही, वेष यह सभी तिहारो ॥
डार पात फल फूल, मूल सो सभी निहारो ॥
श्वासा सों सोहं भयो, सोहं सों ॐकार ॥
ॐ सों ररा भयो, साधो करो विचार ॥
साधो करो विचार, उलटि घर अपने आवो॥
घट घट ब्रह्म अनूप, समिटिकारि तहांसमावो॥
चारि वेदका भेद है, गीताका है जीव ॥
चरणदास लखि आपको, तो मैं तेरापीव ॥
दोहा-सब योगनको योग है, सब ज्ञाननको ज्ञान ॥
सर्व सिद्धिको सिद्धि है, तत्त्व स्वरनको ध्यान॥
ब्रह्मज्ञानको जाप है, अजपा सोहं साध ॥
परमहंस कोइ जानि है, ताको मतो अगाध ॥
भेद स्वरोदय सो लहै, समझै श्वास उसाँस ॥
बुरी भली तामें लखै, पवन सुरति मन गाँस ॥
शुकदेव गुरु कृपाकरि, दियो स्वरोदय ज्ञान॥
जब सों यह जानी परी, लाभ होय कै हान ॥
इडा पिंगला सुषमना, नाडी तीन विचार ॥
दहिने बायें स्वरचलैं, लखै धारणा धार ॥
पिंगल दहिने अंग है, इडा सो बायें होय ॥
सुषमन इनके बीच है, जब स्वर चालैं दोय ॥
जब स्वर चालैं पिंगला, तेहि माधि सूरजवास॥
इड़ा सो बायें अंग है, चन्द्र करत परकाश ॥
उदय अस्त तिनकी लखै, निगम सुगम विद्धि ॥
अरु पावै तत वरणको, जब वह होवे सिद्धि ॥

शुकदेवकहिचरणदाससों, थिरचरस्वरपहिंचान ॥
थिर कारजको चन्द्रमा, चर कारजको भान ॥
कृष्णपक्ष जबहीं लगै, जाय मिलत है भान ॥
शुक्लपक्ष है चन्द्रको, यह निश्चय करिजान ॥
मंगल अरु इतवार दिन, और शनीचर लीन ॥
शुभकारजकोमिलत हैं, सूरजके दिन तीन ॥
सोमवार शुक्रभलो, दिनबृहस्पतिकोदेखि ॥
चंदयोगमें सुफल हैं, चरणदास बीशेखि ॥
तिथिअरुवारविचारकरि, दहिनो बाओं अंग ॥
चरणदास स्वर जो मिलै, शुभकारज परसंग ॥
कृष्णपक्षके आदिही, तीनि तिथीतक भान ॥
फिरिचंदा फिरिभान है, फिरिचंदा फिरिभान ॥
शुक्लपक्षके आदिही, तीनि तिथी लग चन्द ॥
फिरिसूरज फिरिचन्दहै, फिरिसूरजफिरिचन्द ॥
सूरजकी तिथिमें चलै, जो सूरज परकाश ॥
सुखदेहीको करत हैं, लाभालाभ हुलास ॥
शुक्लपक्ष चन्दा चलै, परिवा लेहि निकार ॥
फल आनँद मंगल करै, देहीको सुखसार ॥
शुक्लपक्ष तिथि में चलै, जो परिवाको भान ॥
होय क्लेश पीड़ा कछू, कै दुखकै कछु हान ॥
शुक्लपक्ष तिथिमें चलै, जो परिवाको चन्द ॥
कलह करै पीडा करै, हानि तापकै द्वन्द ॥
ऊपर बायें सामने, स्वर बायेंके संग ॥
जो पूंछै शशि योगमें, तौ नीको परसंग ॥
नीचे पीछे दाहिनै, स्वर सूरजको राज ॥

जो कोइ पूछै आयकरि, तौ समझौ शुभकाज॥
दहिनोस्वरजबचलत हैं, पूछे बाये अंग॥
शुक्लपक्ष नहिं बार है, तौ निर्फल परसंग॥
जो कोइ पूंछै आयकरि, बैठि दाहिनी ओर॥
चन्द चलैं सूरज नहीं, नहिं कारज विधिकोर॥
जो सूरजमें स्वर चलै, कहै दाहिने आय॥
लग्नवारअरुतिथि मिलै, कहुकारज होइ जाय॥
जो चन्दामें स्वर चलै, बायें पूंछै काज॥
तिथिअरुअक्षरवारामिलि, शुभकारजको साज॥
सात पांच नव तीनागिन, पन्द्रह अरु पच्चीश॥
काज वचन अक्षर गिनै, भानु योगको ईश॥
चार आठ द्वादश गिनै, चौदह सोलह मीत॥
चन्दयोग के संग हैं, चरणदास रणजीत॥
कर्क मेष तुला मकर, चारौ चरती राश॥
सूरजसों चारों मिलत, चरकारज परकाश॥
मीन मिथुन कन्याकही, चौथी अरु धन मीत॥
द्विस्वभावकी सुषमना, मुरलीसुत रणजीत॥
वृश्चिकहरिवृषकुम्भपुनि, बायें स्वरके संग॥
चन्द योगको मिलतहै, थिरकारज परसंग॥
चितअपनोअसथिरकरै, नासा आगे नैन॥
श्वासा देखै दृष्टि सों, जब पावै स्वर बैन॥
पांचघड़ी पांचौ चलैं, फिरि वा चारहि वार॥
पांच तत्त्व चालै मिलै, स्वरबिच लेह निहार॥
धरती अरु आकाश हैं, और तीसरी पौन॥
पानी पावक पांचवों, करत श्वासमें गौन॥

धरती तौ सोहीं चलै, अरु पीरो रँग देख ॥
बारह अंगुल श्वासमें, सुरत निरतकर पेख ॥
ऊपरको पावक चलै, लाल वरण है भेष ॥
चारि सु अंगुलश्वासमें, चरणदास औ रेष ॥
नीचको पानी चलै, श्वेत रंग है तासु ॥
सोलह अंगुल श्वाससें, चरणदास कहै भासु ॥
हरो रंग है वायुको, तिरछी चालै सोय ॥
आठसु अंगुल श्वासमें, रणजीत मीतकारि जोय ॥
स्वर दोनों पूरण चलैं, बाहर ना परकाश ॥
श्याम रंग है तासुको, सोई तत्त्व अकाश ॥
जल पृथ्वीके योगमें, जो कोई पूछै बात ॥
शशिपरमें जो स्वरचलै, कह कारज ह्वैजात ॥
पावक अरु आकाश पुनि, वायु कभी जो होय ॥
जो कोइ पूंछै आयकारि, शुभकारज नहिंकोय ॥
जल पृथ्वी थिर काजको, चरकारजको नाहिं ॥
अग्नि वायु चरकाजको, दहिने स्वरके माहिं ॥
रोगीको पूछै कोऊ, बैठि चन्दकी ओर ॥
धरती बायें स्वर चलै, मरै नहीं विधि ओर ॥
रोगीको परसंग जो, बायें पूँछै आन ॥
चंद वंध सूरज चलै, जीवै ना वह जान ॥
बहते स्वरसों आयकारि, सून्न ओर जो जाय ॥
जो पूछै परसंगवह, रोगी ना ठहराय ॥
सून्न ओरसूं आयकर, पूंछै बहते श्वास ॥
ये निश्चै कर जानियो, रोगीको नाहिं नास ॥
शून्य ओरसों आय कै, पूछै बहते पक्ष ॥

जेते कारज जगतके, सुफल होयँ यों सब ॥
बहते स्वरसों आयकरि, शून्य ओर जो जाय ॥
जो पूछै परसंग वह, गर्गी ना ठहराय ॥
बहते स्वरसे आयकरि, जो पूछै सुन ओर ॥
जेते कारज जगतके, उलटे हों विधि ओर ॥
कै बायें कै दाहिने, जो कोइ पूरण होय ॥
पूछै पूरण ओरहीं, कारज पूरण सोय ॥
चरन एकको फल कहै, ततमत जाने सोय ॥
काल समो सोई लखै, बुरो भलो जग होय ॥
संक्रायत पुनि सप विचारै । तादिन लगनसु वारि [illegible] ॥
तबही स्वरमें करै विचारा । चलै कौन सो तत्त्व निधारा ॥
जो बायें स्वर पिरथी होई । नीको तत्त्व कहावै सोई ॥
देश वृद्धि अरु समै बनावै । परजा सुखी मेह बरसावै ॥
चारा बहुत ढोरको उपजै । नर देहीको अन्न बहु निपजै ॥
जल चालै बायें स्वर माहीं । धरती फलै मेह बरसाहीं ॥
आनँद मंगल सों जग रहै । आपतत्त्व चरणायें कहै ॥
जल धरती दोनों शुभ भाई । चरणदास शुकदेव बताई ॥
तीनतत्त्वका कहौं विचारा । स्वरमें जाको भेद निनारा ॥
लगै सब संक्रायत तबहीं । करनी वही विचारै जबहीं ॥
अग्नि तत्त्व स्वरमें जब चालै । रोग दोषमें परजा हालै ॥
काल पड़ै थोड़ासो बरसै । देश भंग जो पावक दरसै ॥
वायु तत्त्व चालै स्वर संगा । जग भयमान होय कछु दंगा ॥
अथकालथोडासोवरसै । वायतत्त्व जो स्वरमें दरसै ॥
तत्त्व अकाश स्वर चालै होई । बहुतसमै अन्न न होई ॥
काल पड़ै नृप उपजै नाहीं । तत्त्व अकाश जोहि स्वरमाहीं ॥

दोहा–चैत महीना मध्यमें, जबहीं परिवा होय ॥
शुक्लपक्ष तादिन लगै, प्रात श्वासमें जोय ॥
भोरहि परिवाको लखै, पृथ्वी होय सुथान ॥
होय समौ परजासुखी, राजा सुखी निदान ॥
नीर चलै जो चन्दमें, यही समैकी जीत ॥
घन बरसैं परजा सुखी, संवत् नीको मीत ॥
पृथ्वी पानी समौ जो, बहै चन्द अस्थान ॥
दहिने स्वरमें जो बहै, समौ सुमध्यम जान ॥
भोरहि जो सुषमन चलै, राज होय उतपात ॥
देखनवारो विनश है, और काल पड़िजात ॥
राज होय उत्पात पुनि, पडै काल विसवास ॥
मेह नहीं परजा दुखी, जो हो तत्त्व अकास ॥
श्वासामें पावक चलै, परै काल जब जान ॥
रोगहोय परजा दुखी, घटै राजको मान ॥
भय कलेश हो देशमें, विग्रह फैलै अत्त ॥
परै काल परजा दुखी, चलै वायुको तत्त ॥
संक्रायत अरु चैतको, दीन्हों भेद लखाय ॥
जगतकाज अब कहत हूं, चन्द सूरको न्याय ॥

ब्याहदान तीरथ जो करै। वस्तर भूषण घर पद धरै ॥
बायें स्वरमें ये सब कीजै। पोथी पुस्तक जो लिखिलीजै ॥
योगाभ्यासरु कीजै प्रीत। औषधि बाडी कीजै मीत ॥
दीक्षा मंतर बोवै नाज। चन्द्र योग थिर बैठे राज ॥
चन्द्र योगमें अस्थिर जानौ। थिरकारज सबही पहिंचानौ ॥
करै हवेली छप्पर छावै। बाग बगीचा गुफा बनावै ॥

हाकिम जाय कोटमें वरै। चन्द्र योग आसन पग धरै॥
चरणदास शुकदेव बतावै। चन्द्रयोग थिरकाज कहावै॥

दोहा—बायें स्वरके काज ये, सो मैं दिये बताय॥
दहिने स्वरके कहतहौं, ज्ञानस्वरोदय गाय॥

जो खांडो कर लीयो चाहै। जाकर बैरी ऊपर बाहै॥
युद्ध वाद रण जीतै सोई। दहिने स्वरमें चालै कोई॥
भोजन करै करै असनाना। मैथुन कर्म ध्यान परधाना॥
बही लिखै कीजै व्योहारा। गंज घोडा वाहन हथियारा॥
विद्या पढै नई जो साधै। मंतर सिद्धि ध्यान आराधै॥
वैरीभवन गवन जो कीजै। अरु काहूको ऋण जो दीजै॥
ऋण काहूपै जो तू मांगै। विप अरु भूत उतारन लागै॥
चरणदास शुकदेव विचारी। ये चर कर्म भानुकी नारी॥

दोहा—चरकारजको भानु है, थिरकारजको चंद॥
सुषमनचलतनचालिये, तहां होय कुछ द्वंद॥
गावँ परगने खेत पुनि, ईधर ऊधर मीत॥
सुषमनचलतनचालिये, बरजत है रणजीत॥
क्षण बायें क्षणदाहिने, सोई सुषमन जानि॥
ढील लगै कै ना मिलै, कै कारजकी हानि॥
होय क्लेश पीडा कछू, जो कोई कहिं जाय॥
सुषमनचलतनचालिये, दीन्हों तोहिं बताय॥
योग करौ सुषमन चलै, कै आतमकोध्यान॥
और काज कोई करै, तौ कुछ आवै हान॥
पूरव उत्तर मत चलै, बायें स्वर परकाश॥
हानि होय बहुरै नहीं, आवनकी नहिं आश॥
दहिने चलत न चालिये, दक्षिण पश्चिमजानि॥

जोरजाय बहुरै नहीं, तहां होय कछु हानि ॥
दहिने स्वरमें जाइये, पूरब उत्तर राज ॥
सुख संपति आनँद करै, सभी होय सुखकाज ॥
बायें स्वरमें जाइये, दक्षिण पश्चिम देश ॥
सुख आनँद मंगल करै, जो जावे परदेश ॥
दहिने सेती आय करि, दहिने पूँछे धाय ॥
जो दहिनो स्वरबंध है, कारज अफल बताय ॥
दहिने सेती आय करि, बायें पूछे कोय ॥
जो बावों स्वर बंध है, सुफल काज नहिं होय॥
जब स्वर भीतरको चलै, कारज पूछै कोय ॥
पैज बांधि वासों कहौ, मनसा पूरण होय ॥
जब स्वर बाहरको चलै, तब कोई पूछै तोर ॥
वाको ऐसे भाषिये, विधि नहिं काज करोर॥
बाईं करवट सोइये, जल बायें स्वर पीव ॥
दहिने स्वर भोजन करै, तौ सुख पावै जीव ॥
बायें स्वर भोजन करै, दहिने पीवै नीर ॥
दश दिन भूलो यों करे, आवै रोग शरीर ॥
दहिने स्वर झाड़े फिरै, बायें लघुशंकाय ॥
युक्ती ऐसी साधिये, दोन्हों भेद बताय ॥
चन्द चलावै द्योसको, रैनि चलावै सूर ॥
नित साधन ऐसे करै, होय उमर भरपूर ॥
जितनोहीं बावों चलै, सोई दाहिनो होय ॥
दशश्वासा सुषमन चलै, ताहि विचारौ लोय ॥
आठ पहर दाहिनो चलै, बदलै नहीं जु पौन ॥
तीन बरस काया रहै, जीव करै फिरि गौन ॥

सोलह पहर चलै जभी, श्वास पिंगला माहिं ॥
युगल बरस काया रहै, पीछे रहनो नाहिं ॥
तीन रात अरु तीन दिन, चलै दाहिनो श्वास ॥
संवत भर काया रहै, पाछे होवै नास ॥
सोलहदिननिशिदिनचलै, श्वास भानुकी ओर॥
आयु जान इकमासकी, जीव जाय तन छोर ॥
नौ भृकुटी सत्ते श्रवण, पांच तारका जान ॥
तीन नाक जिह्वा इकै, काल भेद पहिंचान ॥
भेद गुरू सों पाइये, गुरु बिन लहै न ज्ञान॥
चरणदास यों कहत है, गुरुपर वारौं प्रान ॥
एक मास जो रैनि दिन, भानु दाहिनो होय ॥
चरणदास यों कहत है, नर जीवै दिन दोय ॥
नाड़ी जो सुषमन चलै, पांच घड़ी ठहराय ॥
पांच घड़ी सुषमन बहै, तबहीं नर मरिजाय ॥
नहीं चन्द्र नाहिं सूर है, नहीं सुषुम्ना बाल ॥
मुखसेती श्वासा चलै, घड़ी चारमें काल ॥
चारि दिनाकै आठ दिन, बारह कै दिन बीश ॥
ऐसे जो चंदा चलै, आयु जान बड़ ईश ॥
तीनरात अरु तीन दीन, चालै तत्त्व अकाश ॥
एक बरस काया रहै, फेर काल विसवाश ॥
दिनको तौ चन्दा चलै, चलै रातको सूर ॥
यह निश्चयकरि जानिये, प्राण गमन बहुदूर ॥
रात चलै स्वर चन्दमें, दिन को सूरज बाल ॥
एक महीना यों चलै, छठे महीने काल ॥
जब साधू ऐसी लखै, छठे महीने काल ॥

आगेही साधन करै, बैठि गुफा ततकाल ॥
ऊपर खैंचि अपानको, प्राण अपान मिलाय ॥
उत्तम करै समाधिको, ताको काल न खाय ॥
पवन पियै ज्वाला पचै, नाभितले करि राह ॥
मेरुदंडको फोरिकै, वसै अमरपुर जाइ ॥
जहां काल पहुँचै नहीं, यमकी होय न त्रास ॥
नभमण्डलकोजायकरि, करै उनमुनी वास ॥
जहां काल नहिं ज्वालहै, छुटै सकल सन्ताप ॥
होय उनमनी लीन मन, बिसरै आपाआप ॥
तीनों बन्ध लगायकै, पञ्चवायुको साध ॥
सुषमन मारग ह्वै चलै, देखै खेल अगाध ॥
शक्ति जाय शिवमें मिलै, जहां होय मन लीन ॥
महा खेचरी जो लगै, जानै ज्ञान प्रवीन ॥
आसनपद्मलगायकरि, मूलबन्धको बाँधि ॥
मेरुदण्ड सीधो करै, सुरति गगनको साधि ॥
चन्द सूर दोउ सम करै, ठोढ़ी हिये लगाय ॥
षट चक्करको वेधिकरि, शून्य शिखरको जाय॥
इड़ा पिंगला साधिकरि, सुषमनमें करिवास ॥
परम ज्योति झिलमिल तहां, पूजैमनविश्वास ॥
जिन साधन आगे करी, तासों सब कुछ होय ॥
जब चाहै जबहीं तभी, काल बचावै सोय ॥
तरुण अवस्थायोगकरि, बैठि रहै मन जीत ॥
काल बचावै साध वह, अन्तसमय रणजीत ॥
सदा आपमें लीन रहु, करिकै योगाभ्यास ॥
आवत देखै काल जब, नभमण्डलकर वास ॥

शनै शनै सो साधि करि, राखै प्राण चढ़ाय ॥
पूरो योगी जानिये, ताको काल न खाय ॥
पहिले साधन ना कियो, नभमण्डलको जान ॥
आवत जानै काल जब, कहा करै अज्ञान ॥
योग ध्यान कीन्हों नहीं, ज्वान अवस्था मीत ॥
आगम देख कालको, कहा सकै वह जीत ॥
कालजीत हरिसो मिलै, शून्य महल अस्थान ॥
आगे जिन साधन करी, तरुण अवस्था जान ॥
काल अवधि बीते तभी, जबै बीति सब जाय ॥
योगी प्राण उतारिये, लेहि समाधि लगाय ॥
काल जीति जगमें रहै, मौत न व्यापै ताहि ॥
दशोद्वारको फोरिकै, जब चाहै तब जाहि ॥
सूरजमण्डल चीरिकै, योगी त्यागै प्राण ॥
सायुजमुक्ति सोई लहै, पावै पद निर्वाण ॥
कृष्णपक्षके मध्यमें, दक्षिण होय जु भान ॥
योगीवपु नहिं छाँडिये, राज होय फिरि आन ॥
राजपाय हरि भक्तिकर, पूरबली पहिंचान ॥
योग युक्ति पावै बहुरि, दूसर मुक्ति निदान ॥
उतरायण सूरज लखै, शुक्लपक्षके माहिं ॥
योगी काया त्यागिये, यामें संशय नाहिं ॥
मुक्ति होय बहुरै नहीं, जीव खोज मिटिजाय ॥
बुन्द समुन्दर मिलि रहै, दुतिया ना ठहराय ॥
दक्षिणायन सूरज रहै, रहै मासषट जानि ॥
फिरिउतरायणजायकरि, रहै मास षट मानि ॥
दोनों स्वरको शुद्ध करि, श्वासामें मन राखि ॥

भेद स्वरोदय पायकरि, तब काहूसों भाखि॥
जो रण ऊपर जाइये, दहिने स्वर परकाश॥
जीति होय हारै नहीं, करै शत्रुको नाश॥
दुर्जनको स्वर दाहिनो, तेरो दहिनो होय॥
जो कोई पहिले चढ़ै, खेत जीति है सोय॥
सुषमन चलतन चाहिये, युद्ध करनको मीत॥
शीश कटावै कै फँसै, दुर्जन होवै जीत॥
जो बायें पृथ्वी चलै, चढ़ि आवै कोइ भूप॥
आप बैठि दल पेलिये, बात कहत हौं गूप॥
जल पृथ्वी स्वरमें चलै, सुनै कान दै बीर॥
सुफलकाज दोनों करै, कै धरती कै नीर॥
पावक अरु आकाशतत,वायु तत्त्व जो होहिं॥
कछू काज नहिं कीजिये, इनमें बरजौं तोहिं॥
दहिनो स्वर जब चलतहै, कहीं जाय जो कोय॥
तीन पाँव आगे धरै, सूरजको दिन होय॥
बायें स्वरमें जाइये, बायें पग धरि चार॥
बावों डग पहिले धरै, होय चन्द्रको बार॥
दहिने स्वरमें जाइये, दहिने डग धरि तीन॥
बायें स्वरमें चारि डग, बावों कर परवीन॥
गर्भवतीके गर्भको, जो कोइ पूंछै आय॥
बाल होय कै बालकी, जीवै कै मरिजाय॥
परिक्षा बालक होनकी, जो कोउ पूंछै तोहिं॥
बायें कहिये छोकरी, दहिने बेटा होहिं॥
दहिने स्वरके चलतही, जो वह पूंछै आय॥
वाको बावों स्वर चलै, बालकहो मरिजाय॥

दहिने स्वरके चलतही, जो वह पूछै वैन ॥
वाहूको दहिना चले, लरिका हो सुख चैन ॥
बायें स्वरके चलतही, आय कहै जो कोय ॥
बेटी ह्वै जीवै नहीं, वाको कहिनो होय ॥
बायें स्वरके चलतही, जो वह पूछै बात ॥
वाहूको बायाँ चले, पुत्रि होय कुशलात ॥
तत्व अकाशके चलतही, कहै गर्भकी आय ॥
होय नपुंसक हींजड़ा, कै सतवाँसो जाय ॥
लेन परीक्षा गर्भकी, जो कोइ पूछै आय ॥
अग्नि होय जो ता समै, ओछाही गिरिजाय ॥
छण बायें छण दाहिने, दो स्वर सुषमन होय ॥
पूछन वारे सों कहौ, बालक उपजै दोय ॥
वायु तत्त्वके चलतही, जो कोइ पूछै आय ॥
छाया तो वाहै नहीं, पेट माहिं बिलाय ॥
जो कोइ पूछै आयकै, याको गर्भ कि नाहिं ॥
दहिनो बायाँ स्वरलखै, साधि श्वासके माहिं ॥
सन्य ओर जो आयकरि, है पूछै जो कोय ॥
सन्य ओर तौ गर्भ है, बहते स्वर नहिं होय ॥
इड़ा पिंगला सुषमना, नाड़ी कहिये तीन ॥
सूरज चन्द्र बिचारिकै, रहै श्वास लवलीन ॥
जैसेकछुआसिमिटिकरि, आपी माहिं समाय ॥
ऐसे ज्ञानी श्वाससें, रहै सुरति लवलाय ॥
श्वास बाण वैकोडकी, आव जान नरलोय ॥
बीतजाय श्वासा जबै, तबहीं मृत्यक होय ॥
इक्कस सहस छसै चलै, रात दिना जो श्वास ॥

बीसा सौ जीवै वरष, होय अघनको नास ॥
अकाल मृत्यु कोई मरै, होयकरि भुक्तै भूत ॥
श्वास जहां बीतै सभी, जब आवै यमदूत ॥
चारौं संयम साधिकरि, श्वासा युक्ति चलाय ॥
अकाल मृत्यु आवै नहीं, जीवै पूरी आय ॥
सूक्षम भोजन कीजिये, रहिये ना पड़ि सोय ॥
जल थोरो सो पीजिये, बहुत बोल मत खोय ॥

कुण्डलिया।

मोक्षमुक्तितुमसोंचहतहो, तजो कामना काम ॥
मनकी इच्छा मेटिकरि, भजो निरञ्जन नाम ॥
भजो निरञ्जन नाम, तत्त्वदेहअध्यासमिटावो॥
पञ्चनके तजि स्वाद, आपमें आप समावो ॥
जब छूटै झूठी देह, जैसे के तैसे रहिया ॥
चरणदास यहि मुक्ति, गुरूने हमसों कहिया ॥

दोहा–देह मरै तू है अमर, पारब्रह्म है सोय ॥
अज्ञानी भटकत फिरै, लखै सो ज्ञानी होय ॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान ॥
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान ॥
डोलन बोलन सो बानो, भक्षण करन अहार ॥
दुख सुख मैथुन रोगसब, गरमी शीत निहार ॥
जाति वरण कुल देहकी, सूरति मूरति नाम ॥
उपजै विनशै देहसो, पांच तत्त्व को गाम ॥
पावक पानी वायुहै, धरती और अकास ॥
पांच तत्त्वके कोटमें, आय कियो तैं वास ॥
पांच पचीसो देह सँग, गुण तीनों हैं साथ ॥

घट उपाधि सो जानिये, करत रहैं उतपात ॥
जिह्वा इन्द्री नीरकी, नभकी इन्द्री कान ॥
नासा इन्द्री धरणिकी, करि विचार पहिंचान ॥
त्वचा सुइन्द्री वायुकी, पावक इन्द्री नैन ॥
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुख चैन ॥
निद्रा संगम आलकस, भूँख प्यास जो होय ॥
चरणदास पाँचौं कही, अग्नि तत्त्व सौं जोय ॥
रक्त बिन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान ॥
चरणदास परकिरति ये, पानी सों पहिंचान ॥
चाम हाड़ नाड़ी कहूं, रोम जान अरु मास ॥
पृथ्वीकी परकिरति ये, अन्त सबनको नास ॥
बल करना अरु धावना, उठना अरु संकोच ॥
देह बढ़ै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥
काम क्रोध मोहलोभ भै, तत आकाश को भाग॥
नभकी पांचौ जानिये, नित न्यारो जू जाग ॥
पांच पचीसौ एकही, इनके सकल स्वभाव ॥
निर्विकार तू ब्रह्महै, आप आपको पाव ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार ॥
आपनि देही मान मत, यही ज्ञान तत सार ॥
शस्तर छेदिसकै नहीं, पावक सकै न जारि ॥
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥
जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय ॥
जीव विनाशी नित्य है, जानैं विरला कोय ॥
आँख नाक जिह्वा कहूं, त्वचा जान अरु कान॥
पांचौ इंद्री ज्ञानये, जानै जान सुजान ॥

गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पाँव लखि लेह ॥
पांचौ इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह ॥
पृथ्वी काल जे ठौर है, मुखै जानिये द्वार ॥
पीलो रँग पहिंचानिये, पीवन खान अहार ॥
पित्ते में पावक रहै, नैन जानिये द्वार ॥
लालरंग है अग्नि को, मोह लोभ आहार ॥
जलको बासा भाल है, लिंग जानिये द्वार ॥
मैथुन कर्म अहार है, धौलो रंग निहार ॥
पवन नाभिमें रहतहै, नासा जानि दुआर ॥
हरो रंगहै वायुको, गंध सुगन्ध अहार ॥
अकाश शीश में वासहै, श्रवण दुआरो जान ॥
शब्द कुशब्द अहारहै, ताको श्याम पिछान ॥
कारण सूक्षम लिंगहै, अरु कहियत अस्थूल ॥
शरीर तीनसों जानिये, मैं मेरी जड़ मूल ॥
चितबुधिमनअहँकारजो, अन्तःकरण सुचार ॥
ज्ञान अग्निसों जारिये, करि करि मीत विचार ॥
शब्द स्पर्शरूगन्ध है, अरु कहियत रसरूप ॥
देह कर्म्म तनमात्रा, तू कहियत निहरूप ॥
निराकार अद्वै अचल, निरवासी तू जीव ॥
निरालम्ब निर्वैरसो, अज अविनाशी सीव ॥
बाएँ कोठा अग्निको, दहिने जल परकास ॥
मन हिरदय अस्थानहै, पवन नाभिमें वास ॥
मूल कमलदल चारको, लाल पैंखुरी रंग ॥
गौरीसुत वासो कियो, छस्यै जाप इकंग ॥
षट्दलकमलधियरेवरण, नाभी तल संभाल ॥

षट्सहस्र जपि जापले, ब्रह्म सावित्री नाल ॥
दश पैंखरी कमलहै, नील वरण सो नाम ॥
विष्णू लक्ष्मीवास कियो, षट्सहस्र जाप ॥
अनहद चक्र हृदयरहै, द्वादश दल अरु श्वेत ॥
षट्सहस्र जपि जापले, शिव शक्ती तहँ हेत ॥
षोडशदलको कमल है, कण्ठ वास शशिरूप ॥
जाप सहस्र जहां जपै, भेद लहै अति गूप ॥
अग्निचक्र दोदल कमल, त्रिकुटी धाम अनूप ॥
जाप सहस्र जहां जपै, पावै ज्योति स्वरूप ॥
दल हजारको कमल है, नभ मण्डलमें वास ॥
जाप सहस्र जहां जपै, तेज पुंज परकास ॥
योग युक्तिकरि खोजिले, सुरत निरत करचीन ॥
दशप्रकार अनहद बजै; होय जहां लवलीन ॥

कुण्डलिया।

एक भँवर गुंजारसी, दूजे घुँघुरू होय ॥
तीजे शब्द जु शंखका, चौथे घण्टा सोय ॥
चौथे घण्टा सोय, पांचवें ताल जु बाजै ॥
छठे सुमुरली नाद, सातवें भेरि जु गाजै ॥
अठयें शब्द मृदंगका, नाद नफीरी नोय ॥
दशवें गरजनि सिंहसी, चरणदास सुनिलोय ॥

दोहा–दशप्रकार अनहद धुरैं, जित योगी होयलीन ॥
इन्द्री थकि मनुआँ थकै, चरणदास कहि दीन ॥
तीन बन्ध नौनाटिका, दश वाई को जान ॥
प्राण अपान समान है, अरु कहियत उदान ॥
व्यानवायु अरुकिरकिरा, कूरम बाई जीत ॥

नाग धनंजय देवदत, दश बाई रणजीत ॥
नवों द्वारको बन्ध करि, उत्तम नाडी तीन ॥
इडा पिंगला सुषमना, केलिकरैं परबीन ॥
करते प्राणायाम के, तरिगये पतित अनेक ॥
अनहद ध्वनिके बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥
पूरक करि कुम्भक करै, रेचक पवन उतार ॥
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्ष्म करै आहार ॥
धरती बन्ध लगायकै, दशौ बन्ध को रोक ॥
मस्तक प्राण चढ़ायकरि, करै अमरपुर भोग ॥
पांचौ मुद्रा साधि करि, पावै घट को भेद ॥
नाडी शक्ति चढाइये, षट चक्करको छेद ॥
योग युक्ति कै कीजिये, कै अजपा को ध्यान ॥
आपा आप विचारिये, परम तत्त्वको ज्ञान ॥
शूद्ररु वैश्य शरीर है, ब्राह्मण औ रजपूत ॥
बूढा बाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥
काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ॥
काया छुटि सूरत मिटे, तू परमातम नित्त ॥
पाप पुण्य आशा तजौ, तजौ मान अरु थाप ॥
काया मोह विकार तजि, जपै सु अजपा जाप ॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ॥
जाको ढूँढत फिरत है, सो तू आपहि आप ॥
इच्छा दुई बिसारिकै, होय क्यों न निर्वास ॥
तू तौ जीवन्मुक्त है, तजो मुक्तिकी आस ॥
पवन भई आकाश सों, अग्नि वायु सों होय ॥
पावक सों पानी भयो, पानी धरती सोय ॥

धरती मीठे स्वाद है, खारी स्वाद सुनीर ॥
अग्नि चरफरो स्वादहै, खट्टो स्वाद समीर ॥
खट्टा मीठा चरफरा, खारी पर मन होय ॥
जबहीं तत्त्व विचारिये, पांच तत्त्वमें कोय ॥
स्वाद नाय अरु रंग है, और बताई चाल ॥
पांच तत्त्वकी परख यह, साधि पाव ततकाल ॥
तिरकोनी पावक चलै, धरती तौ चौकोन ॥
शून्यस्वभावअकाशको, पानी लांबो गोल ॥
अग्नि तत्त्व गुण तामसी, कही रजोगुण वाय ॥
पृथ्वी नीर सतोगुणी, नभहै अस्थिर भाय ॥
नीर चलै जब श्वाशमें, रण ऊपर चढ़िमीत ॥
वैरीको शिर काटकरि, घर आवै रणजीत ॥
पृथ्वीके परकाशमें, युद्ध करै जो कोय ॥
दोउ दल रहैं बराबरी, हारि वायुमें होय ॥
अग्नि तत्त्वके बहतही, युद्ध करन मति जाव ॥
हारिहोय जीतै नहीं, अरु आवै तनघाव ॥
तत्व अकाशमें जो चलै, तौ ह्वाईं रहिजाय ॥
रणमाहीं काया छुटै, घरनहिं देखै आय ॥
जल पृथ्वीके योगमें, गर्भ रहै सो पूत ॥
वायु तत्वमें छोकरी, आँबर सूतक सूत ॥
पृथ्वी तत्वमें गर्भ जो, बालक होवै भूप ॥
धनवन्ता सोई जानिये, सुन्दर होय स्वरूप ॥
अग्नि तत्व जब चलत है, कभी गर्भ रहिजाय ॥
गर्भ गिरै माता दुखी, हो माता मरिजाय ॥

वायु तत्व स्वर दाहिने, कर पुरुष जब भोग ॥
गर्भ रहै जो ता समै, देही आवै रोग ॥
आसनसंयमसाधिकरि, दृष्टि श्वासके माहिं ॥
तत्वभेद यों पाइये, बिन साधे कुछ नाहिं ॥
आसन पद्म लगायकै, एक बरत नित साध ॥
बैठे लेटे डोलते, श्वासाही आराध ॥
नाभिनासिकामाहिंकरि, सोहं सोहं जाप ॥
सोई अजपा जाप है, छुटै पुण्य अरु पाप ॥
भेद स्वरोदय बहुत है, सूक्षम कह्यो बनाय ॥
ताकोसमझि विचारिले, अपनो चितमनलाय ॥
धरणि टरै गिरिवर टरै, ध्रुव टरै सुन मीत ॥
वचन स्वरोदय ना टरै, कहैं दास रणजीत ॥
शुकदेवगुरूकी दयासों, साधु दयासों जान ॥
चरणदास रणजीतने, कह्यो स्वरोदय ज्ञान ॥

छप्पै।

डहरेमें मेरो जनम नाम रणजीत बखानो ॥
मुरली को सुत जान जात दूसरि पहिंचानो ॥
बाल अवस्था माहिं बहुरि दिल्लीमें आयो ॥
रमत मिले शुकदेव नाम चरणदासधरायो ॥
योगयुक्तिहरिभक्तिकरि ब्रह्मज्ञानदृढकरिगह्यो ॥
आतमतत्वविचारिकै अजपा में सनिमन रह्यो ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृतज्ञानस्वरोदयसंपूर्णम् ।

॥ श्रीहंसावताराय नमः ॥



श्रीस्वामिचरणदासकृतपंचउपानिषद्।

अथ अथर्वणवेदीयहंसनादप्रारंभ।

(उपनिषद्-भाषा.)

दोहा-वन्दन श्रीशुकदेवको, उनको हियमें लाय ॥
छिप्यो भेद परगट कियो, परमारथके दाय ॥
सहंसकृत भाषा करी, ताको यह दृष्टान्त ॥
खोलि खोलि सबही कही, समझे छूटै भ्रान्त ॥
ज्यों कूये सों नीर लै, बाहर दियो भराय ॥
बिना यतन कोई पियो, तिरषावन्त अघाय ॥
पौदीन्ही शुकदेवने, मैं जल काढ़नहार ॥
प्यासा कोइ न जाइयो, टेरौं बारम्बार ॥
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जो, अरु शूद्रहु जो होय ॥
वह पीवैगा हेत करि, बहु प्यासा जो कोय ॥
मुक्तिनीरकी प्यास जो, काहूहीको होय ॥
और मनुष जग प्यासमें, रहे जु मृत्युक होय ॥

यह जग ऐसो जानिये, मृगतृष्णाको नीर ॥
निकट जाय प्यासा कोई, कभी न भागै पीर ॥
उनकी प्यास बुझै नहीं, होय नहीं हिय चैन ॥
ज्ञान सुधा तजि जातहै, धोखेको जल लैन ॥
ज्ञान नीर तिरपतभये, निश्चल बैठे दास ॥
संसारी प्यासे गये, पूरीभई न आस ॥
सहंसकृत या कूपसम, भाषा नीर निकास ॥
प्याऊं जिज्ञासूनको, तिनकी भगै पियास ॥

अष्टपदी ।

वेदहीकी उपनिषद् जु मैं भाषाकरी । जो कुछ था वहि माहिं सोई जैसे धरी ॥ सुनि समझै मन माहिं और करनी करै । आवागमन मिटजाय नहीं देही धरै ॥ जगकी बाधा छूटि मुक्ति पद्पावई । जाग्रत पहुँचै ठौर स्वप्न बिसरावई ॥ तिमिर सभी भजिजाय उजारा होयहै । सूझै आतमरूप द्वैतता खोयहै ॥ उपजै अतिआनन्द द्वन्द दुख जायहै । तिरपति निर्मलज्ञान विज्ञान अघायहै ॥ जोपै करै विचार और गुरुसों लहै । वाकी गहनीगहै और रहनीरहै ॥ गुरु शुकदेव प्रताप सो चितते गाइया । चरणनदासा होय सबन शिर नाइया ॥ ११ ॥

दोहा—पूजे ऋषि मुनि देवता, पूजे इन्द्रहु भूप ॥
पूजा सबही सृष्टिको, देखा हरिके रूप ॥
सर्वत्रहि प्रभु देखिकारि, सबको शीश नवाय ॥
उपनिषदैं जो वेदकी, परगट कहीं बनाय ॥

अष्टपदी ।

प्रथम प्रगट करि दई छिपेही भेदकी । हंसनाद अहिनाम अथर्वणवेदकी ॥ गौतम ऋषिकारि चाव ऋषीश्वरपै गये । संत

सुजान जु नाम बहुत आदरकिये ॥ गौतम स्तुतिकरी बहुतही प्रीतिसों। फिरि पूंछी यह बात जु लघुता रीतिसों ॥ परमेश्वर पहिंचान मोहिं समुझाइये। मुक्तहोनके पन्थ सबै जु दिखाइये ॥ ह्वैकर बहुत प्रसन्न ऋषीश्वर बोलिया। गौरा अरु महदेवकी चरचा खोलिया ॥ सब देवनके देव महादेवहैं सही। उपनिषदें जो वेद कि गौरासों कही ॥ सो मैं तुमसों कहौं प्रीतिके भावसों। तुमहूं नीके सुनौ अधिकही चावसों ॥ गुप्त महा यह भेद हियेमें राखिये। जो जड़ मूरख होय तासु नाहिं भाखिये ॥

दोहा—हरिभक्ता अरु गुरुमुखी, तप करनेकी आस ॥
सतसंगी सांचायती, ताहि देहु चरणदास ॥

अष्टपदी।

अब मैं कहौं सँभाल सुरत ह्यां दीजिये। यह तौ अचरज कथा श्रवण सुनि लीजिये ॥ वही श्वास कहि हंस आय अरु जाय है। पूरा सतगुरु मिलै तौ भेद लखायहै ॥ जो कोउ याको समझि करै अरु ध्यानहीं। ऋद्धि सिद्धि सुख होंहिं जु उपजै ज्ञानहीं ॥ अन्त मुक्तिही होय अभैपदमें रहै। बहुरो जन्म न होय परम आनँदलहै ॥ अब मैं वरणौं हंस और परमहंसही। जो समझै ह्वै ब्रह्म जाय सब संशही ॥ हंस हंस जो मन्त्र अर्थ पहिंचानिये। वह मैं हूं यों कहै निश्चय करि जानिये ॥ यह मंतर सब माहिं सदाही भरि रह्यो। कोटिनमें कोइ जानि धान सोइ धरि रह्यो ॥ जैसे काठमें आगि तिलौंमें तेलहै। तैसे सब घटमाहिं इसीका मेल है ॥

दोहा—दूध मध्य ज्यों घीव है, मेहँदी माहीं रंग ॥
यतन बिना निकसै नहीं, चरणदास सो ढंग ॥

जो जानै या भेदको, और करै परवेश॥
सो अविनाशी होतहै, छूटै सकल कलेश॥

अष्टपदी।

तन मथनेको यतन कहूं अब जानिये। ज्यों निकसै ततसार बिलावन ठानिये॥ पहिले चक्कर[1] जानि मूल द्वारे विषे। जितही पावँकी एँडीसूं बन्ध देरखे॥ मूल चक्रसों खैंचि अपान चलाइये। दूजे[2] चक्कर पास जु आनि फिराइये॥ दहिनी ओरसों तीनि लपेटे दीजिये। तीजे[3] चक्कर माहिं गमन फिरि कीजिये॥ चौथे[4] चक्कर माहिं पवन जो लाइये। बहुरौ पँचवें[5] चक्रमें जू पहुँचाइये॥ छठवें[6] चक्कर माहिं जु ताहि चढ़ाइये। सो त्रिकुटीके मध्य तहां ठहराइये॥ रोंकै त्रिकुटी माहिं प्रानके वायुको। षटचक्करको छेदि चढ़ै जब धायको॥ अपान वायु चढ़िजाय वहीं अस्थान है। प्राणवायु ह्वै जाय साधु कोइ जानहै॥ रोंकै प्राणहीं वायु त्रिकुटी मध्यही। ओं का करै ध्यान शीशमें गध्यही॥ यह तो ऊंचा ध्यान जु अधिक अनूपही। चरणहिं दासा होय जु ब्रह्मस्वरूपही॥

दोहा—नाम ब्रह्मका है नहीं, है तो वह ओंकार॥
जानै आपनको वही, मैं हौं तत्त्व अपार॥

अष्टपदी।

अनहद शब्द अपार दूरसों दूर है। चेतन निर्मल शुद्ध देह भरपूरहै॥ ताहि निअक्षर जान और निष्कर्म है। परमातम तोहि मानि वही परब्रह्म है॥ हृदय कमलके माहिं ध्यान सोहं करै। वाहिको अजपा जान सुरति मन लै धरै॥ बिनहिं जपे

१ मूलाधारचक्र। २ स्वाधिष्ठान। ३ मणिपूरक। ४ अनाहत। ५ विशुद्ध। ६ सहस्रदल पद्म।

जप होय सुसाँची बातही। सहस इकीस अरु छस्सै जहाँ दिनरातही॥ याको कीजै ध्यान होतहै ब्रह्मही। धारै तेज अपार जाहि सब संसही॥ वा पटतर कोइ नाहिं जु योंही जानिये। चन्द सूर्य अरु सृष्टिके माहिं पिछानिये॥ सो वह तेज अपार आपको मानिये। निश्चय अरु वहि साँच जु मनमें आनिये॥ जबलग वाही भेद जो जानाथा नहीं। जीवातम अरु हंस होरहाथा तहीं॥ जभी अगोचर भेद जु मनमाहीं लहा। परमातम परमहंसरूप निश्चय भया॥

दोहा–जो जीवातम सो भया, परमातम अरु ब्रह्म॥
वाकी सरवरिको करै, पाई परै न गम्य॥
पहुँचै ना वा तेजको, कोटि कोटिही भान॥
चरणदास कोइ जानहीं, ताको निर्मलज्ञान॥

अष्टपदी।

परम ज्योतिको प्रापत सो नर होतहै। जिन मन जीता होय लगाया गोतहै॥ जिन मन जीता नाहिं विषय आशावहै हृदय कमलदल आठ ह्वै फिरता रहै॥ अष्ट पँखरी जान जु आठौ अंगही। वही दिशाहैं आठ करै मनभंगही॥ पँखरी पूरव दिशा जबै मनजात है। तब इच्छा हिय पुण्य करनकी आत है॥ अग्नेय दिशा पँखरी जब जावै मना। ऊंघ नींद अरु आलस जित आवै घना॥ दक्षिणाहिं जु दिशा पँखरी परमन राजई। उपजै बहुत किरोध कठोरता साजई॥ दिशा जु नैर्ऋत पँखरी पैमन रंगही। पापकरनकी उपजै हिये तरंगही॥ पश्चिमदिशा जु पँखरी पैमन आरहै। होय-खुशी परफुल्ल जु लीलाको चहै॥

दोहा-बायव दिशा जु पैंखरी, जब मन पहुँचै जाय ॥
हलन चलन उपजै हिये, बैठे देहि उठाय ॥

मनकी गति—(अष्टपँखुरी कमलपर)

अष्टपदी ॥ उत्तरदिशा जु पैंखरी पै मनआवई । मैथुनकरन कि चाह हिये उपजावई ॥ ईशानदिशा पैंखरीपर मन आवै जभी । दान करनकी चाह अधिक उपजै तभी ॥ हृदयकमलके बीच जबै मन जारहै । उपजे त्याग वैराग तजन जगको कहै ॥ हृदयकमलको छेदि बाहर मन फिरतही । आंसेपांसे जानि होय जाग्रतही ॥ हृदयकमलके घेरके मध्यम जातही । जब आवत है स्वप्न जहां बहु भाँतिही ॥ घान बराबर छेदि तहां मनजातहै । होहिं सबै गुण लीन सुषुप्ती आतहै ॥ हृदयकमलको छौंड़ि होय मन न्यारही । तुरियामें मन जात जु तत्त्व अपारही ॥ यों जीवातम जान जु अनहद लीनहो । सो परमातम होय जीवता जायखो ॥

दोहा-अजपाही के जापको, सिद्ध भयो जबजान ॥
पहुँचै या अस्थानहीं, रहै न दूजा ज्ञा ॥
यह जो सब कुछ मैं कहो, हिरदै जानाजाय ॥
ताहीको पहिंचानिये, चरणदास चितलाय ॥

दशप्रकार अनाहतशब्द ।

अष्टपदी ॥ कैसे अनहद उठै हिये अस्थानसों । यह जीवातम सुनै हृदय बल ध्यानसों ॥ दशप्रकारके नाद कहूं भिन्न भिन्नही । सो उपनिषदहि माहिं कहे सब चिह्नही ॥ पहली ऐसे होय चिड़िया ज्यों चीकला । एकबार कहै चिह्न सुनो सोई सुरतला ॥ ऐसेही दोबार जु दूजी जानिये । चिह्न चिह्नही होत ताहि पहिंचानिये ॥ क्षुद्रघंटिका तीसरि चौथी शंख ज्यों ।

पंचम ऐसी जान बजतहै बीनत्यों॥छठीं बजे ज्यों ताल सातवीं बाँसुरी। अठवें शब्द मृदङ्ग लगै मनगाँसुरी ॥ नवें नफीरी नाद जु दशवें सिंहहै। बादर कीसी गरज दहु दंहंदहै ॥ करतेमें अभ्यास जु नादैं सबखुलैं॥ जैसे बटाऊ चलत नगर नौमग मिलै॥ दशवें पहुचै जाय नवें बिसराइया । रहन किया वादेश जहां घर छाइया ॥ ऐसेही नौ छोंड नाद दशवाँ गहै । बादलकीसी गर्ज जहां मन देरहै ॥ वाको छोडै नाहिं सदारहै लीनहीं। यही जु अनहदसार जानि परबीनहीं ॥ याको प्रापतकहूं जो मनमें आनियो । गौरासों शिव कह्यो साँच करि जानियो ॥

दोहा—चरणदासने अब कही, जुदी जुदी दशनाद ॥
वही परापत को लहै, जो कोइ साधै साध ॥

अनहदनादकी परीक्षा ।

अष्टपदी ॥ पहिलि परीक्षा जान जु अनहद नादकी । सबै रोमावलि उठै जु वाके गातकी ॥ अरु दूजी जब सुनै नाद चितलावई । सब तन अंगन माहिं आलकस छावई ॥ तीजी अनहद नाद सुनै जितही जुटै । सब अङ्गन हियमाहिं प्रेम पीड़ा उठै ॥ चौथे सुनै जब नाद परीक्षा पावई । तब शिर घूमनलगै अमल ज्यों खावई ॥ पँचवीं उठै जो नाद सुनै तामें पगै । वाके शीश सों जानि अमी उतरन लगै ॥ छठी उठै जब नाद सुरति वामें धरै । कण्ठसों नीचे उतरि अमी पीवन करै ॥ सतवीं खुलै जो नाद बिना श्रवणन सुनै । अन्तर्यामी होय लखै सबके मनै ॥ दूर दूरके वचन सुनै कोई कहै । होय परेकी दृष्टि छिप्यो कछु ना रहै ॥ अठवें परीक्षा

जानि परापत जो बनै । सबमाहीं सब ठौर नाद अनहद सुनै ॥ है सबहीके मांझ बैन समझै सुनै । यह समझै अरु सुनै ताहि नीके गुनै ॥

दोहा–खुलै नवीं जब नादही, लक्षण यह पहिंचान ॥
सूक्ष्महोयजिततित गमन, करै धरै जो ध्यान ॥
काहूहीकी दृष्टिसों, चहै अगोचर होन ॥
होयसकै दीखै नहीं, वह सब देखै जौन ॥
जैसे सुर सबको लखैं, उन्हैं न देखै कोय ॥
रणजित कहै अस्थूलहो, चाहै सूक्षम होय ॥

अष्टपदी ॥ दशवीं खुलै जो नाद परे सोहंपरे । पारब्रह्म होइजाय ध्यान ताको करे ॥ ध्यानीको मन लीन होय अनहद सुनै । आप अनाहद होय वासना सब भुनै ॥ पाप पुण्य छुटिजाय दोऊफल ना रहैं । होय परमकल्याण जु त्रैगुण ना रहैं ॥ होवै बोध स्वरूप तेज ह्वैजातहै । अटकरहै नहिंकोय सबैठां समात है ॥ अज अविनाशी शुद्ध पवित्तर सत्तही । होवै आनँदरूप परम जो तत्त्वही ॥ निर्विकार निर्लेप और निर्वानहीं । आनँद सबको देत आपको जानहीं ॥ या ध्यानीको नाम जु ॐ कार है । सब नामनमें बडा किया जु विचार है ॥ याको ऐसे मानै कि वह जो मैहीं हूं । रूप नाम गुण जान कि यह सब वाहीसूं ॥

दोहा–करतै अनहद ध्यानही, ब्रह्मरूप ह्वै जाय ॥
चरणदास यों कहतहै, बाधा सब मिटिजाय ॥

इति अथर्वणवेदीयहंसनादोपनिषद्भाषा सम्पूर्णम् ।

अथ द्वितीयसर्वोपनिषद्प्रारम्भः ।



दोहा—दूसरि जो उपनिषद है, ताको कहौं बनाय ॥
सर्व नाम तिहि जानिये, ताहि देहुँ प्रकटाय ॥

अष्टपदी ॥ परजापति के शिष्य जो पूंछी आयकै । बन्धमुक्तिका भेद देहु समुझायकै ॥ काहि कहत हैं बन्ध मोक्ष कासों कहैं । विद्याऽविद्या भेद कहौ कैसे लहैं ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मोहिं बतलाइये । अरु तुरिया को भेद सभी जु सुनाइये॥ कोठे पांचको[1] भेद गुरू वर्णन करो । जुदाजुदा समझाय तिमिर दुविधा हरो ॥ पहिले अन्नसों[2] भरा दुजा[3] भरा प्रानसों । तीजा[4] मन सों भरा चौथ[5] बुधि रानिसों ॥ पँचवाँ[6] आनँद भरा मोहिं कहि दीजिये । हौं तौ चरणहिंदास कृपा जो कीजिये ॥ आतमको जो कर्ता कैसे कैकहैं । किन अनर्थ सों जीव जु याही कोठ हैं ॥ अरु कहैं याको देहका जाननहार है। देहका साक्षी कहै सो कौन बिचार है ॥

दोहा—ऐसो यह बन्धन बँधो, कहैं तज्ज्ञ निर्बन्ध ॥
अन्तर्यामी क्यों कहैं, मोहिं बतावो सन्ध ॥
आतमहींको क्यों कहैं, जीव आतमा मान ॥
माया यासों कहत हैं, दूरि करो अज्ञान ॥

अष्टपदी ॥ परजापति सब सुनिकै यह उत्तर दिया । आतमहींका ज्ञान सभी परगट किया ॥ जीव आतमा देह कु मानिकै मैं कहैं । ताते परो अज्ञान सबै दुख सुखसहैं ॥ आपको लम्बा जान कि ठिंगना जानई । कबहूं दुबला जान कि मोटा मानई॥

---

१ पांचकोष । २ अन्नमयकोष ॥ ३ प्राणमयकोष । ४ मनोमयकोष । ५ ज्ञानमयकोष । ६ आनन्दमयकोष ॥

आपको जानै वृद्ध कि बालक तरुण है । जानत नारी पुरुष-जु मानत वरन है ॥ देह संगह्वै देहकरै जु विहार है । आपन को गयो भूलिरहै न विचार है ॥ वाको बन्धन यही सुनो चितमें धरो । देहभाव छुटिजाय मुक्ति निश्चय करो ॥ जाही वस्तुसों उपजै तन अभिमान है । वही अविद्या जान वही अज्ञान है ॥ यही भरम उठिजाय जिसी जु विचारसों । वाही विद्या जानि वहीको ज्ञानहूं ॥

दोहा—चौदह¹ इन्द्री देवता, मिलि जो करै व्योहार ॥
चरणदास यों कहत है, जाग्रत यही निहार ॥
जीव जु अन्तःकरण के, चारौ देवत संग ॥
सूक्षम देही साथही, देखै स्वपना रंग ॥
चौदहही सब लीनह्वै, जीव आतमामाहिं ॥
यही सुखोपति जानिये, कछुभी सूझै नाहिं ॥

अष्टपदी ।

तीन² अवस्था मिटैं मिटैऽहंकार है । तुरियाही रहिजाय जु तत्त्व अपार है ॥ परमातम जो पुरुष सदा निर्लेपहै । केवल ज्ञानस्वरूप जु ब्रह्म अभेव है ॥

पंचकोषवर्णन ।

अब कोठौंकी बात कहूं चित दीजिये । जुदा जुदा विस्तार सबै सुनि लीजिये ॥ पहला कोठा कहूं अन्नसेती भरो । छह कोठे तेहिमाहिं सोई श्रवणन धरो ॥ तीन पिताकी ओर सो लाया संगही । बीरजमींगी हाड़ सफेदजु रंगही ॥ अब माताके अंश तीनिहीं जानिये । लोह त्वचा अरु मांस अरुण पहिचानिये ॥

---

१ पांच कर्मेन्द्री, पांच ज्ञानेन्द्री, चार अन्तःकरण यही चौदह इन्द्री और इनके देवता ।
२ जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति ।

प्रानसे कोठाभरा दशौ जहां वायु है । अगलेभी छः कहे जु रहे समाय है ॥ तीजा कोठा जानि धरो तहँ शुद्धिही । मन चित अरु अहंकार भरी जहँ बुद्धिही ॥ चौथा कोठा देख इन्द्रींका जानना । तामें भरोहै ज्ञान सभीको पिछानना ॥ पँचवाँ कोठा जानि जो आनँदसों भरा । जैसे सगरो वृक्ष बीजमाहीं धरा ॥

दोहा—चारौ कोठे जो कहे, अरु कारणको देखि ॥
जहाँ सभी ये रहत हैं, वा ठौरीको पेखि ॥
वा ठौरीको जानिये, ज्यों तरुवरको बीज ॥
डाल पात फल फूलही, रहै जु वाके बीच ॥
ऐसे वाको समझिकै, रहै जु आनँद आहिं ॥
आनँदही आनँद भरा, पँचवें कोठे माहिं ॥

अष्टपदी ॥ आतम करता जानु जु जामें बाधि रहै । दुखसुख वाही माहिं सभी आशा धरै ॥ इच्छा पूरी भये होतमन मोद है । जब पूरी नहिं होय घना दुख होत है ॥ दुखसुख दोनों होत जो पंचमके विषे । सोवे इन्द्री जान बिना इनके कसे ॥ सरवन सों सुनि शब्द बुराभलको यही । और त्वचासों जान स्पर्श कि हो यही ॥ आँखनसों लखिहोय जु रूप कुरूपसों । अरु जिह्वासों होय जु पटरस स्वादसों ॥ नासासेती होय बुरीभलि गंधले । इनसे उतैपति होय जु दुख सुख भै अभै ॥ आतमको जीवातम इसकारण कहैं । सूक्षम अरु अस्थूल देह सँगही रहैं ॥ बुरेभले जो करमनके फलमें बँधा । बीचहि लिया लगाय नहीं धुरसों फँधा ॥ ज्यों कञ्चनके संग जु टाँका जानिये । धौले वस्तर साथ जु मैल पिछानिये ॥ सोधेसे हैदूर शुद्ध ह्वै जात है । अपनेहिं अञ्जन आप जु श्वेत दिखात है ॥ जीवातम इहि भाँति फलन त्यागन करै । आतमहीं रहिजाय जीवता ना

रहै ॥ खोटे कर्म जु त्यागि भले सहजै करै। तिनका फल जो होय नहीं आशा धरै ॥ १३ ॥

दोहा–जीव ब्रह्म यों होत है, रहै न कछू लगाव ॥
चरणदास यों कहत है, ऐसा किये उपाव ॥

अष्टपदी ॥ देहको जाननहारा ऐसे मानई । सूक्ष्म अरु अस्थूलको अपनी जानई ॥ कबहुँ कहै ममशीश आँख मुख हाथ है । कभी बतावै पांव कहै मेरा गात है ॥ मनबुधि चितऽहङ्कार समझ ये चार हैं । अरु पांचौं है वायु जु कोइ निहार है ॥ प्राण अपान व्यान उदान समान हैं । सात्विक राजस तामस तीनौ जानि हैं ॥ वैर प्रीति अरु तीसरि इनकी द्वंद्व है । चौथा मनोरथ तीनिके सब मिलि झुंड है ॥ भले बुरे जो कर्म और मन आनिये । सूक्ष्म शरीरको मूल ये सब पहिंचानिये ॥ अरु यह सूक्ष्म शरीर आतमा साथ जो । तातें भासत सत्य सत्यहै बातसो ॥ जब आतम पहिंचान हियेमें आवई । तब सूक्षमको साँच सबै उठि जावई ॥

दोहा–सूक्ष्म शरीररु आतमा, भिन्न लखै नहिं कोय ॥
यही जु मनकी गाँठहै, खुले मुक्तिही होय ॥
जानी जाननहार ही, और तीसरी जान ॥
इन तीनौंको जो लखै, सो साक्षी परधान ॥
उपजैं तीनौ द्वैतसौं, मिटै एकता होय ॥
उपजन मिटना तीनका, जानै न्यारा सोय ॥
अपनेहीं परकाशमें, आप रहा परकास ॥
सोई साक्षी जानिये, कहै चरणहीं दास ॥
यद्यपि बन्धनमें बँधा, कहै जु निर्बंध दूर ॥
कीटी ब्रह्मा आदिलौं, हिरदयमें भरपूर ॥

१ ज्ञाता,

सबही हिरदयके मिटे, वही एक ठहराय ॥
ना कुछ आया ना गया, ज्योंका त्यों रहिजाय ॥
बन्धनमें आवै सही, लीला करन दयाल ॥
निरबँधका निरबंध रहै, अजअविनाशिअकाल ॥
अंतर्यामीके अरथ, सब घट रहो समाय ॥
जैसे डोरेके विषे, भाँतिभाँति मणिकाय ॥
सबहीके भीतर बसै, सबका जाननहार ॥
वाहीते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥
घनेरूप किरिया घनी, घने नाम दृष्टान्त ॥
सूझै ज्ञानप्रकाशसूं, जब गुरु मेटै भ्रान्त ॥
रूपनाम किरिया लगी, जबलग याके साथ ॥
याहीते जी आतमा, कहलावे यह बात ॥
जैसे कञ्चन मृत्तिका, भांडे किये सँचार ॥
नामरूप किरिया भई, देखो दृष्टि निहार ॥
रूपनाम किरिया मिटै, रहै न कछू विचार ॥
जो था सोई रहगया, परमातम ततसार ॥
आतम अरु जीवातमा, देह धरेसे होय ॥
ताते बढ़ो उपाधही, मैं तू तू मैं होय ॥
तत्त्वमसी जो यह कहा, ताको याही अर्थ ॥
वह तूही है जानले, परम तत्त्व है सत्य ॥

अष्टपदी ।

अरु वह ज्ञान स्वरूप अनन्द अनन्त है । उपजावन सब सृष्टिको जीवन कन्द है ॥ वस्तुकाल अस्थान तीनौ मिटि जात हैं । वह इकरस सतरूप ब्रह्म रहिजात है ॥ सबको जाननहार मिटै उपजै नहीं । तासूं कहैं वहि ज्ञान अर्थ जानो तहीं ॥ और कहैं जु अनन्तसो यासूं जानिये । सब भांड़में

इक माटी जु पिछानिये ॥ कनकके बर्तन बहुत जु सोना एकिये । सब वसननके माहिं जु सूतहि देखिये ॥ ऐसेहि आदिरु अन्त ब्रह्म सब माहिं है । कहिये याहि अनन्त भेद कछु नाहिं है ॥ अरु जो आनँद कहै समुझ लीजौ वही । वाहीको अंश पिछान जु आनँदहो कही ॥ ऐसेही मोहिं समझायो गुरु शुकदेवने ॥ चरणहिंदासा होय लखो या भेवने ॥

ब्रह्मका स्वरूप ।

दोहा—चार पते ये ब्रह्मके, सत आनन्द अनन्त ॥
चौथा ज्ञान स्वरूप है, कहैं वेद अरु सन्त ॥

अष्टपदी ।

सर्वसु मैं सबठौर जु इकरस नित्त है । तत्त्वमसीके अर्थ वही तू सत्य है ॥ जबसूं करिकै ज्ञान होय परब्रह्महीं । आपनहींकूं पाय जाय सब भर्महीं ॥ मैं तू वह उठिजाय दूसरी वासही । आपकुं व्यापक जान ज्यों शुद्ध अकाशही ॥ अरु जानै निर्लेप सत्त अरु एकही । जब परमातम होय रूप नहिं रेखही ॥ माया याते कहैं भरम अरु अन्त है । ज्ञान भये उठिजाय कछू न रहन्त है ॥ ज्यों रसरीको साँप भरमसूं मानिये । समझ लखा जब झूठी माया जानिये ॥ सांच सो लागै झूठ झूठ सच जान है । माया यही सुभाव भरम अज्ञान है ॥ रसरीकूं कहैं सर्प्प जु अपने भरमसूं । ऐसेही जड़ कहत सनातन ब्रह्मकूं ॥

दोहा—झूठ जगत दीखत रहै, दीखै ना सतब्रह्म ॥
यही जु माया जानिये, यही तिमिर यहि भर्म ॥
गुरु शुकदेव प्रतापसूं, कही चरणहीं दास ॥
यह जु अथर्वण वेदकी, सर्व उपनिषद भास ॥

इति द्वितीयसर्वोपनिषत्सम्पूर्णम् ।

अथ तृतीयतत्त्वयोगोपनिषद्प्रारम्भः।

अष्टपदी।

तीजी अरु जो कहूं अथर्वण वेदकी। तत्त्वयोग जिहि नाम गुपतही भेदकी॥ अपने शिषसूं कहा जु परजापतिने। योगसारमें कहूं जु पावै तत्त्वने॥ योगेश्वरकूं लाभ होय जाके किये। पढ़े पाप भाजिजाय सुने राखे हिये॥ निश्चय होवे मुक्त यही तू जानियो। चौथे पद लहै वास सांच करि मानियो॥ बड़ा योगीश्वर विष्णु अधिक तप ज्ञान है। जाकी माया गह्व नहीं परमान है॥ योगी करिकै योग सुज्योति निहारही। दीपककीसी लोय लखे होय पारही॥ सो वह विष्णु सरूप सबनके माहिं है। घट घटमें भरपूर खाली कोई नाहिं है॥ ऐसी ज्योतिकूं छोड़ि और मन लावई। वे नर भोंदू जान जु कूर कहावई॥

द्रोहा—दूध पिया जिन कुचनसूं, उनकूं मल सुख लेत॥
जन्म खोय खाली चलै, नारिनसूं करि हेत॥

अष्टपदी॥ जिस द्वारेसूं निकस जन्म जगमें लिया। ताहीमें परवेश करन फिर मन किया॥ वही नारिको रूप जु तासू माकही। लगे भार्य्या कहन जु अपने सँगलई॥ जाही पुरुष स्वरूपकूं कहतें बापही। फिर लगे पुत्तर कहन वाहीकूं आपही॥ वही पुत्र जो जगत्‌में पिता कहावई। सोई पुत्तर भया बड़ो अति चावई॥ जैसे कूपका रहँट लोट रीते भरे। वस्तु एकही जान कभी ऊपर तरे॥ याही भरम अज्ञानसूं आशाही दहै॥ बहुलोकनके माहिं सदा भरमत रहै॥ अब मैं कहूं उपाय जगतसूँ

ज्यों छुटै । आवागमनका फंद सितांबही कटै ॥ जासूँ भरमैं नाहिं रहै थिर होयकै । पावै निज अस्थान विपति सब खोयकै ॥

ओंकारवर्णन ।

दोहा-ओंकार बड़ नाम है, हिरदै ध्यान करै ॥
शुकदेव कहै चरणदाससूं, सबही व्याधि टरै ॥

अष्टपदी ॥ ओंकारके अक्षर कहिये तीन हैं । अकार उकार मकार जानै परवीन हैं ॥ तीनौ अक्षरमाँह तीनौ हैं थोकही । पहले अक्षरमें जु रहै भूलो कही ॥ दूजे अक्षर बीच जानौ आकाशही । तीजे अक्षर माहिं वैकुंठ निवासही ॥ तीनौ अक्षर माहिं जो तीनौ वेद हैं । ऋगयजुवेदरु साम तिहूं जो भेद हैं ॥ तीनौ अक्षर माहिं तिहुं जो देव हैं । ब्रह्मा विष्णु महेश तिहूं जो अभेव हैं ॥ तीनप्रकार कि अग्नि तीन अक्षर महीं । एक अग्नि यह जान दिखै प्रत्यक्षहीं ॥ दूजी अग्नि प्रचंड सूर्यकी भासई । तृतिय अग्नि सब माहिं जठर परकासई ॥ तीनौ गुण तिनमाहिं समझ जानौ यही । रजगुण सतगुण और तमोगुण है सही ॥

दोहा-यह अक्षर ओंकारके, जिनका चौथा भाग ॥
अर्द्धमात्रा बोलिये, ऊपर बिन्दी लाग ॥

अष्टपदी ॥ जो कोउ याको जपै समझ अरु ध्याय है । ऊपरकही जो वस्तु सबनको पाय है ॥ अक्षर साढ़ेतीन प्रणवके माहिं है । सब वस्तू वा माहिं बाह्य कछु नाहिं है ॥ ऐसे रहत वा माहिं पुहुपमें गंध ज्यों । जैसे तिलमें तेल दूधमें घीव त्यों ॥ जैसे पाहन माहिं जु कनक बताइये । ऐसेही ओंकारमें सबको

१ शिग्रही ।

पाइये ॥ वाहीको किये ध्यान परमपदको लहै । वेदपुराणन माहिं साख योंही कहै ॥

प्रणवका ध्यान ।

अब परणवका ध्यान जु देहुँ बतायकै । सबही याकी सूझ कहूं समझायकै ॥ हिरदयहीके माहिं जु कमल पिछानिये । ऊपरको है नाल नीच मुख जानिये ॥ वाहीके छिद्र बीच रहत मनभूप है । कहैं चरणही दास जु भेद अनूप है ॥

दोहा–अक्षरमें ओंकारके, पहिला है जु अकार ॥
ताहि कहेसों होत है, हिरदा शुद्ध विचार ॥

अष्टपदी ॥ दूजा जपै उकार कमल विकसैं कली । शनै शनै खुलिजाय बसै तामें अली ॥ तीजा जपै मकार प्रकटहो नादही । सुनि सुनि आनँद होहि जु परम अगाधही ॥ अर्द्ध-मात्रा बिन्दु सदा थिर जानिये । हलन चलन कछु नाहिं यही पहचानिये ॥ वामें मनह्वै लीन ज्योति ह्वैजातिहै । निर्म्मल अरु शुद्ध बिलौरकी भाँति है ॥ सूरज कीसी किरण महा उज्ज्वल वही । जोई करै वह ध्यान पुरुष पावै सही ॥ सबमें ज्योति स्वरूप सकल भरपूर है । निकट निकट सों निकट दूरसों दूर है ॥ जो इसकाही ध्यान हृदय किया जायना । तौ करै मस्तक माहिं होय पारायना ॥ शीशमें जब सिद्ध होय रोकै नौ द्वारही । निकसनदेवै वायु न काहू द्वारही ॥

दोहा–दोय पगण्डी बाँधिये, नीचेके दो द्वार ॥
दोउ अँगूठे हाथके, रोको शरवन वार ॥

अष्टपदी ।

तर्जनि अँगुली दोउ दृगनपर दीजिये । मध्यमसे दोउ नाक छेद बँद कीजिये ॥ अनामिका दोउ हाथकि और कनिष्ठिका ।

होंठनको बंद करै जु नीके पुष्टका ॥ नासाके दोउ छेद एकही जित भये। दोउ भौंहनके बीच चरणदासा कहै॥ निश्चय ताहि बना रस देहको जानिये। वाहीकी तौ और दृष्टिको तानिये॥ महाकुम्भक इहि नाम इसी विधि साधिये। ध्यान किये होय मुक्ति यही अवराधिये ॥ इन्द्रिनहूंके मारगको जो बंद करै। वायु बिना घट माहिं यथा दीपक बरै ॥ होय घना परकाश इसी जो देहमें। इसही ध्यान प्रताप मिलै जा गेहमें ॥ पावै चेतन शुद्धि किये इस योगही। कर्मनको ह्वै नाश मिटै मन रोगही ॥

दोहा-उपनिषद पूरी भई, नाम योगही तत्त्व ॥
अंग अथर्वण वेदका, चरणदास कहिसत्त्व ॥

इति अथवर्णवेदीयतृतीयतत्त्वयोगोपानिषत्सम्पर्णम्।

अथ चतुर्थयोगशिखोपनिषत्प्रारम्भः।

दोहा-योगशिखा चौथी कहूं, तामें अद्भुत ध्यान ॥
परजापति ऐसे कही, शिष्य सुनौ दै कान ॥

अष्टपदी।

यामें अद्भुत राह बड़ेही ज्ञानकी। कांपन लागै देह कठिन सुनि ध्यानकी॥ जब आवै मनमाहिं मोहतन ना रहै। पांचनहीं की आग नहीं हियमें दहै॥ वाकी विधि मैं कहूं सभी सुनि लीजिये। बैठि इकांतहि ठौर जु आसन कीजिये॥ आसन पद्म लगायके सुख आसन करौ। सीधो राखै मेर नन नासा धरौ ॥ दोउ पायनके साथ जु हाथ मिलाइये। सब स्वादनको रोकि जो

मनको लाइये ॥ प्रणवहीका जाप जु मनमें राखिये । इस बिन और उपाय सबनको नाखिये ॥ जाका ओं नाम ध्यान ताका करै। आठपहर संग्राम बिना खांड़े लरै॥ देह यही अस्थूल बड़ा घर जानिये । तामें दीरघ थंभ एक पहिंचानिये ॥

दोहा–अरु यामें नौ द्वार हैं, छोटे थंभ हैं तीन ॥
पांचदेवता तेहि विषे, लहैं साध परवीन ॥
यह घर जो मैंने कहा, सोइ मनुपनकी देह ॥
कहें गुरू शुकदेवजी, चणदास सुनि लेह ॥

अष्टपदी।

एक बड़ा जो थंभ मेरकी डंड है । सोई पीठका हाड़ जासु सब मंड है ॥ अरु वाहीके बीच नाड़ि सुषमन भली । सब नाडिन शिरमौर योगी मानैं रली ॥ नौ द्वारे अब कहूं तिन्हें पहिंचानिये। दो सरवन दो आँख भली विधि जानिये ॥ नासा छिद्दर दोय जु मुखका एक है। लिंग गुदा दो जान नवोंका लेख है ॥ तीन जु छोटे थंभ तीन गुणहीं कहे। सतगुण तमगुण और रजोगुणहीं लहे ॥ पांच देवता कहे सो पांचौ प्रान हैं । प्राण अपानरु व्यान उदान समान हैं ॥ ऐसे मंदिलमाहिं हृदयमें छेद है। तामें सूरजमण्डल अचरज भेद है ॥ ताकी बाढ़िही ज्योति किरण उजियारहै। पूरा योगीहोय सो ताहि निहार है ॥

दोहा–ज्योतिमयी मंडल लखै, हृदयकमलमें होय ॥
तामें दीखै और इक, दीवेकीसी लोय ॥

अष्टपदी।

दीपककीसी ज्योति मानु ऊपर चलै । रहै आपनी ठौर भाँति ऐसी हिलै॥ वाही ज्योति को जानै ब्रह्म स्वरूपही। यही समझिके ध्यान करै जु अनूपही ॥ योगी करैं जो ध्यान

यही हिय मांहिंहीं। अंतसमै तन छूटि उपरको जाहिंहीं॥ सूरजहूका मण्डल जावे वेधही। सुषमन मारग जाय शीशको छेदही॥ साथुज मुक्तिको जाय परापत होय ही। कोटिन माहीं लहै जु विरला कोयही॥ सब ज्योतिनकी ज्योति बड़ी जो ज्योति है॥ ताको पाये होय एकही गौत है॥ आलस सों दुर्भाग्य ध्यान करिनासकै। तौ दिनमें तिरकाल पाठ करने लगै॥

दोहा–प्रातकाल अरु मध्यमें, संध्याहीकी बार॥
उपनिषदन तीनों समै, पढ़ै विचार विचार॥
करम कटै यमही हटै, चौरासी कटजाय॥
देही पावै मनुषकी, पूरा गुरु मिलजाय॥
फिर पावै यह ध्यानहीं, पीछे कही जु खोल॥
जावै परमहि धामकूं, छोड़े सब झकझोल॥
थोड़ासा यह ध्यानही, मैं समझायों तोहिं॥
परजापतिशिष्यसोंकहै, बड़ा जो निश्चयमोहिं॥
यह पदवी मोकूं मिली, इसी ध्यान परताप॥
जीवन्मुक्तहि रहूं, छुटै आप अरु धाप॥
निश्चल हो या ध्यानकूं, करै जो कोई और॥
जगत छुटै आपामिटै, पावै निर्भय ठौर॥
आनन्दहि आनन्दजहाँ, अवधि न कालकलेश॥
चरणदास या ध्यानसों, पावै ऐसा देश॥
बहुलोकनमें जन्मधारि, पाप मिटा नहिं मूर॥
चरणदास इस ध्यानसों, सबै होत है दूर॥
दूरकरन दुख जगतके, आन उपाय न होय॥
योगीकूं या ध्यानसम, और वस्तु नहिं कोय॥

उपनिषद चौथी यही, भई समापत येहु ॥
चरणदास कहैं पांचवीं, हितचितदै सुनिलेहु ॥

इति अथर्वणवेदीययोगशिखोपनिषत्सम्पूर्णम् ।

अथ पञ्चमतेजविंशतोपनिषत्प्रारम्भः ।

दोहा—उपनिषदा जो पांचवीं, वेद अथर्वण माहिं ॥
तेज विंद जिहिनाम है, समझ मुक्ति होजाहिं ॥

अष्टपदी ॥ तेज बिन्दके अर्थ यही हिय गूँध है । बड़े ध्यानके तेजहिकी यह बूँद है ॥ उसका है यह ध्यान जो सबसे ऊंच है । सबसूं पर निहरूप शुद्ध अरु सूच है ॥ हिरदयहीके मध्य और सूक्षम महा । अरु केवल आनंद किन्हीं ज्ञानीलहा ॥ अनंतशक्ति जिहिमाहिं निराअस्थूल है । बहुत पिण्ड ब्रह्मांड सबनका मूल है ॥ बड़ा बिना परमान गहानाहिं जात है । वाकि तपस्या ध्यान कठिन जु दिखात है ॥ वाका देखन दुलभ सुलभ नहिं जानना । वह तौ सिन्धु अथाह कछू परमानना ॥ ज्ञानी पण्डित और सबै बुधिवानही । पावैं आदि न अन्त और मध्य हां नहीं ॥ कै बांधै ब्रह्मव्रतकरै कै ध्यानहीं । वाहीकेहो रूप पावै तब जानहीं ॥ २ ॥

दोहा—जीतै पहिल अहारही, दूजे और करोध ॥
बहुमनुषोंका संग ताजि, छाँड़ै प्रीति विरोध ॥

अष्टपदी ॥ परबल इन्द्री जान सबनकूं वश करै । शीत उष्ण दुख सुख अस्तुति निन्दा हरै ॥ छोड़ैही अहंकार वासना आसही । अपने कारण वस्तु रखै नहिं पासही ॥ पूरी

राखै पैज धारणा धारिकै। गुरुआज्ञा गुरु सेव करै जु विचारिकै॥ सकल मनोरथ कामनाकूं करै क्षीणहीं। ऐसे जिज्ञासूकूं चाहिये द्वारे तीनहीं॥ एक जो द्वारा त्याग दुजा जो उपावही। तीजा गुरुकी निश्चय ऐसा सुभावही॥ इन द्वारोंमें राह जु आगै की खुलै। लुटै थकै वह नाहिं सुखालाही चलै॥ जीवातम हो हंस कहावत है यही। याके हैं अस्थान जो तीनोंही सही॥ जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति परगट जानिये। तुरिया निज अस्थान गुप्त पहिंचानिये॥ ४॥

दोहा–इन तीनोंसे बड़ाहै, तुरियाकूं नितजान॥
चरणदास पोषण जगत, वाके ना अस्थान॥

अष्टपदी।

जैसे भूत अकाशयों व्यापक ह्वै रहो। सब इन्द्रिनकें माहिं जो सूक्षम जो रहो॥ वाकी सत्तासेती चेत नहीं रही। वही बड़ापद जान विष्णुका है सही॥ वाके नेत्र हैं तीन जो तीनौ वेदही। अरु वाके गुण तीन जो किया निषेधही॥ है सबका आधार त्रिलोकी धारई। आप रहै निरधार जो अपरमपारई॥ है निहरूप अडोल अखंड अगाधही। है तौ निस्सन्देह पहुँचे न उपाधही॥ करिनसकै परवेश वरणगुणरूपही। अरु सब गुण वामाहिं जु अधिक अनूपही॥ पावै केवल ज्ञान आपमें आपही। बावन अक्षर माहिं नाम नहिं थापही॥ वह तौ निरा आनन्द काहुसे है नहीं। कठिन परातम होय दुलभ देखै नहीं॥

दोहा–वह उपजै विनशै नहीं, अज अविनाशी सोय॥
बिन इच्छा थिरही रहै, चरणदास नित जोय॥

अष्टपदी।

वह सबही विराटपिण्ड अरु जीवहै । नाना कौतुक होय अन्तवाहि सीव है ॥ ज्ञानसे जुदा न जान निरावह ज्ञान है। वही महा आकाश नहीं परमान है ॥ सबमाहीं परवेश जो आतम सत्त हैं। आपमें पूरण आप परमही तत्तहै । अज्ञानी जानै झूठ झूठ पहुँचै नहीं। वह तौ सदा नितजान कभी विनशै नहीं ॥ वाकूं कहा नहिंजाय जाप जापक कभी । अरु सारे हैं जाप उसी माहीं सभी ॥ और जपाभी गया जाप जापक वही। सबकुछ उसकूं जान गुप्त परगट वही॥ वह निर्गुण निर्लिप्त कोई गुणनाहिंनै । परेसूं परे तापरै जानिले वाहिनै ॥ वासूंपर नाहिं और विचारा जायना । कहैं चरणहीं दास कछू वा माहिंना ॥

दोहा—वाकूं जाग्रत् है नहीं, वाकूं स्वप्न न कोय ॥
सोवन स्वप्ना है नहीं, जाग्रत् कैसे होय ॥

अष्टपदी।

दुओ से न्यारा जान जाग्रत् अरु स्वपनसूं । ऐसा कोई नाहिं न जानै सत्तहूं ॥ सबका जानत मूल जु ज्ञानी लोयही । दीरघ अरु परकाशी जानै सबको यही ॥ जाकूं लोभ न होय अविद्या होयना । भै अभिमान कुकर्म वासना कोयना ॥ गरमी जाड़ा भूख प्यास व्यापै नहीं । पइये क्रोध न मोह नेक वामें कहीं ॥ वाहि न इच्छा होय न पूरी चाहहीं । कुल विद्या अभिमान न उनके माहिहीं ॥ मान नहीं अपमान न मनमें लावई । सबसूं होय निवृत्त ब्रह्मकूं पावई ॥ तेज बिन्द उपनिषद संपूरणहीं भई । गुरु शुकदेवके दास चरणदासा

कही ॥ ताहि सुनै मनराखि विचाराही करै । निश्चय होवै मुक्त जगतमें नापरै ॥

दोहा—कही गुरू शुकदेव ने, मेरी कछू न बुद्धि ॥
पढो नहीं मूरखमहा, मोकूं नेक न शुद्धि ॥
मेरे हिरदयके विषे, भवन कियो गुरु आय ॥
वेइ विराजतहैं सदा, मेरी देह दिखाय ॥
जबसूं गुरु किरपाकरी, दर्शन दीन्हों मोय ॥
रोम रोममें वे रमे, चरणदास नहिं कोय ॥
जातिवरणकुलमनगया, गया देह अभिमान ॥
अपने मुखसों कहाकहौं, जगही करै बखान ॥
रहे गुरू शुकदेवजी, मैं मैं गई नशाय ॥
मैं तैं तैं मैं वही है, नखशिख रहो समाय ॥

इति श्रीस्वामीचरणदासकृततेजविंशोपनिषद्भाषा सम्पूर्णम् ।

इति पंचोपानिषद् ।



॥ श्री वैकुण्ठविहारिणे नमः ॥

1468



अथ भक्तिपदार्थप्रारम्भः ।

गुरुमहिमा ।

दोहा—प्रणवों श्रीमुनि व्यासजी, मम हिरदयमें आय ॥
भक्तिपदारथ कहत हूं, तुमहीं करो सहाय ॥
प्रेम पगावन ज्ञान दे, योग जितावन हार ॥
चरणदासकी विनती, सुनियो वारम्वार ॥
तुम दाता हम माँगता, श्रीशुकदेव दयाल ॥
भक्तिदई व्याधागई, मेटे जगजंजाल ॥
किसू कामके थे नहीं, कोऊ न कौडी देह ॥
गुरु शुकदेव कृपाकरी, भई अमोलक देह ॥
कोहै काइ न जानता, गिनती में नहिं नावँ ॥
गुरु शुकदेव कृपाकरी, पूजन लागे पावँ ॥
सीधी पलक न देखते, छूते नाहीं छाहिं ॥
गुरु शुकदेव कृपाकरी, चरणोदक लेजाहिं ॥
दूसर के बालकहुते, भक्ति बिना कंगाल ॥
गुरु शुकदेव दयाकरी, हरिधन किये निहाल ॥
जा धनकूं ठग ना लगै, धारी सकै न लूट ॥
चोर चुरायसकै नहीं, गाँठ गिरै नहीं खूट ॥
बलिहारी गुरु आपने, तन मन सदकै जावँ ॥

जीव ब्रह्म क्षणमें कियो, पाई भूली बाँव ॥
हरिसेवा सोलह वरस, गुरु सेवा पलचार ॥
तौभी नहीं बराबरी, वेदन कियो विचार ॥
गुरुकी सेवा साधू जानै । गुरुसेवा कह मूढ़ पिछानै ॥
गुरु सेवा सबहुन पर भारी । समझ करो सोई नर नारी ॥
गुरु सेवासों विघन विनाशै । दुरमति भाजै पातक नाशै ॥
गुरु सेवा चौरासी छूटै । आवागमनक डोरा टूटै ॥
गुरु सेवा यमदण्ड न लागै । ममता मरै भक्तमें जागै ॥
गुरु सेवासूं प्रेम प्रकाशै । उनमत होय मिटै जग आशै ॥
गुरु सेवा परमातम दरशै । त्रैगुण तजि चौथापन परशै ॥
श्रीशुकदेव बतायो भेवा । चरणदास कर गुरुकी सेवा ॥
दोहा—गुरु सेवा जानै नहीं, पाँय न पूजै धाय ॥
योग दान जप तप कियो, सभी अफल ह्वैजाय ॥
योग दान जप तीरथ न्हाना । गुरु सेवा बिन निर्फल जाना ॥
गुरु सेवा विन बहु पछितैहौ । फिरि फिरि यमके द्वारे जैहौ ॥
गुरु सेवा विन अति दुखपैहौ । जगमें पशु दारिद्री ह्वैहौ ॥
गुरु सेवा विन कौन उतारै । भवसागरसूं बाहर डारै ॥
गुरु सेवा विन जड़ कह करिहै । काकी नाव बैठि करि तरिहै ॥
गुरु सेवा विन कछु नहिं सरिहै । महा अंधकूपन में परिहै ॥
गुरु सेवा विन घट अँधियारा । कैसे प्रकटै ज्ञान उजियारा ॥
नरक निवारण गुरु शुकदेवा । चरणदास करि तिनकी सेवा ॥
दोहा—इन्द्रीजित, निरवैरता, निरमोही निरद्वन्द्व ॥
ऐसे गुरुकी शरणसूं, मिटै सकल दुखद्वन्द्व ॥
राग द्वेष दोनोंसे न्यारे । ऐसे गुरू शिष्यकूं तारे ॥
आशा तृष्णा कुबुधि जलाई । तन मन वचन सबन सुखदाई ॥

निरालम्ब निर्भरम उदासी । निर्विकार जानौ निरवासी ॥
निर्मोहत निर्बन्ध निशंका । सावधान निर्वाण अशंका ॥
सारग्रही और सरवंगी । संतोषी ज्ञानी सतसंगी ॥
अयाचीक जत निरअभिमानी । पक्ष रहित स्थिर शुध वानी ॥
निहतरंग नाहीं परपंचा । निहकरम निरलिप्त जो संचा ॥
शीतल तासु मती देवा । चरणदास कियो सो गुरुदेवा ॥

दोहा–सतवादी अरु शीलवंत, सुहृदै अरु योगीश ॥
निश्चल ध्यान समाधिमें, सो गुरु विस्वेबीश ॥
भरमनिवारणभय हरण, दूरकरन सन्देह ॥
मुठिया खोलै ज्ञानकी, सो सद्गुरु करलेह ॥
सद्गुरु के लक्षण कहे, ताकूं ले पहिचान ॥
निरखपरखकर दीजिये, तन मन धन अरु प्रान ॥
ऐसा सद्गुरु कीजिये, जीवत डारै मारि ॥
जनम जनमकी वासना, ताकूं देवे जारि ॥
सद्गुरुके ढिग जाइकै, सन्मुख खावै चोट ॥
चकमक लग पथरीझरै, सकल जरावै खोट ॥
सद्गुरु मेरा शूरमा, करै शब्द की चोट ॥
मारै गोला प्रेमका, ढहै भरमका कोट ॥
मुखसेती बोलनथका, सुने न थका जू कान ॥
पावनसूं फिरवाथका, सद्गुरु मारा बान ॥
मैं मिरगा गुरु पारधी, शब्द लगायो बाण ॥
चरणदास घायल गिरे, तनमन बींधे प्राण ॥
शब्दबाण मोहिं मारिया, लगी कलेजे माहिं ॥
मारहँसे शुकदेवजी, बाकी छोड़ी नाहिं ॥
सद्गुरु शब्दी तेग है, लागत दो करदेहि ॥

पीठि फेरि कायर भजै, शूरा सम्मुख लेहि ॥
सद्गुरु शब्दी सेल है, सहै धमूका साध ॥
कायर ऊपर जो चलै, तौ जावै बरबाद ॥
सद्गुरु शब्दी तीर है, तन मन कीयो छेद ॥
बेदरदी समझै नहीं, विरही पावै भेद ॥
सद्गुरु शब्दी लागिया, नावकका सा तीर ॥
कसकतहै निकसत नहीं, होत प्रेमकी पीर ॥
सद्गुरु शब्दी बाण है, अँग अँग डारे तोड़ ॥
प्रेम खेत घायल गिरे, टाँका लगै न जोड़ ॥
सद्गुरु शब्दै मारिया, पूरा आया वार ॥
प्रेमी जूझे खेतमें, लगा न राखा तार ॥
ऐसी मारी खैंचकर, लगी वार गइ पार ॥
जिनका आपा ना रहा, भये रूप ततसार ॥
सद्गुरु के मारे मुये, बहुरि न उपजै आय ॥
चौरासी बन्धन छुटै, हरिपद पहुँचे जाय ॥
सद्गुरुके वचनौं मुये, धन्य जिन्होंके भाग ॥
त्रैगुणते ऊपर गये, जहां दोष नहिं राग ॥
वचन लगा गुरुदेवका, छुटे राजके साज ॥
हीरा मोती नारि सुत, गज घोड़ा अरु बाज ॥
वचनलगा गुरु ज्ञानका, रूखे लागे भोग ॥
इन्द्रकि पदवी लौ उन्हैं, चरणदास सबरोग ॥
सद्गुरु ढूँढा पाइये, नहीं सुहेला होय ॥
शिष्य भी पूरा कोइहै, सानी माटी जोय ॥
जातिवरणकुल आश्रम, मान बड़ाई खोय ॥
जब सद्गुरु के पगलगै, सांच शिष्य है सोय ॥

गुरुके आगे राखै माथा । कहै पाप दुख मेटो नाथा ॥
मैं आधीन तुम्हारो दासा । देहु आपने चरणन वासा ॥
यह तन मन ले भेंट चढायो । अपनी इच्छा कुछ न रहायो ॥
जो चाहे सो तुमहीं करो । या भाड़ में जो कुछ भरो ॥
भावे धूप छाँह में डारो । भावे वोरो भावे तारो ॥
गुण पौरुष कुछ बुधि नहिं मेरी । सब विधिसरणगही प्रभु तेरी ॥
मैं चकई अरु तुम किय डोरा । मैं जो फिरूं सब तुम्हरे जोरा ॥
मैं अब बैठा नाव तुम्हारी । आशा नदीसुं करिये पारी ॥
भ्रमरजालजगसूं मोहिं काढ़ो । हाथ जोरि चरणदासा ठाढ़ो ॥

दोहा-गुरुके आगे जाय करि, ऐसे बोले बोल ॥
कछू कपट राखै नहीं, अर्ज करै मन खोल ॥
यह आपा तुमकूं दिया, जित चाहौ तित राख ॥
चरणदास द्वारे परो, भावै झिडको लाख ॥

ऋद्धि सिद्धि फल कछू न चाऊं । जगतकामना को नहिं लाऊं ॥
और कामना मैं नहिं राखूं । रसना नाम तुम्हारो भाखूं ॥
राज भोगका मोहिं न सांसा । नहीं इन्द्र पदवी लौ आसा ॥
चौरासी में बहु दुख पायो । ताते शरण तिहारी आयो ॥
मुक्त होनकी मनमें आवै । आवागमन सों जीव डरावै ॥
रामभक्तिकी चाह हमारे । याते पकड़े चरण तुम्हारे ॥
प्रेम प्रीतिमें हिरदा भीजै । यही दान दाता मोहिं दीजै ॥
अपना कीजै गहिये बाहीं । धरिये शिरपर हाथ गोसाईं ॥
चरणदासको लेहु उबारे । मैं अण्डा तुम सेवनवारे ॥

दोहा-अंडा ज्यों आगे गिरै, जब गुरु लेवै सेइ ॥
करै बराबर आपनी, शिष्य को निस्सन्देह ॥
अपना करि सेवन करै, तीनि भाँति गुरुदेव ॥

पंजा पक्षी कुंजमन, कछुआ दृष्टि जु भेव ॥
जो वै बिछुरैं घडीभी, तो गंदा होइ जाय ॥
चरणदास यों कहत है, गुरु को राखु रिझाय ॥
पितुसों माता सौगुणा, सुतको राखै प्यार ॥
मनसेती सेवन करै, तन सों डाटरुगार ॥
जो देवैं [1]इरशीश भी, होहो लगै अशीश ॥
सेवनकरि समरथकियो, उनपर वारौं शीश ॥
माता सों हरि सौगुना, जिनसे सौ गुरुदेव ॥
प्यार करैं औगुण हरैं, चरणदास शुकदेव ॥
काचे भांडे सों रहैं, ज्यों कुम्हार को नेह ॥
भीतर सों रक्षा करै, बाहर चोटैं देह ॥
दृष्टि पडै गुरुदेवकी, देखत करैं निहाल ॥
औरै गति पलटैं तबै, कागा होत मराल ॥
दया होय गुरुदेवकी, भजै मान अरु मैन ॥
भोग वासना सब छुटै, पावै अतिही चैन ॥
जब सद्गुरु किरपा करैं, खोलि दिखावैं नैन ॥
जग झूठा दीखन लगै, देह परे की सैन ॥

अष्टपदी ।

गुरु बिन और न जान मान मेरो कहो । चरणदास उपदेश विचारतही रहो ॥ वेदरूप गुरु होयके कथा सुनावई । पंडितको धरिरूप कि अरथ बतावई ॥ गुरु है शेश महेश तोहिं चेतनकरै । गुरुब्रह्मा गुरुविष्णु होय खाली भरै ॥ कल्प वृक्ष गुरुदेव मनोरथ सब सरै । कामधेनु गुरुदेव क्षुधा तृष्णा

[1] श्राप.

हरै ॥ गंगासम गुरुहोय पाप सब धोवई । शशधर सम गुरु होय तपत सब खोवई ॥ सूरजसम गुरु होय तिमिर सब लेवई। पारब्रह्म गुरु होय मुक्तिपद देवई ॥ गुरुहीको करे ध्यान नाम गुरुको जपौ । आपा दीजै भेंट पूजन गुरुही थपौ ॥ समरथ श्रीशुकदेव कहा महिमाकरौं । अस्तुति कही न जाय शीश चरणन धरौं ॥

दोहा–हरि रूठैं कुछ डर नहीं, तूभी दे छिटकाय ॥
गुरुकोराखौ शीशपर, सब विधि करैं सहाय ॥

अष्टपदी।

गुरुको तजि हरिसेव कभी नहिं कीजिये । बेमुख[1]को नहिं ठौर नरकमें दीजिये ॥ गुरुनिंदक नहिं मुक्त गर्भ फिरि आवई । चौरासी लख भुक्ति महादुख पावई ॥ प्रथम करै गुरु देखि परखि चरणौं परै । उनको धारण ध्यानटेक उरमें धरै ॥ गुरुको रामहिं जान कृष्णसम जानिये । गुरु नृसिंह अवतार जु वामन मानिये॥ गुरुको पूरणजान जु ईश्वर रूपही । सब कुछ गुरुको जान यह बात अनूपही ॥ हरि गुरु एकहि जान यह निश्चय लाइये । दुबिधाही को बोझ जु वेग बगाइये ॥ धर्म्म पिता गुरु जान जु दृढ़ता राखिये । लाज सकुच करिकान ढीठता नाखिये ॥ मेरा यह उपदेश हिये में धारियो । गुरु चरणन मनराखि सेव तन गारियो ॥ जो गुरु झिरकै लाख तौ मुख नहिं मोड़ियो । गुरुसों नेह लगाय सबनसों तोड़ियो ॥ जो शिष सांचा होय तो आपा दीजियो । चरणदासकी सीख समझकर लीजियो ॥ मोको श्रीशुकदेव यही समझाइया । वेद पुराणन माहिं जु योंहीं गाइया ॥

[1] निगुरा.

दोहा-गुरु अस्तुति कह कहिसकै, चरणदास कहँ बुद्धि ॥
भक्तोंकी अब कहत हौं, जोवै देवैं शुद्धि ॥

भक्तमहिमा।

भक्तनकी अस्तुति किये, तन मन हियो सिराय ॥
कलिका मैल रहै नहीं, बुधि उज्ज्वल ह्वै जाय ॥
साधुनकी सेवा करौ, चरणदास चितलाय ॥
जनम मरण बंधन कटैं, जगतव्याधि छुटिजाय ॥
जो भक्तोंकी सेवा करै। यमके फन्दे नाहीं परै ॥
जिन साधौं का दर्शन देखा। तिनका यमसों रहा न लेखा ॥
जो भक्तनको शीश नवावै। तन छूटै जब दुख नाहिं पावै ॥
जो कोइ साधु संगमें रलै। जठर अग्निमें नाहीं जलै ॥
जो साधोंकी अस्तुति भाखै। भावै भक्ति प्रेमरस चाखै ॥
जो भक्तन सों प्रीति लगावै। वह निश्चय हरिको अपनावै ॥
जो भक्तों की वाणी गावै। समझै अर्थ परमपद पावै ॥
साधुसंग बिन गति नहिं होनी। क्यातपसीअरुक्याभयोमौनी॥
चरणदास भक्तोंकी शरना। ह्वांई जीवन ह्वांई मरना ॥

भक्तलक्षण।

दोहा-भक्तिवान निर्मल दिशा, संतोषी निर्वास ॥
मनराखै नवधा विषै, और न दूजी आस ॥
दयावान दाता गुण पूरे। पैज धारणा वचनौं शूरे ॥
मुक्ति कामना फल नहिं चाहैं। ऋद्धि सिद्धि अरु त्यागै लाहैं॥
हानि लाभ जिनके नहिं टोटा। वैरी मित्र खरा नहिं खोटा ॥
मानपमान कछू नहिं तिनके। दुखसुख एक बराबर जिनके ॥
शुभअरुअशुभ कछू नहिंजानैं। राव रंक को ना पहिंचानै ॥
कंचन कांच बराबर देखै। जग व्योहार कछू नहिं लेखै ॥

हार जीत नहिं वाद विवादा । सदा पवित्र समझ अगाधा ॥
हर्ष शोक जिनके नाहिं कबहीं । लखचौरासी प्यारे सबहीं ॥
हिंसा अकस भाव नहिं दूजा । सब जीवनकी राखै पूजा ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसे लक्षण साधु कहावै ॥
दोहा—भक्तनकी पदवी बड़ी, इन्द्रहुसे अधिकाय ॥
तीनलोकके सुख तजे, लीन्ह्यो हरि अपनाय ॥
अनन्यभक्त निष्काम जो, करै सोइ चरणदास ॥
चार मुक्ति वैकुण्ठ लों, सबसे रहै निरास ॥

साधुमाहात्म्य ।

प्रभु अपने मुखसे कह्यो, साधू मेरी देह ॥
उनके चरणनकी मुझे, प्यारी लागै खेह ॥
आठसिद्धि वै लें नहीं, कनक कामिनी नाहिं ॥
मेरे सँग लागे रहैं, कभी न छोड़ैं वाहिं ॥
सब तजिकर मोंको भजै, मोहीं सेती प्रीति ॥
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही ज्ञु मेरी रीति ॥
साधु हमारी आतमा, सबसे प्यारे मोहिं ॥
नारद निश्चय कीजिये, सांच कहत हौं तोहिं ॥
जिनके कारण मैं रचौं, अद्भुत यह संसार ॥
उनहीकी इच्छा धरूं, हर युगमें अवतार ॥
प्रेमी को ऋणियां रहौं, यही हमारो सूल ॥
चारि मुक्त दइ व्याजमें, दै न सकौं अब मूल ॥
सर्वस दीन्हों भक्तको, देख हमारो नेह ॥
निर्गुणसों सर्गुण भयो, धरी पशूकी देह ॥
मेरे जन मोमें रहैं, मैं भक्तनके माहिं ॥
मेरे अरु मम सन्तके, कछु भी अन्तर नाहिं ॥

साध सोवै तहँ सोय रहुं, भोजन सँगही जेवँ ॥
जो वह गावै प्रेमसों, मैंहूं ताली देवँ ॥
मम भक्ता जिता जिता फिरैं, गवनै लागा जावँ ॥
जहां तहां रक्षा करौं, भक्तवछल मेरो नावँ ॥
भक्त हमारो पग धरै, जहां धरूं मैं हाथ ॥
लारे लागोही फिरौं, कबहुं न छोडूं साथ ॥
मोको वशकियो जो चहै, भक्तनकी करि सेव ॥
उनमें ह्वै कर मैं मिलौं, करौं बहुतही हेव ॥
पृथ्वी पावन होत है, सबही तीरथ आदि ॥
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरैं जब साधि ॥
जिनकी महिमा प्रभु करैं, अपने मुखसों भाखि ॥
तिनकी कौन बराबरी, वेद भरत है साखि ॥
जिनकी आशा करत हैं, स्वर्ग माहिं सब देव ॥
कबहूं दर्शन पाय हैं, चरणकमलकी सेव ॥
अपने अपने लोकमें, सभी करैं उत्साह ॥
साधूकाया छोड़करि, गमन करै किसराह ॥
धन नगरी धन देशहै, धन पुर पट्टन गावँ ॥
जहँ साधूजन उपजियो, ताके बलि बलि जावँ ॥
भगत जु आवैं जगतमें, परमारथके हेत ॥
आप तरैं तारैं परा, मँडैं भजनके खेत ॥
भवसागरसों तारिकरि, लै जावैं बहु जीव ॥
साधू केवट रामके, पार मिलावैं पीव ॥
कामक्रोधमदलोभहनि, गर्भ तजै जो साध ॥
राम नाम हिरदै धरै, रोम रोम औराध ॥
साधू महिमाको कहै, शोभा अधिक अपार ॥

रसना दोय हजार सों, शेषहु जावैं हार ॥
अनन्यभक्तिकरिप्रेमसों, जीति लिये गोविन्द ॥
चरणदास हो वश किये, पूरण परमानन्द ॥

सतसंगतिमहिमा ।

तपके वर्ष हजारहू, सत्संगति घड़ि एक ॥
तौभी सरवर ना करै, शुकदेव किया विवेक ॥
सत्संगति महिमा बड़भाई । स्मृति वेद पुराणन गाई ॥
मुनि वसिष्ठ कही याही भेवा । साधु संगको तरसैं देवा ॥
साधु संगको नारद जानै । सो वह पिछलौ जन्म पिछानै ॥
देखो संगतिकी अधिकाई । वालमीकि अरु शबरी गाई ॥
अजामील सत्संगति परिया । अनगिनपाप किये सबजारिया ॥
सत्संगति बहु पतित उधारे । अधम सरीखे मुक्ति पधारे ॥
जाट जुलाहा अरु रैदासा । संगति साधु हुआ परकासा ॥
साधुनकी संगति मुकताई । चरणदास शुकदेव बताई ॥
दोहा—जब जब दर्शन राम दें, तब माँगौं सत्संग ॥
चाहौं पदवी भक्तिकी, चढ़ै सुनवधा रंग ॥
कूवा सैना सदना नाई । बहुतक नीच भये उँचपाई ॥
जैसे ठौर ठौरको पानी । सुरसरि मिलि भो गंगारानी ॥
तैसे काठ लोहको तारै । ऐसे संगति मिलि भय पारै ॥
जैसे पारस लोहा लागा । सो वह कंचन भयो सुभागा ॥
देवल तीरथ बहु मग धावै । साधुसंग बिन गति नहिं पावै ॥
ढाकापात पानके साथा । संगति मिलिगयो भूपन हाथा ॥
त्यों गोविन्द सँग गाई कुबरी । सूवाके सँग गणिका उबरी ॥
हरिभगतनमें दीजे वासा । जन्म जन्म माँगै चरणदासा ॥

दोहा–ऊंची पदवी साधुकी, महिमा कही न जाय॥
सुर नर मुनि जग भूपही, देखत रहे लजाय ॥

रागसारंग–करो नरहरिभक्तनको संग । दुख बिसरै सुख होय घनेरो तन मन पलटै अंग ॥ ह्वै निष्काम मिलो सन्तनसों नाम पदारथ मंग । जिहि पाये सब पातक नाशैं उपजै ज्ञानतरंग ॥ जो वे दया करें तेरे पर प्रेम पिलावैं भंग । जाके अमल दरश ह्वै हरिको नैनन आवै रंग ॥ उनके चरण शरणहीं लागो सेवा करो उमंग । चरणदास तिनके पग परशन आश करत है गंग ॥ ८६ ॥

ईश्वरमहिमा ।

दोहा–बिनहोनी हरि करिसकैं, होनी देहिं मिटाय ॥
चरणदास करु भक्तिही, आपा देहु उठाय ॥

हरि चितवै सो सांची बाता । औरनसों नहिं टूटै पाता ॥
जो कछु चाहा सो उन करई । अब चाहै सोभी सब सरई ॥
अग्नि माहिं तृण घास बचावै । घटमें सगरो सिंधु समावै ॥
पावक राखै पानी माहीं । जल राखै जहँ धरती नाहीं ॥
गिरिवर सागर माहिं तरावै । चाहै हलका काठ डुबावै ॥
सुईके नाके हस्ती काढ़ै । मूल पात बिन लकड़ी बाढै ॥
नरकी छाती दूध निकासै । उपजावै वह खेत अकासै ॥
चाहै गूँगे वेद पढ़ावैं । अँधरे आँखैं खोलि दिखावैं ॥
सबलायक सामरथ गुसाँई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा–प्रभुचाहै सोई करै, ताकूं टोकै कौन ॥
देखि देखि अचरज रहा, चरणदास गहि मौन ॥

महल पवनपर रचै मुरारी । अग्निके माहिं करै फुलवारी॥
चाहै विना बादल बरसावै । बिनसूरजदिनकरिदिखलावै ॥

खाली भरे भरे निघटावै । जो चाहै सोई प्रगटावै ॥
पाथर पानी करै बहावै । छिनमें सगरो सिंधु सुखावै ॥
चाहै जलका थल करिडारै । राईकूँ परवत करि भारै ॥
रंकन कूं करै छत्तर धारी । चाहै भूपन देह उजारी ॥
जो चाहै सो आपहि करै । औरनके शिर झूठे धरै ॥
चरणदास शुकदेव जनावै । सांचे गुणावाद जो गावै ॥
दोहा—यहअस्तुतिकरतारकी, जिन रचिया संसार ॥
अद्भुतकौतुक करिरह्यो, लीला अगम अपार ॥
उपजावै पालै विनशावै । अनगिन चन्द सूर दरशावै ॥
कोटिक अंड पलकमें करै । जब चाहै तब कुछ ना रहै ॥
जब फैलै तब रूप अनेका । जब्र समिटै तब एकहि एका ॥
वटक बीजका खेलनहारा । एक बीजका सकल पसारा ॥
तामें बीज अनंतहि देखा । गिनूं कहांलौं रंग न रेखा ॥
ऐसे हरि आपा विस्तारा । कहत सुनत देखतहूं हारा ॥
अपरंपार पार नहिं पाऊं । अस्तुति करता मैं सकुचाऊं ॥
समझि समझि मनमें रहिजाऊं । चरणदास हो शीश नवाऊं ॥
दोहा—लीलासिंधुअगाध गति, मोपै कही न जाय ॥
चरणदास यों कहत है, शोचत गयो हिराय ॥
कोटिक ब्रह्मा अस्तुति करहीं । वेद कहत प्रभुपरे परेहीं ॥
कोटिक शम्भू करैं समाधा । जानि परै नहिं रूप अगाधा ॥
कोटिक नारदसे यश गावैं । गुण अगाध कछु अंत न पावैं ॥
कोटिक ध्यानी ध्यान लगावैं । हरिके सो कछु रूप न पावैं ॥
कोटिक ज्ञानी कथैं वह ज्ञाना । समझथकी उनहूं नहिंजाना ॥
कोटिक शारद करैं विचारा । बुद्धिथकी जब कहा अपारा ॥
सुर नर मुनि वा भेदनलहिया । शोचिशोचिबाकिबाकिथकिरहिया ।

निरगुण सरगुण कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥
दोहा-चरणदास वा रूपकी, पटतर दई न जाइ ॥
राम सरीखे राम हैं, और बताऊं काइ ॥
वाकी अस्तुति कहां बखानूं । जैसा वह तैसा नहिं जानूं ॥
बुधि विचार करि हारा ज्ञाना । अनभै थकी नाहिं पहिचाना ॥
आदि न अंत मध्य नहिं जाका । दहिना बायाँ पीठ न आका ॥
हरा पीत श्वेत नहिं काला । नारी पुरुष न बूढा बाला ॥
रूप न रंग मिहीं नहिं मोटा । नया पुराना बडा न छोटा ॥
नाम रूप किरियासुं न्यारा । नहिंहलका नहिंकहियेभारा ॥
बानी चार परे निरवाना । काहू विधि वह जाय न जाना ॥
पुष्प गंध नादनतैं झीना । गुरु शुकदेव सुनाय जु दीना ॥
दोहा-कौन लखैको कहिसकै, अचरज अलख अभेव ॥
ज्ञान ध्यान पहुँचै नहीं, निर्विकार निर्लेव ॥
सुनत अचम्भा मोकूं आया । जाके वचन रूप नहिं काया ॥
निराकार नहिं ना आकारा । नहिंअडोल नहिं डोलनहारा ॥
पांचतत्त्व त्रैगुण ते आगे । अद्भुत अचरज ध्यान न लागे ॥
नहिं परगट नहिं गूपन ठाऊं । समझसकूं नहिंथकिथकिजाऊं ॥
जैसो आगे मैं कहि आयो । फिर समझो वैसो नहिं पायो ॥
जो कुछ कहिया नाहीं नाहीं । सो सब देखा वाके माहीं ॥
सकल सर्वदा ह्वां पहिंचानी । चरणदास शुकदेव बखानी ॥
दोहा-वामें गुण अनगिनत हैं, अपरंपार अगाध ॥
देखौ परगटही भये, रूप नाम अरु नाद ॥
वृक्ष बीजका भेद बताऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
जो कोइ निराबीजकूं बूझै । ताकूं वह निर्गुणहीं सूझै ॥
जब समझै तब सब गुण माहीं । तामें डाल मूल फल छाहीं ॥

ऐसे पूरण ब्रह्म पिछानौ । निराकार निर्गुण मत जानौ ॥
वे निरगुण सरगुण ते न्यारे । निरगुण सरगुण नाम विचारे ॥
अकथकथाकछुकथियन जाई । जो भाषूं सोई मुरखाई ॥
कोई कहौ सुनौ मन आनौ । वैसा नाहिं निश्चय करिजानौ ॥
बड़ बड़ ऋषिमुनिपण्डितभारे । चरणदास सब खोजत हारे ॥

दोहा—वहिनिरगुणसरगुणवही, वहि दोनोंसे न्यार ॥
जोथा सो जाना नहीं, शोचा वारम्वार ॥
अनंतसकललीलाअनंत, गुण अनंत बहुभाव ॥
कौतुक रूप अनंत है, चरणदास बलिजाव ॥
नामभेद किरिया अनंत, अनंत धर अवतार ॥
बीस चार तिनमें अधिक, कहै शुकदेव विचार ॥
राम कृष्ण पूरण कला, चौवीसौमें दोय ॥
निरगुणसे सरगुण वही, भक्तों कारण होय ॥

रागबिलावल ॥ अलख निरंजन अगम अपार । एक अनेक भेप बहु कीन्हें सुन्दर रचना रची सँवार ॥ निरगुन हरि सरगुण हो खेलो अचरज लीला करि विस्तार । अपनो चरित आपही देखे ऐसो अद्भुत कौतुकधार ॥ रूप वराह पकरि हिरण्याक्षहि धरती लाये ताहि सिधार । यज्ञपुरुप अरु दत्तात्रेयी अरु श्रीबद्रीपतिहि विचार ॥ सनत्कुमार ऋषभदेव वधू बराह पृथू मच्छ कूर्म उदार । हयग्रीव अरु हंस रूपही महाबली नरसिंह बलधार ॥ हरि परगट ह्वै गजै छुटायो वामन कपिल सरस गुणसार । मन्वन्तर धन्वन्तर प्रगटे परशुराम रामचन्द्र मुरार ॥ पूरण कला ईश तिहुँपुरको कृष्ण प्रगट हो कंस पछार । वेदव्यास अरु बोध कलंकी ये भये सब

चौवीस अवतार ॥ युग युग माहिं आप परगट हैं दुष्ट दलन सन्तन रखवार ॥ चरणदास शुकदेव श्यामकी बाँकी गतिको वार न पार ॥

दोहा—एक एकसो आगरो, महिमा कही न जाय ॥
अनंत रँगीले महलमें, आपहि बैठे आय ॥

अनन्त रँगीले महल बनाये । तामें आप रामहीं आये ॥
राम रूप गुण न्यारे न्यारे । गिनत शारदा गणपति हारे ॥
मन्दिर रूप बहुत छबि सोहै । जहाँ तहाँ मेरो मन मोहै ॥
हरे श्वेत पीत अरु लाले । पिसताकी ऊदे अरु काले ॥
बेलदार लहरा छबि बूटे । चीतमताले और तिखूंटे ॥
बूँद बूँद अवगंडे दारे । जानौ चित्तर हाथ सँवारे ॥
रँगा रंग बहु चित्तरकारी । कहूं कहाँलौं मों बुधिहारी ॥
दो पाये अरु पुनि चौपाये । बहु पाये कछु कहे न जाये ॥
वृक्षरूप अरु पक्षी नाना । कीट पतंगा थिर चर जाना ॥
जलमें मीन बहुत परकारे । चरणदास शुकदेव विचारे ॥

दोहा—थावर जंगम चर अचर, बहुत छबीली भाँति ॥
राजस तामस सात्विकी, बहु अधीन बहु क्रांति ॥
वानर नर असुरा सुरा, यक्षगण गन्धर्व प्रेत ॥
सबही महल बराबरी, सबही सेती हेत ॥

खिरकी नैन चावसों खोलै । मुख द्वारे नानाविधि बोलै ॥
बहुत भाँति की नाना वानी । चतुर कूट भोली अरु यानी ॥
कहिं अबोल कहिं बोल न आवै । पै सब महलन वह दरशावै ॥
साक्षात हरिही कूं जानै । भवन भवनमें ताहि पिछानै ॥
काया क्षेतर ज्ञानी जानै । क्षेत्रज्ञ आतम रूप बखानै ॥

देही क्षर गीतामें गायो। अक्षर जीव खोल दिखलायो॥
काया मन्दिर आप रमायो। ताते राम नाम धरवायो॥
देह सँयोग राम कहलायो। चरणदास शुकदेव बतायो॥

दोहा—सूरज चींटी आदि दे, लघु दीरघके माहिं॥
सब में पोई आतमा, बाहर कोई नाहिं॥
छोटे भांडे में करैं, छोटाही परकाश॥
बड़े जु भाँड़ेमें करै, ज्यादा होय उकाश॥
ज्ञानवन्तकूं मैं दियो, दीपक को दृष्टान्त॥
जो वह समझै चावसूं, मिटै तिमिर अरु भ्रान्त॥
जैसेही है पिण्ड में, तैसेही ब्रह्मण्ड॥
भीतर बाहर रमिरह्यो, सातद्वीप नवखण्ड॥

आप लखेते वाकूं पावै। जो पै सद्गुरु भेद बतावै॥
ज्ञान दृष्टि सेती दरशावै। आपा मिटै ब्रह्म ठहरावै॥
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय जहँ नाहीं। ध्याताध्यानध्येयमिटि जाहीं॥
जबहो एक दूसरा नासे। बन्ध मुकत के रहैं न साँसे॥
मृतक अवस्था जीवत आवै। करमरहित अस्थिरगति पावै॥
तब कोइ मिन्तर वैरी नाहीं। पाप पुण्यकी परै न छाहीं॥
हर्ष शोक सम होजा दोऊ। रक्षा करो कि मारो कोऊ॥
कोऊ हाथमें भोजन देजा। कोऊ छीनकर योंहीं लेजा॥
दोनों एकबराबर वाके। जग व्योहार कछूनाहिं जाके॥
हरि बिन और पिछान न कोई। तिनके इच्छा रही न दोई॥
ज्ञानदिशा ऐसे करि गाई। चरणदास शुकदेव बताई॥

दोहा—ज्ञानदिशा आवन कठिन, विरला जानै कोय॥
ज्ञानदिशा जब जानिये, जीवत मृत्यक होय॥

वाचक ज्ञानी ।

वाचक ज्ञानी बहुतक देखे । लक्ष ज्ञानी कोइ लेखे लेखे ॥
ज्ञानी बिगडै विषयी होई । कथै एक अरु चाले दोई ॥
बुरे करम औगुण चितलावे । भले करम गुण सब बिसरावे ॥
विषय वासनाके रँगराते । झूँठ कपट छलबल मदमाते ॥
इन्द्री वश मन हाथ न आवै । पाप करनसों नाहिं डरावै ॥
ज्ञान कथै अरु बाद बढ़ावे । रहन गहनका भेद न पावे ॥
ब्रह्मवृत्तका आवन भारी । चरणदास शुकदेव विचारी ॥
दोहा–उनतीसो लक्षण लिये, भक्त सहतहो ज्ञान ॥
ज्ञानदिशा जब आयहै, करै आतमाध्यान ॥

नवधाभक्ति ।

भक्तिदिशाअबकहतहैं, बिसरे आपाआप ॥
चरणदास यों कहतहैं, छूटै तीनों ताप ॥

अष्टपदी ।

नवधाभक्ति सँभारि अंग नौ जानिले । श्रवण चिंतन और कीर्त्तन मानिले ॥ सुमिरण वन्दन ध्यान और पूजा-करो । प्रभुसों प्रीति लगाय सुरति चरणन धरो ॥ होकरि दासहिभाव साध संगति रलो । भक्तनकी कर सेव यही मत है भलो ॥ आपा अर्पण देय धीर्य्य दृढता गहो ॥ क्षमाशील सन्तोष दया धाररहो ॥ यह जो मैंने कहा वेदका फूल है । योग ज्ञान वैराग्य सबनका मूल है ॥ प्रेमाभक्तिका तात पात तीनौं नसैं । धर्म अर्थ काम मोक्ष सकल तामें वसैं ॥ जो राखै मनमाहिं विवेक विचारसों । पावै पद निर्वाण बचै जग भारसों ॥ कहैं गुरु शुकदेव मायाके भावसों । चरणहिंदासा-होय सुनौ बहुचावसों ॥ १२३ ॥

राग सोरठ वा गौरी वा आसावरी ।

साधो नवधाभक्ति करो रे । कलियुगमें यह बड़ो पदारथ गहि गहि ताहि तरो रे ॥ जे जे यासों भये शिरोमणि तिनको नाम सुनाऊं । बढै कथा विस्तार कहूँ तो याते सूक्षम गाऊं ॥ जन प्रहलाद तरो सुमिरणते वन्दनसों अक्रूर । चरणकमलकी सेवासेती लक्ष्मी रहत हजूर ॥ चन्दन चर्चतहूं पृथुराजा उतरो भवजलपार । बलिराजा तन अर्पणकीन्हों सदा रहैं हरिद्वार ॥ परमदास हनुमतहू उबरो उत्तम पदवीपाई । सखा सुभाव तरो है अर्जुन ताकी महिमा गाई ॥ मुक्त भयो है परीक्षित राजा सुनि भागवत पुराना । श्रीशुकदेव मुनीसे वक्ता हुयेरूप भगवाना ॥ ज्ञान योग वैराग्य सबनसों प्रेम प्रीति है न्यारी । चरणदासने गुरुकिरपासों सांची बात विचारी ॥

प्रेमाभक्ति ।

दोहा—नवो अंगके साधते, उपजै प्रेम अनूप ॥
रणजीता यों जानिये, सब धर्मनका भूप ॥

चौपाई ।

सब मत अधिकी प्रेम बतावैं । योग युगतसूं बड़ा दिखावैं ॥
प्रेमहिंसूं उपजै वैराग । प्रेमहिंसूं उपजै मन त्याग ॥
प्रेम भक्तिसूं उपजै ज्ञाना । होय चांदना मिटै अज्ञाना ॥
दुर्लभ प्रेम जु हाथ न आवै । हरि किरपा करि दे तो पावै ॥
प्रेम प्रीतिके वश भगवाना । सकल शास्तर कियोबखाना ॥
किसी भक्ति हिये प्रेमजुजागे । तो हरि दरशत रहै जुआगे ॥
प्रेमहिंसूं जगकूं उपजावै । निर्गुन सर्गुन होहो आवै ॥
सकल शिरोमणि प्रेमहि जानो। चरणदास निहचै मन आनो ॥

दोहा—प्रेम बराबर योग ना, प्रेम बराबर ज्ञान ॥
प्रेमभक्तिबिन साधिवो, सबही थोथाध्यान ॥

प्रेम छुटावै जगतकूं, प्रेम मिलावै राम ॥
प्रेम करै गति औरही, लैपहुँचै हरिधाम ॥

अष्टपदी।

वह करै काग सूं हंसा। एकरहै पिया का संसा ॥
वह जात बरन कुल खोवै। अरु बीज विरहका बोवै ॥
जो प्रेम तनक चित आवै। वह औगुण सबै नशावै ॥
प्रेमलता जब लहरै। मन बिना योगही ठहरै ॥
कोई चतुर खिलारी खेलै। वह प्रेम पियाला झेलै ॥
जो धड़पै शीश न राखै। सोई प्रेम पियाला चाखै ॥
तन मन सूंजा बौराई। वह रहै ध्यान लौलाई ॥
वह पहुँचै हरिके पासा। यों कहैं चरणही दासा ॥

दोहा–प्रेमीजन हरि आपा हो, आपा निकसै नाहिं ॥
गुरु शुकदेव दिखावई, समझ देखि मनमाहिं ॥
हिरदे माहीं प्रेम जो, नैनौं झलकै आय ॥
सोइ छका हरिरसपगा, वा पग परसो धाय ॥
गद्गद वाणी कंठमें, आंशू टपके नैन ॥
वहतौ विरहिनि रामकी, तलफत है दिनरैन ॥
हायहाय हरि कब मिलैं, छाती फाटी जाय ॥
ऐसा दिन कब होयगा, दर्शन करैं अघाय ॥
विनदर्शन कलना पड़ै, मनुआँ धरै न धीर ॥
चरणदासकी श्यामबिन, कौन मिटावै पीर ॥
पीवबिना तो जीवना, जगमें भारी जान ॥
पिया मिलै तो जीवना, नहीं तौ छूटै प्रान ॥
मुख पियरो सूखै अधर, आँखैं खरी उदास ॥
आहजु निकसै दुखभरी, गहिरे लेत उसाँस ॥

वह विरहिनि बौरी भई, जानत ना कोइ भेद ॥
अगिनि बरै हियरा जरै, भये कलेजे छेद ॥
अपने वश वह नारही, फँसी विरहके जाल ॥
चरणदास रोवत रहै, सुमिरिसुमिरिगुणख्याल ॥
बातनको विरहा लगो, ज्यों घुन लागो दार ॥
दिनदिन पीरी होतहै, पिया न बूझे सार ॥
वैनहिं बूझैं सारही, विरहिनि कौन हवाल ॥
जब सुधि आवै लालकी, चुभत कलेजे भाल ॥
पीव चहो कै मत चहौ, वहतौ पीकी दास ॥
पियके रँग रातीरहै, जग सो होय उदास ॥
पीपीकरते दिन गया, रैनि गई पिय ध्यान ॥
विरहिनिके सहजे सधै, भक्तियोग अरु ज्ञान ॥
विरहिनिके एक रामबिन, और न कोई मीत ॥
आठपहर साठौ घडी, पियामिलनकी चीत ॥
जापकरै तौ पीवका, ध्यान करै तौ पीव ॥
पीव विरहिनका जीवहै, जी विरहिनिका पीव ॥

इति भक्तिपदार्थ सम्पूर्ण ।

अथ चारौयुगवर्णन ।

सतयुग ।

कुंडलिया ॥ सतयुग सांचा बोलते, परमहंस को ध्यान । सतवादी सत राखते, सतनहिं देते जान ॥ सतनहिं देतेजान प्रान जोपै तजि देही । निश्चय होती मुक्ति, दरशते राम सनेही ॥

शुकदेव कही चरणदास सो, अबहीं सतयुग जान । सतबोलौ सतसों रहो, सतकी गहिये आन ॥ १ ॥

त्रेता।

त्रेतामें तपसाधते, आसन संयम धार । पांचौ इन्द्री रोकते, जब मन जाताहार ॥ जब मन जाताहार खैंचि अनहदमें धरते । कै अपनोही इष्ट,ध्यान ताहीको करते ॥ आप विसजर्न होय,मुक्ति निश्चयकरि पाते । चरणदास शुकदेव तपस्या चाल दिखाते २ ॥

द्वापर।

द्वापर पूजा वंदना, प्रेमसहित जो होय । कहा राजसी मानसी, पूजाकहिये दोय ॥ पूजा कहिये दोय जैसी जाके मन भावै । धारै नेम आचार,अंतना चित्त डुलावै ॥ हितकरि पूजा कीजिये, द्वापरको यह भेव । चरणदास निश्चय करौ, कहिया श्रीशुकदेव ॥ ३ ॥

कलियुग ।

कलियुग हरि गुण गाइये, गुणावादही सार । भजन करो मन मगन ह्वै, भय अरु सकुच निवार ॥ भय अरु सकुच निवार जातिकुलगर्वबहावो। साज बाज लै संग, रामको गाय रिझावो॥ कथा कीर्त्तन सों तरै, कलियुगहीके माहिं ॥ शुकदेवकहि चरणदास सों तारौ, गहि गहि बाहिं ॥ ४ ॥

इति चारौयुगवर्णन सम्पूर्ण।

अथ अंगवर्णन।

नाममहिमा।

दोहा-प्रणऊं श्रीशुकदेवकूं, वाणी कहूं अगाध ॥
महिमा गाऊं नाम की, सबमिलिसुनियोसाध॥

ज्योंकी त्योंहीं कहत हूं, कछू न राखूं भेद ॥
निश्चय आवै नामकी, छूटै सबही खेद ॥
जन्म मरण यमदंड के, गर्भ वासकी त्रास ॥
नाम रटे सबहीं छुटै, लख चौरासी गास ॥
कई बार जो यज्ञ करि, योग करै चितलाय ॥
चरणदासकहैंनामबिन, सभी अफल ह्वैजाय ॥
अष्टधातुमें गुण नहीं, जो पारस के माहिं ॥
तप तीरथ व्रत साधना, राम नाम सम नाहिं ॥
ज्यों सेमरका सेवना, ज्यों लोभी का धर्म्म ॥
अन्न बिना भुस कूटना, नाम बिना यों कर्म्म ॥
छोड़ै सबहीं वासना, हो बैठै निष्काम ॥
चरणकमलमें चित धरै, सुमिरै रामहिं राम ॥
ऐसा हो जब संत हो, तब रीझै करतार ॥
दर्शन दे अपना करै, कभी न छोडै लार ॥
चार वेद किये व्यासने, अर्थ विचार विचार ॥
तामें निकसी भक्तिही, राम नाम ततसार ॥
जिनकहिया शुकदेवकूं, सुनिया प्रेम प्रतीति ॥
तिनजगमेंपरगट कियो, जैसी चहिये रीति ॥
ब्रह्महत्या अरु नारि की, बालक हत्या होय ॥
राम नाम जो मन वसै, सबकूं डारै खोय ॥
हियआवतजग दुख टरै, कंठ आय अघ जाय ॥
मुखसूं बोलै आयकरि, ताकी कौन चलाय ॥
ऐसाही हरिनामहीं, मोहिं रामकी सौंहिं ॥
जाकूं होवै परखही, सो समझै ह्यां लौहिं ॥
बिन समझै पातक नशैं, समझ जपै हो मुक्ति ॥

चरणदास यों कहत हैं, जो कोइ जानै युक्ति ॥
नामहिं लै जल पीजिये, नामहिं लेकर खाह ॥
नामहिं लेकरि बैठिये, नामहिं लै चल राह ॥
जबलग जागै राम कहु, तन मनसूं यहि चीत ॥
चरणदास यों कहतहैं, हरि बिन और न मीत॥
तेरा तौ कोइ है नहीं, मात पिता सुत नार॥
तातै सुमिरो रामकूं, हे मन वारम्वार ॥
जिहिकारणभटकतफिरै, घरघर करतसलाम ॥
तेरे तो वे हैं नहीं, ये मन सुमिरो राम ॥
जीवतही स्वारथ लगै, मूये देह जराय ॥
ऐ मन सुमिरो रामकूं, धोखे काहि पराय ॥
हाथी घोडे धन घना, चन्द्रमुखी बहुनार ॥
नाम बिना यमलोकमें, पावै दुःख अपार ॥
जबलग जीवै रामकहु, रामहिं सैती नेह ॥
जीव मिलैगो राममें, पडी रहैगी देह ॥
अचरज साधन नामका, भक्तियोग का जीव ॥
जैसे दूध जमायके, मथि करि काढा घीव ॥
कुं०—आठ मास मुखसूं जपै, सोलह मास कँठजाप॥
बत्तिसमास हिरदै जपै, तनमें रहै न पाप ॥
तनमें रहै न पाप, भक्ति का उपजै पौधा ॥
मन रुकजावै जहां, अपरबल कहियेयोधा ॥
शुकदेव कही चरणदाससूं, यही भेद ततसार ॥
गहुरू आवै नाभिसें, ताका कहूँ विचार ॥
दोहा—पांचवरष जप नाभिसों, रगरग बोलै राम ॥
साहिब निज भक्तहो, पहुँचै हरिके धाम ॥

त्रिकुटीमें जप रामकूं, जहां उजाला होय ॥
श्वासा माहीं जपेते, द्विविधा रहै न कोय ॥
गगन मँडलमें जापकरि, जितहै दशवां द्वार ॥
चरणदास यों कहत हैं, सो पहुँचै हरिदरबार ॥
नासा अग्रे जापकरि, देखै नूर अगाध ॥
बहुतकअचरजअरुखुलै, चरणदास कहेसाध ॥
नाम उठाकर नाभिसूं, गगन माहिं लैजाय ॥
जहां होय परकाशही, शुकदेव दिया बताय ॥
मनहीमनमें जापकरि, दर्पण उज्ज्वल होय ॥
दर्शन होवै रामका, तिमिरजाय सब खोय ॥
कूककूक कर नाम जप, छुटै सात अरु पांच ॥
जासों मन ठहरा रहै, चरणदास कहैं सांच ॥
सुरत माहिं जो जपकरै, तनसूं न्यारा जौन ॥
मिलै सच्चिदानन्दमें, गहे रहै जो मौन ॥
सकल शिरोमणि नामहै, सब धर्मनके माहिं ॥
अनन्य भक्त वहि जानिये, सुमिरण भूलै नाहिं ॥
आन धरम मानै नहीं, आनदेव नाहिं ध्यान ॥
ऐसे भक्त अनन्य कूं, कोई पावै जान ॥
पतिव्रता वह जानिये, आज्ञा करै न भंग ॥
पिय अपनेके रँग रतै, और न सूनै ढंग ॥
अपने पियकूं सेइये, आन पुरुष तजिदेह ॥
पर घर नेह निवारिये, रहिये अपने गेह ॥
आज्ञाकारी पीवकी, रहै पियाके संग ॥
तन मनसूं सेवा करै, और न दूजो रंग ॥
रंग होय तौ पीवको, आन पुरुष विषरूप ॥

छाहँ बुरी परघरनकी, अपनी भलीजु धूप ॥
अपने घरका दुख भला, परघरका सुख छार ॥
ऐसे जानै कुलवधू, सो सतवन्ती नार ॥
पतिकी ओर निहारिये, औरनसे कह काम ॥
सबै देवता छोड़कारि, जपिये हरिका नाम ॥
खसम तुम्हारो राम है, इत उत झँखमतमारि ॥
चरणदास यों कहतहैं, यही धारणा धारि ॥
यह शिर नवै तो रामकूं, नाहीं गिरियो टूट ॥
आनदेव नहिं परसिये, यह तन जावो छूट ॥
पतिव्रता को व्रतगहो, व्यभिचारिणिअँगटार॥
पति पावै सब दुख नशैं, पावै सुक्ख अपार ॥
जब तू जानै पीवही, वह अपनौ करिलेइ ॥
परमधाममें राखिकारि, बाँह पकारि सुख देइ ॥
यही सिखायै देतहूं, धारो हिरदय माहिं ॥
ऐसा पौधा बोइये, ताकी बैठौ छाहिं ॥
सतवादी सतसूं रहो, सतही मुखसूं बोल ॥
एक ओर हरिनाम रख, एक ओर जग तोल ॥
सभी निचोरे कहतहूं, भक्ति करो निष्काम ॥
कोटि तपस्या यही है, मुखसूं कहिये राम ॥
रामनाम मुखसूं कहै, रामनाम सुन कान ॥
रोम रोम हरिकूं रटो, ऐसी गहिये बान ॥
विद्या माहीं वाद है, तपके माहीं ऋद्धि ॥
राम नाममें मुक्ति है, योगमाहिं यों सिद्धि ॥
दोहा—ते त्यागौ वासना, राखो रामहि नाम ॥
मोखबन्ध छुटिजायगे, पहुँचौ हरिके धाम ॥

राम नाममें ये सबै, ऋद्धिसिद्धि औ मोक्ष ॥
ऐसा इष्ट सँभारिये, चरणदास कहि सोक्ष ॥
जाका किया सब बना, सात द्वीप नवखण्ड ॥
चरणदास यों कहत हैं, तीन लोक ब्रह्मण्ड ॥
तवकारणसबकुछकिया, नाना विधि सुख दीन ॥
तैं वाकूं जाना नहीं, नाम न कबहूं लीन ॥
अबकेऔसरफिरिबयो, पाई मानुष देह ॥
चरणदास यों कहतहैं, राम नामहीं लेह ॥

राग केदारा ॥ सुनौ भाई नामकी महिमा । मुक्तिचारौं सिद्धिआठौं वसत हैं तहँमा ॥ वालमीक सो वनको वासी किये थे जिन पाप। भयोहै सब ऋषि शिरोमणि जपो उलटो जाप ॥ गणिकासी अतिमहापापी सो पढ़ावत कीर । नामके परताप-सेती कियो हरिपुर सीर ॥ अजामीलसे पतित कामी वेश्या-सों रति कीन । चढ़ि विमानै गयो सुरपुर नाम सुत हित लीन ॥ और बहुतै पतित तारे गिने कापै जाहिं । दान जप तप योग संयम नामसमतुल नाहिं ॥ व्यास नारद शिव ब्रह्मादिक रटत जाकूं शेश । गुरुशुकदेव नामको चरणदासकूं उपदेश ॥

कबित्त ॥ नामके प्रताप नन्दलाल आप भयेप्रभु, नामके प्रताप सुत दशरथको कहायो है । नामके प्रताप पैज राखी प्रहलादजूकी, नामके प्रताप दौरो द्वारकासूं धायो है ॥ ना-मके प्रतापकी न महिमा मोपै कहीजात, नामके प्रताप सब सन्तन सहायो है । सोई नाम वास अब आस लगो चरणदास, सोईनाम चारवेद विमल विमल गायो है ॥ नामके प्रताप शबरी सुरनतैं सरस करी, नामके प्रताप अधमलोककूं पठायो है । नामके प्रताप अजामीलकूं विमान आयो, नामके प्रताप गज

ग्राहसूं छुटायो है ॥ नामके प्रताप सब दीननको दुःख हरो, नामको प्रताप शुकदेवजी दृढ़ायो है। सोई नाम वास अब आस लगो चरणदास, सोई नाम चारवेद विमल विमल गायो है ॥

पंचप्रेतवर्णन।

दोहा–नामअंगमहिमाअधिक, मोपै कही न जाय ॥
पांच प्रेत अब कहतहूं, जाकूं सुनि चितलाय ॥
योग तपस्या भक्तिकूं, ज्ञान बिगाड़न पांच ॥
जीवत दुखदै जगतमें, मुये नरक दै आंच ॥
काम क्रोध मोह लोभसे, और पांचवाँ गर्व्व ॥
राज करै वसुधा विषे, इन वश कीनें सर्व्व ॥

कामवर्णन।

काम बली वर्णन करूं, जिन मारे बलवन्त ॥
जाका बकसी नारि है, जीते गुणी महन्त ॥

नारीवर्णन।

रागसोरठ ॥ साधो नारि सबलरे भाई। नहिं मानै राम दुहाई ॥ बांदर ज्यों पकरि नचावै। हरिजीसूं नेह छुड़ावै ॥ दया धर्म सब खोवै। जब नैंन कजल भरिजोवै ॥ जिनका चितचोरा रांड़ी। तिनकी जग थू थू भांड़ी ॥उन सबही सरवस खोया। नरशीश पकरि करि रोया ॥ जनम पदारथ छीना। स्याहीका टीका दीना ॥ दोनों मुखसों खाया। फिर फिरकै गरभ दिखाया ॥ कामकटक मैं सूरी। वह सावँत कहिये पूरी ॥ बड़े बड़े योधा मारे। अरु बहुतक शूर पछारे। गुरु शुकदेव बतावै। बटमारन तोहिं दिखावै ॥ चरणदास यह जानो। तुम छलबल कला पिछानो ॥

नारी नैहारि सुमिरणसूं खोये। राजा परजा मुंडत चुंडत नैनकटाक्षन मोहे॥ राती चूनर चटक मटकले भूषण काजल साधे। मुख मुसकावै मधुरी वानी प्यार प्रीत कर बांधे॥ वहुतनको उन योग छुटायो बहुतनका तप छीनों। बहुतनकी उन भक्ति बिगारी अंग विषय रस दीनों॥ बंधुवां करि बहुनाच नचायो फंदा मोह लगायो। याते सावधानही रहियो मैं तुम-कूं समुझायो॥ गुरु शुकदेव बतावे साधो निश्चय ठगिनी जानौ। चरणदास कहैं हाथ न आवो नीके ताहि पिछानौ॥

साधो पर तिरियासूं डरिये॥ जाके दरश परशके कीये जीवत नरकमें परिये॥ गौतम घरनी सुन्दरि सुनिकै इंद्रासन तजि आयो। जो गति भई जगतमें जानी भलौ कलंक लगा-यो॥ शृङ्गीऋषि वनमें तप कीन्हों सुरपति देखि डरायो। रंभा भेज हरो सत जाको सबही सेज सिरायो॥ दैवत देवत नर जो हूये नारी देख लुभाये। ताको फल ऐसोही पायो अजहूं कुयश सुनाये॥ चरणदास शुकदेव गुरूने दे उपदेश बचाये। यती सती कोइ हाथ न आयो कामी पकरि नचाये॥

अरे नर परनारी मत तक रे। जिन जिन ओर तको डायन-की बहुतनकूं गई भखरे॥ दूध आकको पात कटइया झालैं अँगनकी जानौ। सिंह मुछारे विषकारेको ऐसे ताहि पिछानौ॥ खानि नरककी अतिदुखदाई चौरासी भरमावे। जनम जन-मकूं दाग लगावे हरि गुरु तुरत छुटावे॥ जगमें फिर फिर महिमा खोवे राखै तन मन मैला। चरणदास शुकदेव चितावे सुमिरो राम सुहेला॥

दोहा—नरनारी सब चेतियो, दीन्हों प्रगट दिखाय॥
पर तिरिया पर पुरुषहो, भोग नरकको जाय॥

पर नारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय ॥
घर बाहरकी आग ज्यों, देवै हाथ जलाय ॥

कामजीतन उपाय ।

चटकमटकसब छोडदे, देही रूप बिगार ॥
देख न कोई रीझि हैं, ना होवै लगवार ॥
यही ढाल है जगतकी, लगै न शस्तर काम ॥
आठ अंग हैं कामके, तासूं रहु निष्काम ॥
कामकानमें आय करि, फिर आवत है नैन ॥
बहुरि हियेमें आय करि, लगै बहुत दुख दैन ॥
वह काम बुरारे भाई । सब देवै तन बौराई ॥
पंचौं में नाक कटावै । वह जूती मार दिलावै ॥
मुहँ काला गधे चढ़ावै । वहुलोक तमाशे आवैं ॥
झिड़का ज्यों डोलै कूता । सबहीके मनसूं ऊता ॥
कोई नीके मुख नहिं बोलै । शरमिंदा हो जगमें डोलै ॥
वह जीवत नरकमँझारी । सुन चेतो नर अरु नारी ॥
काम अंग तजि दीजै । सतसंगतिही करि लीजै ॥
कहैं चरण हीं दासा । हरि भक्तनमें कर वासा ॥
दोहा—तन मन जारै कामहीं, चित करै डावाँडोल ॥
धरमकरम सब खोय कै, रहै आप हिय खोल ॥
वह दया क्षमा को मारै । जत सतको पकरि पछारै ॥
शुचि नेमको दूरि कढावै । मुख ऊपर धूरि उडावै ॥
जग भीतर महिमा खोवै । पापों की माला पोवै ॥
वह धीरज नाहीं राखै । वह मुखसों झूठी भाखै ॥
वह चाल चलै विपरीता । करि विषय भोगकी चीता ॥
काम बली जहँ आवै । अरु बहुतक औगुण लावै ॥

यह मैन खोटका पूरा । कोइ जीतै गुरुमुख शूरा ॥
साधु भक्त वही गुनियां । जिन काम दुष्टिको हनियां ॥
चेत कही शुकदेवा । सब चरणदास सुनिलेवा ॥

दोहा—सुनिकै जो चितमें धरै, फेरि चलै वहचाल ॥
खाँड़ा पकरै शीलका, काम हनै ततकाल ॥

अथ क्रोधअंग।

दोहा—क्रोध महा चण्डाल है, जानत है सब कोय ॥
जाके अँग वर्णन करूं, सुनियो सुरति समोय ॥

क्रोधभूतके चरित सुनाऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
क्रोध भूत जब तापर आवै । तन मनकी सब सुधि बिसरावै ॥
नैना लाल वदन सब कारो । रोम रोम व्यापै हत्यारो ॥
महा चण्डाल नीच अतिघोरी । अति विपरीत बुद्धिकारि ओरी ॥
अपने हाथ आपको मारै । अपने कपड़े आपहि फारै ॥
मुहडे झाग मरोडै हाथा । कहै बहकती फूहर बाता ॥
हाफैं बहुत आपको गाली । जेंवत आवै पटकै थाली ॥
कबहुँ शस्त्रसों मारन लागै । कबहूं कुंये पड़ने भागै ॥
भली कहै ताहि भोग सुनावै । बुरे भलेपर ईट चलावै ॥
सबल देख शीला होजावै । निबल देख बहु दुन्दि मचावै ॥
याका यतन करो मनभावै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

दोहा—जिहि घट आवै धूमसूं, करै बहुतही खार ॥
पतिखोवै बुधिकूं हनै, कहा पुरुष कहा नारि ॥

वह बुद्धि भ्रष्ट करिडारै । वह मारहि मार पुकारै ॥
वह सब तनहिंसा छावै । कहिं दया न रहने पावै ॥
वह गुरुसे बोलै बेंडा । साधोंसूं डोलै ऐंड़ा ॥
वह हरिसूं नेह छुटावै । वह नरक माहिं लेजावै ॥

वह आतमघाती जानौ । वह महा मूढ़ पहिचानौ ॥
सोंटौंकी मार दिलावै । कबहूं कै शीश कटावै ॥
वह नीच कमीना कहिये । ऐसे सूं डरता रहिये ॥
वह निकट न आवन दीजै । अरु क्षमा अंकभर लीजै ॥
जब क्षमा आय किया थाना । तब सबही क्रोध हिराना ॥
कहैं गुरु शुकदेव खिलारी । सुनु चरणदास उपकारी ॥

अथ मोहअंग ।

दोहा-क्रोध अंग पूरो कियो, कहूं मोहका अङ्ग ॥
जाहि लगे दुखदे घना, कबहूं छोड़े सङ्ग ॥
माया मोह बिछाइया, जाल सँभारि सँभारि ॥
आय आय तामें फँसे, बहुत पुरुष बहुनारि ॥
फँसे आय कारि चावसूं, लेन गया नहिं कोय ॥
चरणदास यों कहत हैं, पछिताये कहा होय ॥
छूटि सकै नाहिं जालसूं, मिरगा ज्यों अकुलाय ॥
कूद कूद निकसो चहै, ज्यों ज्यों उरझतजाय ॥
मोह शहतसम जानिये, मक्खी सम जियजान ॥
लालच लागे जितफँसे, शीश धुनैं अज्ञान ॥
बन्दीखानो भवन है, सब दिन धंधे जार ॥
मोह छुटावै रामसूं, डारै नरक मँझार ॥
लख चौरासी योनिमें, फिर वह भरमें जाय ॥
ह्वाँसे निकसै कठिनसूं, कबहूं औसर पाय ॥

तिरिया मोह महा बलदाई । मोह संतान सदा दुखदाई ॥
मोह कुटुंब अरु भाई बंधा । समझै नहीं मूढ़ मति अंधा ॥
देव भूत जिहि कारण धावै । ठग चोरी करि खोट कमावै ॥
बस्तर भूषण वाहन मोहा । सब मिलिकियाजीवसूं द्रोहा ॥

द्रव्य लाल अरु हीरा मोती । सब मिल मोह लगावैं गोती ॥
मोह महल धरती अरु गाऊं । बड़ा मोह जो अपना नाऊं ॥
जामें फँसे रंक अरु राजा । तिहिकारण धंधा दुखसाजा ॥
परकाजैं बहुतै दुखपाया । अपना सबही मूल गवाँया ॥
बडे बडे खेद उठाये सबहीं । भूले ध्यान रामका जबहीं ॥
जीते मोह शूरिमा कोई । मिलै रामकूं साधू सोई ॥
होय मुक्ति जग बहुरि न आवै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

मोहनिवारण उपाय ।

दोहा—मोह बड़ा दुखरूपहै, ताकूं मार निकास ॥
प्रीति जगतकी छोंड़दे, जब होवै निरवास ॥
जग माहीं ऐसे रहो, ज्यों जिह्वा मुखमाहिं ॥
घीव घना भक्षण करै, तौ भी चिकनी नाहिं ॥
जगमाहीं ऐसे रहो, ज्यों अम्बुज शर माहिं ॥
रहै नीर के आसरे, पै जल छूवत नाहिं ॥
ऐसा हो जो साधु हो, लिये रहै वैराग ॥
चरणकमलमें चित धरै, जगमें रहै न पाग ॥
मोहबली सबसूं अधिक, महिमा कही न जाय ॥
जाको बांधो जग सबै, छूटै ना बौराय ॥

अथ लोभअंग ।

दोहा—लोभ नीच वर्णन करूं, महापापकी खान ॥
मंत्री जाका झूठ है, बहुत अधर्मी जान ॥
तृष्णा जाकी जोय है, सो अंधा करि देय ॥
घटी बढ़ी सूझै नहीं, नहीं कालका भेय ॥
दम्भमकरछलभगल जो, रहत लोभके संग ॥
मुये नरक लै जाँयगे, जीवत करै उदंग ॥

दे हैं धर्म छुटाय हो, आन धर्म लेजाय ॥
हरि गुरुते वेमुख करैं, लालच लोभ लगाय ॥
चहूँ देश भरमत फिरै, कलह कलपना साथ ॥
लोभ काज उठउठ लगैं, दोड पसारै हाथ ॥

लोभी भक्तहोय नहिं कबहीं। साधु पुराण कहतहैं सबहीं ॥
लोभी सती न होवै शूरा। लोभी दाता सन्त न पूरा ॥
लोभी हितू न होवै सांचा। लोभी रहै जगतमें राचा ॥
लोभी रहै द्रव्य के माहीं। तन छूटै पै निकसै नाहीं ॥
लोभी करै जीवकी घाता। लोभी करै कपटकी बाता ॥
लोभी पाप न करता डरै। लोभी जाय कष्टमें परै ॥
लोभी बेंचै अपना सीसा। लोभी डूबै बिसवेबीसा ॥
गुरु शुकदेव बतावै हमकूं। सो वह कथा कही मैं तुमकूं ॥
चरणदास कहैं लोभ न कीजै। हरिके पदपंकज मन दीजै ॥

दोहा—चींटी बांदर खगनकूं, लोभ बहुत दुख दीन ॥
याकूं तजि हरिकूं भजै, चरणदास परवीन ॥
लोभ घटावै मानकूं, करै जगत आधीन ॥
बोझघटा भिष्टल करैं, करै बुद्धिको हीन ॥
लोभ गये ते आवई, महाबली संतोष ॥
त्याग सत्यकूं संगले, कलहनिवारणशोक ॥
घट आवै सन्तोषही, काह चहै जग भोग ॥
स्वर्गआदिलौं सुखजिते, सबकूं जानै रोग ॥
संतोषीनिरमल दिशा, रहै राम लवलाय ॥
आसन ऊपर दृढ़ रहै, इत उतकूं नाहिं जाय ॥
काहूसे नहिं राखिये, काहूविधि की चाह ॥

परम संतोषी हूजिये, रहिये बेपरवाह ॥
चाह जगतकी दासहै, हरि अपना न करै ॥
चरणदास यों कहतहैं, व्याधा नाहिं टरै ॥

अथ अभिमानअंग।

दोहा—चारअंग पूरे किये, कहूं गर्व गुण गाय ॥
बहुत सिकंदी मारिया, शिरपर छत्र फिराय ॥
अभिमानीचढ़िकरिगिरे, गये वासनामाहिं ॥
चौरासी भरमत भये, क्योंहीं निकसै नाहिं ॥
अभिमानी मींजेगये, लूट लिये धनबाम ॥
निर अभिमानी होचले, पहुँचे हरिके धाम ॥
चरणदास कहै आपाथपै, गिनै आपको पाँच ॥
मान बड़ाई कारने, सहैं जगतकी आँच ॥
करै बड़ाई कारने, परपंची छल धूत ॥
अभिमानी फूले फिरैं, ज्यों मर्घटका भूत ॥

अभिमानीकी मुक्ति न होई। अभिमानी मति अपनी खोई ॥
ऐंठ अकड़ अभिमानी माहीं। अभिमानी नीचा हो नाहीं ॥
बिन नान्हापन सुखनहिं पावै। आनँद पदकूं कैसे जावै ॥
झूठकपट अभिमानी खेलै। कंचन बर्तन माटी मेलै ॥
भगल दंभ नितही मन माहीं। निकट सांचकभू आवै नाहीं ॥
हूं हूं हूं करताही डोलै। काहूते सीधा नहिं बोलै ॥
इन लक्षण जीवत दुख पावै। नरक माहिं तन छूटै जावै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै। पूरासो अभिमान नशावै ॥

दोहा—चरणदास यों कहतहैं, सुनियो सन्त सुजान ॥
मुक्तिमूल आधीनता, नरकमूल अभिमान ॥

रूपवन्त गरवावै । कोइ मोसम दृष्टि न आवै ॥
तरुणापा गरवाना । वह अँधरा होवै राना ॥
कहै धन मधिमें परवीना । सब मेरेही आधीना ॥
कहै कुल अभिमानीसूचा । मैं सब जातिनमें ऊंचा ॥
वह विद्या गर्व जु भारी । करै वाद विवाद अनारी ॥
अरु भूप करै अभिमाना । उन आपैही कूं जाना ॥
उन काल नहीं पहिंचाना । सो मार करै घमसाना ॥
गुरु शुकदेव चितावै । तोहिं परगट नैन दिखावै ॥
यम बाँधि पकरि लैजावैं । वै बहुतै त्रास दिखावैं ॥
जब कहाजाय अभिमाना । मेरा नीका सुन यह ताना ॥
फिर डारै नरक मँझारी । सुनि चेतौ नर अरु नारी ॥
तो मद मत्सरता तजि दीजै । साधोंके चरण गहीजै ॥
हरिभक्ति करौ चितलाई । जब सकल व्याधि छुटिजाई ॥
कर जाति वरणकुल दूरा । हो सतसंगतिमें पूरा ॥
जब मुक्तधामकूं पावै । फिर गर्व जौन नहिं आवै ॥
कहैं गुरु शुकदेव बखानौ । यह चरणदास मन आनौ ॥

दोहा—मनमें लाय विचारिकूं, दीजै गर्व निकार ॥
नान्हापन जब आयहैं, छूटै सकल विकार ॥
पांचों उतरैं भूत जब, ह्वैहौ ब्रह्म अरूप ॥
आनँद पदकूं पायहौ, जित है मुक्तस्वरूप ॥
पांच प्रेत जो ये कहे, सद्गुरुके परताप ॥
शील अंग अब कहतहूं, जासूं छूटै पाप ॥

इति पंचप्रेतवर्णन ।

अथ पंचप्रेतनिवारणमन्त्र।

शीलअंगवर्णन।

दोहा—अब मैं गाऊं शीलकूं, येहो सन्त सुजान ॥
नर नारी सबही सुनौ, दैदै चित बुधि कान ॥
रूपगुणी कुलंवत जो, अरु होवै धनवंत ॥
शील बीनाशोभा नहीं, भिष्टै नरक पडंत ॥
शील विना जो तप करै, करै शील विनदान ॥
योगयुक्तिकरै शीलविन, सो कहिये अज्ञान ॥
शील बडोही योगहै, जोकर जानै कोय ॥
शीलविहीनौचरणदास, कबहुँ मुक्ति नहिं होय ॥
सब शुभ लक्षणतो विषे, शील न आया एक ॥
जप तप निर्फल जाहिंगे, चरणहिंदास विवेक ॥
पूजा संयम नेम जो, यज्ञ करै चितलाय ॥
चरणदासकहैशीलविन, सभी अकारथजाय ॥
सोइ सती सोइ शूरमा, सोइ दाता अधिकाय ॥
शील लिये नितही रहै, तौ निर्फल नहिं जाय ॥
शीलअंग ऊंचोअधिक, उनतीसौं के बीच ॥
जाघट शील न आइया, सो घट कहिये नीच ॥
शील न उपजै खेतमें, शील न हाट बिकाय ॥
जोहो पूरा टेक का, लेवे अँग उपजाय ॥
शील विना नरकै परै, शील विना यम दंड ॥
शीलविनाभरमत फिरै, सात द्वीप नौ खंड ॥
शीलविनाभटकतफिरै, चौरासीके माहिं ॥

पहिले होवै प्रेतही, यामें संशय नाहिं ॥
सब तजि सेवो शीलकूं, राम नाम लौलाय ॥
जीवत शोभा जगतमें, मुये मुक्ति ह्वै जाय ॥
जाको शील सुभाव है, जाकी दूर बलाय ॥
ताकी कीरति जगत में, सुनहो कान लगाय ॥
शील रहेते सब रहैं, जेते हैं शुभ अंग ॥
ज्यों राजा के रहेते, रहै फौज को संग ॥
सत्यगया तौ क्या रहा, शील गया सब झाड ॥
भक्ति खेत कैसे बचै, टूटगई जब बाड ॥
ज्वानीशील न राखिया, बिगड गई सब देह ॥
अब पछितावा क्या करै, मुखपर उडिया खेह ॥
शील गये शोभा घटै, या दुनियाके माहिं ॥
कूकरज्योंझिडक्यौंफिरै, कहींभी आदर नाहिं ॥
शील गये गुरुसूं फिरै, हरिसों बेमुख होय ॥
चरणदास कहाँलौं कहै, सर्वस डारै खोय ॥
धिक जीवन संसार में, ताको शील नशाय ॥
जगमें फिर फिर होत है, मुये ताचना पाय ॥
शील कसैला आँवला, और बडों के बोल ॥
पाछे देवै स्वाद वै, चरणदास कहि खोल ॥
शील निरोगा नींबसा, औगुण डारै खोय ॥
पहिले करुवा दुखलगै, पाछे गुण सुख होय ॥
लखि यही उपदेश है, एक शीलकूं राख ॥
जन्मसुधारोहरि मिलौ, चरणदासकी साख ॥
शीलवंतके चरण को, जो चरणोदक लेय ॥

रोगदोष मिटिजायँ सब, रहै न यमका भेय ॥
आठ अंगसूं शीलही, जा घट माहीं होय ॥
चरणदास यों कहत हैं, दुर्लभ दर्शन सोय ॥
शीलवंत दर्शन बडे, देखत पातक जाय ॥
वचन सुनै मन शुद्ध हो, खोटी दृष्टि सिराय ॥
शील सरोवर न्हाइ करि, करौ रामकी सेव ॥
यासम तीरथ और ना, कहिया गुरु शुकदेव ॥
शील अंग पूरो कियो, महिमा अधिक अपार॥
दया अंग वर्णन करूं, समझै छुटै विकार॥

अथ दयाअंगवर्णन।

दोहा–परमारथमें दया बड, जो घट उपजै आय ॥
परगट हो निर्वैरता, कर्म गाँठि खुल जाय ॥
स्थावर जंगम चर अचर, या जगमें हो कोय ॥
सबही पै हित राखिये, सुखदानीही होय ॥
भोजनकरौसँभालकरि, पानी पीजो छान ॥
हरावृक्ष नहिं तोड़िये, कर्म बचै यों जान ॥
औरौ बहुत विचारि ले, जामें लगै न कर्म ॥
यही तपस्या जानिये, यही दया यहि धर्म ॥
इक इन्द्री दो इन्द्रियां, ती इन्द्री अरु चार॥
पंच इन्द्री लौं जीवकी, हिंसा अकस निवार ॥
खावै वस्तु विचारिकै, बैठै ठौर विचार ॥
जो कुछ करैविचारिकरि, किरिया यही अचार ॥
मनसों रहु निर्वैरता, मुखसूं मीठा बोल ॥
तनसूं रक्षा जीवकी, चरणदास कहि खोल ॥
करुवा वचन न बोलिये, तनसूं कष्ट न देहु ॥

अपनासा जी जानि कै, बनै तौ दुख हरि लेहु॥
मुखसूं जो करुवा कहै, तनसूं देवै कष्ट॥
यही जु हिंसा जानिये, दया धर्मजा नष्ट॥
दश इन्द्री मन ग्यारवाँ, करि विचार ले जान॥
इनहींसूं सुख दीजिये, चरणदास पहिचान॥
काहू दुख नाहिं दीजिये, दुर्जन हो कै मीत॥
सुखदाई सब जगत को, गहो दयाकी रीत॥
कोमलता पर पीरता, सज्जनता निर्दोष॥
सभी दयाके अंग हैं, इनते पावै मोष॥
दया ज्ञान का मूल है, दया भक्ति का जीव॥
चरणदास यों कहत हैं, दया मिलावै पीव॥
दया नहीं तौ कुछ नहीं, सबही थोथी बात॥
बाहर कथनी सोहनी, भीतर लागी घात॥
छापे तिलक बनायकै, माला पहिरी दोय॥
दया बिना बगसम वही, साधरूप नहिं होय॥
दया न आई घटविषे, हीया बडा कठोर॥
यह नगरी कैसे वसै, तामैं हिंसा चोर॥
पंडिताई बहुतै करी, दया न राखी जीव॥
छाँछि छाँछि तौ लैलई, डारि दिया तत घीव॥
तोहिं पण्डित मैं कह कहूँ, मूरखके परवीन॥
लिया न तै मत सूपका, चलनीका मत लीन॥
दया गहेते सब नशैं, पाप ताप दुख द्वन्द्व॥
ऐसी परम पुनीतकूं, तजै सो मूरख अन्ध॥
दयाविना नर पतित है, दया विना नर दुष्ट॥
[दय]ा विना सुनवत बने, सबही थोथी गुष्ट॥

जन्म मरण छूटै नहीं, नाहीं कर्म्म नशाहिं ॥
दया बिना बदला भरै, चौरासीके माहिं ॥
काम क्रोध मोह लोभसे, गर्व आदि भजिजाहिं ॥
चरणदास कहैं दया जो, घटमें पहुँचे आहिं ॥
जितने वैरी जीवके, तिनमें रहैं न एक ॥
चरणदास यों कहतहैं, दया जो आवै नेक ॥
दुख भाजैं सुख हों घने, काया नगरी ढंग ॥
हिंसा रानी जो भजे, लेकर अपनो संग ॥
धन्य दया धनि शीलकूं, जिनसे रीझे राम ॥
गुरु शुकदेव बतावई, सबही सुधरै काम ॥

इति दयाका अंग सम्पूर्ण ।

अथ मायारूपवर्णन ।

राग भैरव ।

बैठा गुरुसूं चलता चेला । सुखी होय रहै रैन अकेला ॥
दया क्षमा रख राम सुहाती । बातकहैं करुवी नहिं ताती ॥
बिन जांचे उपदेश न दीजै । तरकीसूं चर्चा नाहिं कीजे ॥
मौन गहै थोरा सा बोले । पलक न मिले नैन रहै खोले ॥
दृष्टिराख नासाके आगे । सत्य वचन मीठामुख भाषे ॥
रसना उलट अकाश चढ़ावै । बिनहीं बादल जल बरसावै ॥
पवन साधि मनकूं ठहरावै । कामिनि कनकरूप बिसरावै ॥
आसन अडिग सुरत अनहदमें। अन्तर खोलामिले नहिं जगमें ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा होय महन्त कहावै ॥

दोहा–जो बोलै तौ हरिकथा, मौन गहै तो ध्यान ॥
चरणदास यह धारणा, धारै सो सुज्ञान ॥
मायाकी अस्तुति करूं, होय रही संसार ॥
अद्भुत लीला कर रही, शोभा अगम अपार ॥
माया सकल पसार हैं, नाना रँग बहु क्रान्ति ॥
जहँलग यह आकारही, चंचल मिथ्या भ्रान्ति ॥
जैसे सुपना रैनका, मुख दर्पणके माहिं ॥
भासै है पर है नहीं, ज्यों तरुवरकी छाहिं ॥

यह माया सबकूं मोहै। वश होय न ऐसा कोहै ॥
यह बहुत सोहनी लागै। सबही नर नारी पागै ॥
कहिं चमक दमक बहुरूपा। अरु कहीं रंक कहिं भूपा ॥
अरु जहँ तहँ बहुत तमासे। वह भाँति भाँतिही भासे ॥
अरु जहँलग सकल सवादा। कोइ करै जु वाद विवादा ॥
अरु काम क्रोध मद लोभा। अरु मान बड़ाई शोभा ॥
अरु पाचौं इन्द्री जानौ। सब मायारूप पिछानौ ॥
अरु पांच तत्त्व गुण तीनों। सो मायाही कूं चीनों ॥
वह मकर पेच छल जानै। अरु पहर पहर बहुवानै ॥
गुरु शुकदेव जनावै। सब माया खेल दिखावै ॥

दोहा–जेते सुख संसार के, सबही माया जार ॥
तामें दो कणका धरे, एक द्रव्य इक नार ॥
लालच लागे चावसूं, गिरे आयकारि लोय ॥
फँसे आपसूं आपही, गहि नाहिं लाया कोय ॥
पांचौ इन्द्री सों लखै, सो माया आकार ॥
याहीसेती सब भयो, जहँ लग है साकार ॥

अरु मायारूप अनन्ता। कोइ जानै साधूसन्ता ॥
कहा सुना अरु देखा। सब माया रूप विशेखा ॥
आठ सिद्ध नौं[1] माया। जहँ योगी तपी भुलाया ॥
अरु माया फंदे माहीं। सब जीव आइ फँसि जाहीं ॥
वै नरक माहिं दुख पावैं। यम छप्पन त्रास दिखावैं ॥
फिर भुगतै लख चौरासी। वे गरभ योनिके वासी ॥
वे पशू देह धरि धावैं। नहिं मुक्ति ठिकाना पावैं ॥
चरणदास कहैं नर चेतौ। तजौ मायाहीसूं हेतौ ॥

दोहा—जगत वासनाके तजे, मायाकी न वसाय ॥
करम छुटै मिटि जीवता, मुक्तरूप हो जाय ॥

इंद्रीवर्णन-(मन)

फँसे न इन्द्री स्वादमें, चरणकमलमें ध्यान ॥
पर आशा कोइ न रहै, लगै न माया बान ॥
सबसे अधिकी ज्ञानहै, तासे ऊंचो ध्यान ॥
ध्यान मिलावै पीवकूं, पावै पदनिरवान ॥
ध्याता ध्येय कैसे मिलै, होय न बिचमें ध्यान ॥
तीनौ एकहुये बिना, लहै न पद निरवान ॥
इन्द्रिनके वश मन रहै, मनके वश रहे बुद्ध ॥
कहौ ध्यान कैसे लगै, ऐसा जहां विरुद्ध ॥
जित जित इन्द्री जातहैं, तित मनकूं लेजात ॥
बुधिभी संगहि जातहै, यह निश्चयकर बात ॥
जित इन्द्री मनहूं गया, रही कहासूं बुद्धि ॥
चरणदास यों कहतहैं, करि देखो तुम शुद्धि ॥
इन्द्री मनके वश करै, मनकर बुधिके संग ॥

१ नौ निधि।

बुधि राखै हरिपद जहां, लागै ध्यान अभंग ॥
इन्द्री मन मिल होतहै, विषयवासना चाह ॥
उपजै जैसे कामही, नारी मिल अरु नाह ॥
न्यारे न्यारे ततरहैं, होत न कछू उपाध ॥
जुदे राख मन इन्द्रियन, गुरुगम साधन साध ॥
इन्द्रिनसूं मन जुदा करि, सुरतनिरतकरि शोध ॥
उपजै ना विष वासना, चरणदास कर बोध ॥
इन्द्री रोकेते रुकै, और यतन नहिं कोय ॥
मन चंचल रिझवारहै, रसक सवादी सोय ॥
चलौ करै थिर ना रहै, कोटि यतनकरि राख ॥
यह जबहीं वश होयगा, इन्द्रिनके रसनाख ॥
न्यारे न्यारे चहतहैं, अपने अपने स्वाद ॥
इन पांचोंमें प्रीतिहै, कछू न वाद विवाद ॥
दुर्जनके फूटे बिना, तेरी होय न जीत ॥
चरणहिंदासविचारिकरि, ऐसी कहिये रीत ॥
जुदी जुदी पांचो कहु, एक एकका भेद ॥
जो कोइ इनकूं वश करै, सबही छूटै खेद ॥

नेत्रइन्द्री।

यह इन्द्री आँख विचारो। सो देत महादुख भारो ॥
वह राग द्वेष उपजावे, अरु हरष शोक ले आवै ॥
सो रूप माहिं फँसिजावै। तन मनमें व्याधि उठावै ॥
वह देह औरके हाथा। करि डारै बहुत अनाथा ॥
वह फंदे माहीं डारै। अरु काम अगिनिमें जारै ॥
यह डोलै दौरी दौरी। करचित बुधिकी गति औरी ॥
कोइ साधु शूरमा मोडै। जग सेती नैना तोडै ॥

कहैं चरणदास सुनिलीजै । कछु याका यतन करीजै ॥
दोहा-दीपक त्रिया निहारि करि, गिरै पतंग ज्यों जाय ॥
कछू हाथ आवै नहीं, उलटो आप जराय ॥
उन तन मन सभी जराया । कछु भोंदू हाथ न आया ॥
अरु विषय वासना फैला । जब छुटा राम का गैला ॥
तौ मुक्ति कहांसों होई । दिया जन्म पदारथ खोई ॥
अब क्या शिर मारै कोई । घरहीमें दुर्जन सोई ॥
यह दृष्टि सदा की वैरी । जो सुरत बिगारै तेरी ॥
वह माया मोह लगावै । अरु चौरासी भरमावै ॥
शरम सकुच सब खोवै । अरु बीज कुबुधि का बोवै ॥
यह ठग चोरीकी वानी । अरु जार करम अगवानी ॥
यह पानप सभी घटावै । यमपुर के त्रास दिखावै ॥
कहैं गुरु शुकदेवा । ये आँख महादुख देवा ॥
दोहा-ऐसी इन्द्री आँखकी, सो अपनी नहिं होय ॥
गुरु शुकदेव बतावई, चरणदास सुन लोय ॥
दर्शन कीजै साधुका, कै गुरुका कर लोय ॥
जहँ तहँ ब्रह्महिं देखिये, दुविधा दुर्मति खोय ॥
वैरी मितर एक सा, एकै रूप कुरूप ॥
ऐसी होवै दृष्टिही, जब समझै मन भूप ॥

श्रवणइन्द्री ।

सुन दूजे इन्द्री काना । सो गुरु परतापै जाना ॥
जब सुनै कामरस रीता । तब भूलै पढ़ सुन गीता ॥
मन उपजै काम तरंगा । तब होत ध्यानमें भंगा ॥
फिर लोभ वचन सुन औरै । जब तृष्णा चहुँदिशि दौरै ॥
कहि द्रव्यहाथ लगि जावै । यों शोचि शोचि दुख पावै ॥

कहै ठग चोरीकर लाऊं । कहिं गडा दबाहो पाऊं ॥
काहू सुनै जु दौलत बंधा । मनही मन रोवै अंधा ॥
यों उपजै अधिकी लोभा । जब बढै पापकी गोभा ॥
कहैं चरणहिंदास विचारी । सुन चेतौ नर अरु नारी ॥
फिर सुनै बडाई कुलकी । जब पुलक हँसतहै मुलकी ॥
जो अपनी सुनै बडाई । जब अहंहोत अकडाई ॥
फिर करन बडाई लागै । सोता ज्यों कूकर जागै ॥
जब उपजै बहु अभिमाना । अरु नेक न होवै नान्हा ॥
परनिन्दा बहुत सुहावै । नहिं और बडाई भावै ॥
अहंकार बढा मन माहीं । आधीन बिना गति नाहीं ॥
सुनि उपजै तामस अंगा । जब करै बहुतही दंगा ॥
मन क्रोध रूपहो जावै । उठ उठकर मारन धावै ॥
कभी सुनै मोह के बैना । लगै हर्ष शोक दुख दैना ॥
जब सुनै कुटुँबकी नीकी । तब करै खुशी बहु जीकी ॥
कोइ कुटुंब माहिं दुख पावै । सुन रो रो नैन गवाँवै ॥
जो हिरन कानवश हूवा । तौ तीरलागकरि मूवा ॥
शुकदेव कहैं सुन जानो । सब कान विकार पिछानो ॥

श्रवणका सत्कर्म्म ।

दोहा—मन दे सुनिये हरि कथा, सुनिये हरियश कान ॥
ताहि विचारि जु कीजिये, होय भक्तिका ज्ञान ॥

उपजै ज्ञान भक्ति अरु योगा । सुनसुन उपजै राम वियोगा ॥
उपजै प्रेम अनन्य उमाहा । होय उछाह दरशका चाहा ॥
सुन सुन उपजै लक्षण साधू । सुनि २ पावै भेद अगाधू ॥
उपजै साधु संतकी सेवा । गुरुमुख होय सुनै यहि भेवा ॥
सुनि २ उपजै भय अरु लाजा । सोवै सकल सँवारन काजा ॥

सुनि सुनि यती सती होजावै। नान्हाहो अभिमान नशावै॥
सुनि सुनि छूटै यमकी त्रासा। चौरासीमें लहै न बासा॥
सुनि सुनि चार पदारथ पावै। आवागमन के बीज जरावै॥
सुनिसुनि काग हंस हो जाई। चरणदास शुकदेव बताई॥

दोहा-सुनि सुनि उपजै सुबुधिही, लागे हरिका रंग॥
सुनिसुनिउपजैकुबुधिही, खोटी उठै तरंग॥
ऐसी इन्द्री कानकी, जाके युगल सुभाव॥
कथा कीरतनहीं सुनौ, करि २ कोटि उपाव॥
वचन सुनो गुरु साधुके, मनकूं लावो मोर॥
विषय वासनासूं निकस, आवै हरिकी ओर॥

जिह्वाइन्द्री।

सरवन इन्द्री में कही, दोनों अंग दिखाय॥
जिह्वा इन्द्री कहतहैं, चरणदास चितलाय॥
कुटिल जु इन्द्री जीभकी, चाहै षटरस स्वाद॥
यावश हो औगुण करै, जन्म जाय बरबाद॥
यह बहुत चटोरी कहिये, याहीते डरते रहिये॥

यह चोरीभी करवावै। यह पकड़ बन्धमें ध्यावै॥
करै याही कारण जारी। यह करे बहुतही ख्वारी॥
यह अमल खान सिखलावै। अरु गाली मार दिलावै॥
अरु बहुतै झूठ बुलावै। हो मीत नरक लेजावै॥
खेलै याही कारण जूवां। दुनियामें फिट फिट हूवां॥
ये पांचौ ऐब सुनाऊं। रसना में सभी दिखाऊं॥
यह महा अपरबल जानौ। अरु रणजीता हो मानौ॥

दोहा-जिह्वाके जीते बिना, गये जन्म सब हार॥
चरणदास यों कहतहैं, भये जगतमें ख्वार॥

वंशी डारी तालमें, मछरी लागी आय॥
जिह्वा कारण जिवदियो, तलफितलफिमरिजाय॥
तजा न जिह्वा स्वादकूं, वा सँग दीन्हें प्रान॥
जो कोइ ऐसा जगत में, सो अज्ञानी जान॥
यासूं ले हरनामहीं, गुणवादहीं भाख॥
जो बोलै तौ सांचहीं, नाहीं मुखमें राख॥
मीठा वचन उचारियो, नवता सबसूं बोल॥
हिरदैमाहिंविचारिकरि, जब मुख बाहर खोल॥
बिना स्वादही खाइये, राम भजनके हेत॥
चरणदास कहै शूरमा, ऐसे जीतो खेत॥
जिन जीता है जीभकूं, तिन जीती सब देह॥
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्ति धाम फल लेह॥
रसना जीतै भक्त जो, सो योगी सो साध॥
अगम पन्थ वहि पग धरै, पहुँचै देश अगाध॥

त्वचाइन्द्री।

त्वचा सु इन्द्री कामकी, नितही खेलै दाव॥
पशुपक्षी असुरा नरा, फँसे आयकरि चाव॥
यह त्वचा सुमल मल मांजै। अरु काजल सुरमा आंजै॥
यह तेल फुलेल लगावै। अरु चिकना गात बनावै॥
अरु वस्तर भूषण पहिरै। करै अंजन मंजन गहिरै॥
अरु सपरसकी विधि ठानै। सब याहीकूं सुख मानै॥
अरु फँसे आय करि दोऊ। अब निकसन कैसे होऊ॥
हित गांठ पेंचगहि दीन्हा। दोउ नेह वचन बहु कीन्हा॥
अरु एक एकनै बाधा। वह समझै नाहीं आधा॥
अब शीश धुनैं पछितावैं। दोउ चले नरककूं जावैं॥

कहै चरणदास नहिं जानौ । तुम औगुण ना पहिंचानौ ॥

दोहा—त्वचास्वादसब वशभये, फँधे जगतके माहिं ॥
जो कोई निकसो चहै, सोभी निकसै नाहिं ॥
धोखेकी हथिनी लखी, आयो गज ललचाय ॥
खंदक माहीं रुकि गयो, शीश धुनै पछिताय ॥
कछू हाथ आयो नहीं, परो फन्दमें जाय ॥
मैन महावत वश भयो, शिरमें अंकुश खाय ॥
जङ्गलमें आनन्दसूं, बहुतै केलि कराय ॥
अब तौ द्वारे भूपके, परौ बन्धमें आय ॥
ऐसेही यह नर फँधो, देखि कामिनी रूप ॥
जन्म गँवायो दुख भरो, पड़ो आविद्या कूप ॥
करी न हरिकी भक्तिही, गुरुसेवा तजिदीन ॥
सुनी न हरिकी गुणकथा, सत संगत नहिं कीन ॥
फिर ऐसो कब होयगो, पावै मानुष देह ॥
अबतौ चौरासी विषे, जाय कियो उन गेह ॥
जीतौ इन्द्री त्वचाकी, कहिया श्रीशुकदेव ॥
यासे तपही कीजिये, चरणदास सुन लेव ॥

शीत उष्णका दुख नहिं मानै । कोमल सकत एककरि जानै ॥
तपसूं काया उमर गवाँवै । अष्ट सुगन्ध निकट नहिं जावै ॥
आन त्वचा स्पर्श नहिं करै । काम अगिनि हियमें ना जरै ॥
काया ताबन करनी ठानै । यही तपस्या मनमें आनै ॥
त्वचा सु इन्द्री जीतो ऐसे । मैं यह भेद बतायो जैसे ॥
गुरु शुकदेव बतावै सबही । चरणदास कर तनसूं तपही ॥

दोहा—त्वचासुं इन्द्री वश किये, छूटै काम कलेश ॥
यत शत शीलसँतोषसूं, लगै न माया लेश ॥

नासिकाइन्द्री।

त्वचा अंग पूरो कियो, कहूँ नासिका अंग ॥
ताबसअलिसुतजीदियो, जाको कहूं प्रसंग ॥
वास आस गुंजत फिरौ, बैठो कमल मँझार ॥
सूर छिपेसे मुँदिगयो, अब शिर देंदे मार ॥
कुंजर आयो तालपै, जल पीवनके काज ॥
प्यास बुझी करनेलगो, खेलकरनको साज ॥
खेलकरतकमलहिगह्यो, लीन्हों ताहि उपारि ॥
फेरिदियो मुख माहिंहीं, चाबिगयो देजाड ॥
ऐसेही ये नर फँसे, परे काल मुख जाय ॥
चरणदास यों कहत हैं, चले जन्म गवाँय ॥
सुगंध और हरषै नहीं, दुरगन्धै न रिसाय ॥
ऐसी जीतै नासिका, मन भँवरा ठहराय ॥
समझनकूं तुक एक है, भूलनकूं तुकलाख ॥
गुण अवगुण इन्द्री कहे, सो तू मनमें राख ॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, बांधो नरके जाय ॥
चौरासी भरमत फिरै, गर्भयोनि दुखपाय ॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, पावै ना आनन्द ॥
बार बार जगमाँहहीं, छूटै ना सम्बन्द ॥
भक्ति माहिं चित ना लगै, सबही बिगड़ैं काम ॥
जो इन्द्रिनके वशभयो, ताको मिलैं न राम ॥
चरणदास यों कहत हैं, इन्द्री जीतन ठान ॥
जग भूलै हरिकूं मिलै, पावै पद निरवान ॥
इन्द्री जितै सो ब्रह्मज्ञानी। इन्द्री जीतै सोई ध्यानी ॥
इन्द्री जीतै सो हरिदासा। अमरलोकमें पावै वासा ॥

इन्द्री जीतै सोई सिद्धा । अष्टकला अरु पावै ऋद्धा ॥
इन्द्री जीतै सोई शूरा । इन्द्री जीतै सो जन पूरा ॥
इन्द्री जीतै सो सतवन्ता । इन्द्री जीतै गुणी महन्ता ॥
इंद्री जीतै राम रिझावै । इंद्री जीतै सब कुछ पावै ॥
इंद्री जीतै सो संन्यासी । इंद्री जीतै सोइ उदासी ॥
इंद्री जीतै सब फलदायक । इंद्री जीतै सबकुछ लायक ॥
इंद्री जीतै छुटै विदेशा । या जगमें कछु लगै न लेशा ॥
इंद्री जीतै परम सुखारा । निश्चय पहुँचे हरि दरबारा ॥
इंद्री जीतै सो रणजीता । इंद्री जीतै आतममीता ॥
इंद्री जीतै ध्यान लगावै । सो निश्चय ईश्वर ह्वै जावै ॥
इंद्री जीतै मिलै भगवंता । इंद्री जीतै जीवनमुक्ता ॥
चरणदास सुन कहैं शुकदेवा । इंद्री जीतै सो गुरुदेवा ॥

मन ।

दोहा—मन इंद्रिनके वश भयो, होय रह्यो बेढंग ॥
आपा बिसरो जगरलो, हुवो जो नाना रंग ॥
आवै तरंग क्रोधकी, होत युवाके रूप ॥
काम लहर कबहूं उठै, ताके होत स्वरूप ॥
लोभ कामना जब उठै, जभी लोभ रँग होय ॥
मोह कल्पनाके उठै, मोह वरण हो सोय ॥
मनहीं खेलै खेल सब, मनहीं कर अभिमान ॥
मनहीं यह जगह्वै रहो, अब सुनि मनका ज्ञान ॥

कबहूं यह मन होवै गिरही । कबहूं यह मन होवै विरही ॥
कबहूं यह मन होवै रोगी । कबहूं यह मन होवै शोगी ॥
कबहूं यह मन होवै नारी । कबहूं यह मन राखै ख्वारी ॥
कबहूं यह मन दौरा डोलै । कबहूं यह मन टेढ़ा बोलै ॥

कबहूं यह मन कुलका ऊंचा। कबहूं यह मन नकटा बूंचा॥
कबहूं यह मन दुन्दि मचावै। कबहूं क्षमाशील घर आवै॥
कबहूं यह मन होवै दाता। कबहूं करै सूमसी बाता॥
चरणदास कहैं मनकूं जानौ। ऐसी विधि मनकूं पहिंचानौ॥

दोहा—बहुरूपी बहुरंग या, बहुतरंग बहु चाव॥
बहुतभाँति संसारमें, करि करि घने उपाव॥

यह मन राजा होवै भोगी। यह मन त्यागी होवैं योगी॥
यह मन होवै हरिका भक्ता। यह मन होवै योगरु युक्ता॥
यह मन होय विवेकी ज्ञानी। यहमनतपियाजपियाध्यानी॥
यह मन करै दयाकी बातैं। यह मन करै जीवकी घातैं॥
यह मन यती सती अरु शूरा। यह मन काशी पण्डित पूरा॥
यह मन तीरथ वर्त्त उपासी। यह मन ठकुरानी अरु दासी॥
यह मन होवै देवी देवा। या मनका कोइ लहे न भेवा॥
यह मन प्रेमी नेमी जनहीं। चरणदासकहैंसबकुछमनहीं॥

दोहा—या मनके जाने बिना, होय न कबहूं साध॥
जगत वासना ना छुटै, लहै न भेद अगाध॥
तैं मनकूं जाना नहीं, करी न याकी सार॥
चौरासी छूटी नहीं, उपजा वारम्वार॥

मनजीतन उपाय।

मनकूं सतसंगति ले जावो। कानोहरियशकथासुनावो॥
भाँति भाँति के रँग ललचावै। तौ हरिके रँग क्यों न रँगावै॥
तौ याको ज्ञानीही कीजै। जक्त ओर जानै नहिं दीजै॥
कै दीजै हरिहीका ध्यानू। राम भक्तिमें याकूं सानू॥
कै कीजै यह योगी पूरा। याहि सुनावो अनहद तूरा॥
या मनकूं कीजै वैरागी। याकूं कीजै सर्वस त्यागी॥

जग रंग उतारि ब्रह्म रँग लागै। जाते कर्म भर्म भय भागै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै। मन फेरिनकी राह दिखावै ॥

दोहा–मनने आयु गवाँइया, ज्ञान बुझाया दीव ॥
करमलगाभरमताफिरो, मिला न अपने पीव ॥
दौरि दौरि रसओरही, होय रहा कंगाल ॥
नातरु आगे भूपथा, ऊंचा बड़ा दयाल ॥
पांचौ इन्द्री स्वादमें, भयो निपट आधीन ॥
राजबड़ाई सब नशी, भयो मूढ़ मति हीन ॥
सरकिजाय विषओरही, बहुरि न आवे हाथ ॥
भजन माहिं ठहरै नहीं, जो गहि राखूं बाथ ॥
मन निश्चल आवै नहीं, निकसि २ भजिजाय ॥
चरणदास यों कहत हैं, काहूकी न बसाय ॥
पचिहारे ज्ञानी तपी, रहे बहुत शिर मार ॥
मन परेत सूं डर लगै, लै डूबै मँझधार ॥
यह मन भूत समान है, दौड़े दांत पसार ॥
बाँस गाड़ि उतरै चढ़ै, सब बल जावै हार ॥
ज्यों आतममें मन धरै, होय जहां लौलीन ॥
ठहरिरहै फिरि ना चलै, सकल विकलहोक्षीन ॥
भजैतौ जानि न दीजिये, घेरि घेरि करि लाव ॥
या मनकूं परचायकरि, ध्यानहिं माहिं लगाव ॥
और कहौं विधि दूसरी, सुनियो चित्त लगाय ॥
रामनाम मनसूं जपै, चंचलता थकिजाय ॥
पवन रुकै जबमन थकै, और दृष्टि ठहराय ॥
ऐसी साधन साधिये, गुरुगम भेद मिलाय ॥
इन्द्री रोकै मन रुकै, अरु उत्तम विधि एहु ॥

चरणदास यों कहत हैं, यह साधन करिलेहु ॥
इन्द्रिनकूं मन वश करै, मनकूं वशकरै पौन ॥
अनहद वशकर वायुकूं, अनहदकूं लै तौन ॥
याको नाम समाधि है, मन तामें ठहराय ॥
जन्म जन्मकी वासना, ताकूं दग्ध कराय ॥
इन्द्री पलटै मन विषे, मन पलटै बुधि माहिं ॥
बुधि पलटै हरि ध्यानमें, फेरि होय लै जाहिं ॥
दग्ध वासना होय जब, आवागमन नशाय ॥
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्तरूप ह्वै जाय ॥

असत्यका वर्णन।

मनके सगरे भेदही, जाको दियो जिताव ॥
चरणदास यों कहत हैं, झूंठ सांचको न्याव ॥
जो कोइ बोलै झूँठही, ताकूं लागै पाप ॥
जन्म जन्म छूटै नहीं, दुखदे तीनों ताप ॥
बोलै झूठ महा अपराधी। धर्म छुटै उठि लागै बाधी ॥
झूठा सौ सौ सौगँध खाय। झूठा लेवे कर्म लगाय ॥
झूठा करैं बिराना बुरा। झूठा रहै जगतमें गिरा ॥
झूठेकी परतीत न होई। झूठा बोल न बोलै कोई ॥
झूठा हरिकी भक्ति न पावै। झूठा घोर कुण्डमें जावै ॥
झूठेकूं लागै यम मार। झूठा चौरासीमें ख्वार ॥
झूठ वचनका भारी दोष। झूठेकी होय गती न मोष ॥
झूठेके नहिं गुरु न राम। झूठेकूं नाहीं विश्राम ॥
चरणदास शुकदेव बतावैं। झूठे सबी नरककूं जावैं ॥
दोहा–झूठेके मुँह दीजिये, नौसादरका बाप ॥
डराकरै सकुचा रहै, वह शरमिंदा आप ॥

झूठेकूं हत्यारा जानौ। झूठेकूं ठग चोर पिछानौ॥
झूठा कुटिल शराबी होय। झूठा कहिये कामी सोय॥
झूठेहीको जानौ ज्वारी। समझि देखि सबही नर नारि॥
सकल ऐब झूठेमें पाऊं। एकएक क्या खोल दिखाऊं॥
पांचौ खोंट सबनके राजा। सो मैं कहे चितावन काजा॥
झूठ पापकी कहिये खानि। सो वह करै पुण्यकी हानि॥
सबही अवगुण झूठे माहीं। चरणदास शुकदेव बताहीं॥

सत्यवर्णन।

दोहा–साँच बिना साधू नहीं, कबहुँ न मिलि हैं राम॥
सांच विना गति ना लहै, पावै नां निजधाम॥
सत सत मुखसूं बोलिये, सतही चलिये चाल॥
सतही मनमें राखिये, सतही रहिये नाल॥
सांचेकूं ग्रह ना लगे, सांचेकूं नहिं दाग॥
सांचे शाप न लागई, सब दुख जावै भाग॥
बडी तपस्या सांच है, बडा बरत है सांच॥
जासों पाप सभी जरैं, लगै न गर्भकी आंच॥
जाका वचन मुडै नहीं, सांचे सब व्यवहार॥
चरणदास त्रयलोकमें, कभी न आवै हार॥

सांचेके मनहीमें राम। सांचा करै न छलके काम॥
सांचा होकर सुमिरण करै। आप तरै औरन लै तरै॥
सतवादीकी पति है सांच। ताकूं लगै न दिवकी आंच॥
सांचे चोर[1] चुराया घोडा। परमेश्वर ताका रँग मोडा॥
और चोर चोरीसूं गया। सांच प्रताप अचम्भा भया॥

---

१ भक्तमालमें देखो, धाटभक्तकी कथा। सर्वोत्तम भक्तमाल रामरसिकावली "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस बम्बईसे मिलेगा।

औरौ सांच प्रताप अनंता। सबही जानै साधू संता॥
लाख बातका एकहि जोड। सांचा पुरुष सबन शिरमोड॥
आवै सांच परम सुख पावै। चरणदास शुकदेव सुनावै॥
दोहा—सांचेकी पदवी बडी, दुष्ट साधके माहिं॥
दोनों अस्तुतिही करैं, निन्दक कोई नाहिं॥

गुरुमुखवर्णन।

गुरू कहै सो कीजिये, करै सो कीजै नाहिं॥
चरणदासकी सीख सुन, यही राख मनमाहिं॥

गुरुमुखलक्षण।

कथा सुनी व्रतहू किये, तीरथ किये अघाय॥
गुरुमुखके होये बिना, जप तप निर्फल जाय॥
अब गुरुमुखके लक्षण गाऊं। जुदे जुदे करि सब समझाऊं॥
इनकूं समझ धरे हिय कोई। पूरा गुरुमुख कहिये सोई॥
प्रथमहिं गुरुसों झूँठ न बोलै। खोटी खरी करै सब खोलै॥
दूजे गुरुको पय न लगावै। निश्चय गुरुके चरण मनावै॥
तीजे आज्ञाकारी जानौ। इन लक्षण गुरुमुखी पिछानौ॥
जो कोइ गुरुका लेवै नाम। ताको निहुरि करै परणाम॥
जो कहूँ देखै गुरुका बाना। ताकूं जानै गुरू समाना॥
चरणदास शुकदेव बखानै। गुरुभाईकूं गुरुसम जानै॥
दोहा—गुरुभाई कूं पूजिये, धरिये चरणन शीश॥
चरणोदकफिरिलीजिये, गुरुमत विश्वावीश॥
जो कहुँ गुरुका बस्तर पावै। हिये लगाय चूक दृग क्ष्यावै॥
गुरूदेशका मानुष आवै। दै परिकर्मा बलि बलि जावै॥
कहां दया करि दर्शन दीन्हें। मेरे पाप भये सब क्षीन्हें॥
जो अपने गुरु द्वारे जइये। देखत पौरि बहुत हरषइये॥

ह्वांईसूं दण्डवत जु कीजै । दर्शन करिकरि सर्वस दीजै ॥
फिर ठाढ़ो रहै जोरे हाथा । बैठै तब आज्ञा दे नाथा ॥
जो बोले सो मनमें धरिये । अपने अवगुण सबही हरिये ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा गुरुमुख राम रिझावै ॥

साधुमाहात्म्य ।

दोहा-साधुनकी निंदा बुरी, मत कोइ कीजो भूल ॥
दुनियामें दुख पाइ है, रहै नरकमें झूल ॥

साधुका निन्दक तनमन दुखी ।साधुका निन्दक होय ना सुखी॥
निन्दक साधु दरिद्री होय । निंदक डारै सर्वस खोय ॥
साधुका निंदक नरक मँझार । निश्चय खावै यमकी मार ॥
साधुका निंदक पूरा पापी । साधुका निंदक डूबै आपी ॥
मूरख होय सो निन्दा करै । साधुसंतकूं अवगुण धरै ॥
साधुका निंदक श्वान समान । साधुका निन्दका शूकर जान ॥
साधु रामकी कहिये देह । निन्दकके मुख माहीं खेह ॥
चरणदास निन्दा तजि दीजे । भक्तनकी अस्तुतिही कीजे ॥

दोहा-साधुनकी अस्तुति किये, हरिकी अस्तुति होय ॥
भक्तनकी निन्दा किये, प्रभुकी निन्दा सोय ॥

अथ मोहछुटावन अंगवर्णन ।

कुण्डलिया ॥ भक्ति दृढ़ावनकूं कहे, नानाही परसंग । शुकदेव कृपा सों अब कहूं, मोह छुटावन अंग ॥ मोहछुटावन अंग कोई हियमाहीं धारै । कुटुँब जानिसूं छूटिलगै हरि-चरणो लारै । चरणदास यों कहत हैं उपजे मन वैराग ॥ जगत नींदहीसूं खुलै, चौथे पदमें जाग ॥

दोहा- गुरू पूजि जग छोड़िये, भवसागरके द्वन्द्व ॥
साधुनकी संगति करो, तजो जातिकुल बन्द ॥

बन्धु नारि सुत कुटुँब सब, यमकी फाँसी जान ॥
तोहिं छुटावै रामसूं, इनका कहा न मान ॥
खैंचि पकडि ह्वांईराखिहैं, जहां मोहका जाल ॥
जीवत दुख बहु भाँतिके, मुये नरक ततकाल ॥
या प्राणीकूं ठग लगे, सकल कुटुँब परिवार ॥
तिनमें दो बलवन्त हैं, एक द्रव्य इकनारि ॥
नारि किये दुख बहुत हैं, बन्धन बँधे अनेक ॥
जो सुख चाहै जीविका, तिरियाकूं मत पेख ॥
द्रव्य माहिं दुख तीन हैं, यह तू निश्चय जान ॥
आवत दुख राखत दुखी, जात प्राणकी हान ॥
तातें इनकी प्रीति मन, उठै तभी निरवार ॥
ये दुर्जन दुखरूप हैं, ऐसो करो विचार ॥
जो कोई इनमें पगै, तिनसों छूटै राम ॥
चरणदास या कहतहैं, क्यों पावै हरिधाम ॥
हेरिफेरि धनको करत, बितै पहर इक रात ॥
तीनपहर निशिके रहैं, खोवै नारी साथ ॥
नारीके फैलावको, दीखै ओर न छोर ॥
द्रव्य माहिं तृष्णा रहै, चाहै लाख करोर ॥
द्रव्य जोरि मरिजाय जब, हो बैठै तहँ नाग ॥
नारीमें जो चितरहै, ह्वैहै कूकर काग ॥
ऐसेही भरमत फिरै, लख चौरासी देह ॥
कनक कामिनीकूं तजै, जबलग नाहीं नेह ॥
मूरख त्यागन करिसकै, ज्ञानवंत तजिदेह ॥
चौंकायल मृग ज्यों रहै, कहीं न साजै गेह ॥
जो कोइ छोड़े कुटुंबकूं, ऐसीकर पहिंचान ॥

जैसे छूटै बन्धसूं, यम जोरासूं जान ॥
जीवत यम तौ कुटुंब है, घेरि घेरि दुख देय ॥
ऐसे मनुपा देहकूं, लूटैही नित लेय ॥
कै ठग सबकूं जानिये, कै धाडीकै चोर ॥
रणजित कहै तू देखले, लूटत हैं निशि भोर ॥
बाहर कलकल करतहैं, भीतर लावहिं लाव ॥
ऐसो बांधो खैंचकरि, छुटै हाथ नहिं पांव ॥
जालतौंक गलमें पड़ा, ममता बेरी पांय ॥
रसरी मूरुख नेहकी, लीन्हें हाथ बँधाय ॥
डारि दियो अज्ञानमें, परो परो बिललाय ॥
निकसनकूं जबहीं चहैं, कुतका मोह लगाय ॥
रखवारे जहँ पांच हैं, इंद्रिनके रस जान ॥
तबहीं देह भुलाय कै, जो कुछ उपजै ज्ञान ॥
कुटुंब और इन पांचकूं, एक मतोही जान ॥
प्राणीकूं जगमें फँसा, चहै खान अरु पान ॥
ये सब स्वारथही लगै, इनका सगा न कोय ॥
जो शिर मारै धरणिपर, कल्प कल्प करि रोय ॥
मात पिता सुत नारिकी, इनकी उलटी रीति ॥
जगमें देह फँसाय कै, करिकै प्रीतिहि प्रीति ॥
जैसे वाधिक बिछाय कै, जाल माहिं कण्डार ॥
प्रीति करै पक्षी गहै, पाछे करै जु ख्वार ॥
जैसे ठग बहु प्यार करि, भोलापनहीं देह ॥
पहिले लड्डू खवाय कै, पाछे सरवस लेह ॥
हितसूं हरिण बोलाय कै, गोली मारै तान ॥
चरणदास यों कहत हैं, ऐसे इनकूं जान ॥

जलमें वंशी डारिया, अटकाया जहँ मांस॥
मछरी जानै हित कियो, लखो न अपनो नाश॥
भोंदू यह गति ना लखी, पड़ो कुमतिके धंध॥
ज्योंकी त्यों सूझी नहीं, किया मोहने अंध॥
सब ठग यह देखी नहीं, कपट हेत नहिं जान॥
इनहींमें मिलकर चलौ, समझौ ना अज्ञान॥
अब इनके छलकहतहूं, समझे होय उदास॥
जानै ना ह्वाईं रहै, कहै चरणहीं दास॥

अब इनके छल कहि समुझाऊं। भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं॥
पिता कहै तुम पुत्र हमारे। बहुत भरोसे मोहिं तुम्हारे॥
अब तुम ऐसी विद्या पढ़ो। अपने कुलमें ऊंचे चढ़ो॥
सत संगतिमें कभी न जइये। अपने घरमें चित्त लगइये॥
हम तौ हैं दुनियांके कूते। जाति वर्णमें होहिं सपूते॥
कृत्य करो पालो सुत वाम। कथा कीरतनसूं क्या काम॥
अब तुम ठौर हमारी हूजे। हमने किये सो तुमहूं कीजे॥
ऐसी बुद्धि बड़ाई दीन्ही। इनहूं हिरदयमें धारि लीन्ही॥
चरणदास कहैं देखो प्यार। मुये नरक जीवतही ख्वार॥

दोहा–पिता बुद्धि ऐसी दई, रहिये कुटुंब मँझारि॥
जो कुछ है सो जगतमें, धनसम्पति सुत नारि॥
हरिकी राह भुलाय करि, दीन्हों कुटुंब चिताय॥
ताते दुख जगमें घने, चौरासी भरमाय॥

अब सुन माताहू की बातैं। अपना जानि खियावैं तातैं॥
द्रव्य काज उद्यमहीं कीजै। लै माताकी गोदी दीजै॥
करै कमाई सोइ सपूता। नाहीं तौ वह पूत कपूता॥
नारीकूं भूषण पहिनावो। सुत पुत्रीको व्याह रचावो॥

पूजो पित्तर देवी देवा। सकल कुटुँबकी कीजै सेवा॥
अपने कुलको न्योति जिमावो। ताते बहुत बड़ाई पावो॥
बहु विधि स्वारथही सिखलावै। परमारथकी राह भुलावै॥
बारबार जगमें उरझावै। ऐसे तौ नितही चलि आवै॥
जितका तित ह्वांई रखि लीन्हा। चरणदास कहैं जान न दीन्हा॥

दोहा—माताहूने प्यार करि, बहुत दिया शिरभार॥
यही जो नीको धारिये, महल द्रव्य सुत नारि॥

अब नारीकी गति सुनि लीजे। तामें चित्त कबहुँ नहिं दीजे॥
छल बलकरि वश अपने राखै। मधुर वचन रसनासों भाखै॥
कहै कि शिरके छत्र हमारे। हम तौ लागीं शरण तुम्हारे॥
तुमतौ बहुते लगौ पियारे। मोकों तजि मत दूजो प्यारे॥
ऐसे कहि कहि बांधा चाहै। आठौं अंग कामके बाहै॥
वस्तर भूषण देह शिंगारे। नानाविधि करि रूप सँवारे॥
करे कटाक्ष बहुतही भारे। वशकरनेको टोना डारे॥
काजलभरी आँखसूं जोहै। अंग विषे रस दैदै मोहै॥
ह्वांसूं निकसन कैसे पावै। चरणदास शुकदेव सुनावै॥

दोहा—तिरियाहीके जालमें, आय फँसे जो कोय॥
तलफि तलफि ह्वाँई रहे, निकसि सकै नहिं कोय॥

सुत पुत्री वनितासूं जानौं। समधाने यासूं पहिंचानौं॥
और बँधे बहुते बँधवार। नाईब्राह्मण बहु परिवार॥
सेठ मशानी देवी भूत। ग्रह नक्षत्रहु लगे अऊत॥
चौथ अहोई लागे सौन। तिरिया कारण साजौ भौन॥
औरौ बहुत बखेड़े जान। नारीसे तोहीं पहिचान॥
महा अपरबल दुख तेहिं माहीं। मरिकै चौरासीमें जाहीं॥

तातें हूजै वेगि उदास । समुझितजौतिरियाकी आस ॥
श्रीशुकदेवकहि चरणहिंदासा । सभी कुटुँब है नरकनिवासा ॥

दोहा—सुतकी बोली तोतली, करै चोचली चाय ॥
मन मोहै बाँधै घनो, छूटनकौन उपाय ॥
हँसि गोदीमें आय करि, बहुत बढ़ावै नेह ॥
तामें घने विकार हैं, अन्तकाल दुख देह ॥
मोह लगा मरजाय जब, तन मन लागै आग ॥
चरणदास यों कहत हैं, सुख चाहै तौ त्याग ॥
जिहि कारणचिन्ता लगै, जबलग घटमें प्रान ॥
हरिगुरु हिये न आवई, यही जु पूरी हान ॥
तन छूटै सुत मैं रहै, एक न तेरी आस ॥
जनम जु शूकरको लहै, मुये नरकही जास ॥

कुटुँब बंध ऐसे करि जानौ । फाँसीगर तिनकूं पहिंचानौ ॥
ताकूं डारै नरक मँझारा । तातें होंहिं सबनसे न्यारा ॥
बहुतक दुर्जन हैं घटमाहीं । तू उनकूं जानतहै नाहीं ॥
हैं वैरी तू जानत मीता । स्वपनेहूं इनकी नहिं चीता ॥
काम क्रोध लोभ अरु मोहा । सबही राखैं तोसूं द्रोहा ॥
जिनसे गर्व मछरता भारी । जगत बड़ाई तिनकी नारी ॥
आपा लिये सदाहीं रहै । टेढ़े वचन झूँठ बहु कहै ॥
इनके संग घनेही दुष्टी । तेरे तनमें रहैं अदृष्टी ॥
नितही करै अकारज तेरा । चरणदास कहैं याविधि घेरा ॥

दोहा—बहु वैरी घटमें वसैं, तू नहिं जीतत कोय ॥
निशिदिन घेरेही रहैं, छुटकारा नहिं होय ॥

जो कहुँ निकसि बाहरै आवै । अरु विरक्तका रूप बनावै ॥
कुटुंब छोड़ि उपजै वैराग । जगत रहा चरणोंसे लाग ॥

कछू वासना मनमें धँसी। जबहीं लोक बड़ाई हँसी ॥
पुष्टभयो आपा अभिमान। सहजहि आया मोह दिवान ॥
सबही संगी लिये बुलाय। या विरक्त कूं घेरो आय ॥
ताकूं बांधि मुरंडा कीन्हा। फेरि कुटुँबके माहीं दीन्हा ॥
कुटुंब मित्र गाढ़ाकरि बाँधा। बाडिबडी आँडि ऐसा आंधा ॥
चरणदास कहैं घरमें आया। घटके दुर्जन वाहि बँधाया ॥
दोहा–कुनबेमेंसे निकसि करि, फिर कुनबेमें जाय ॥
निश्चय नरकी होयगा, दुनियामें दुखपाय ॥

एक दृष्टान्त।

एक तपोवनमें जा रहा। शीतउष्ण पावस शिर सहा ॥
सूखे पातों कियाअहारा। छूटे सबही जग व्यवहारा ॥
रहै ध्यानमें निशिदिनलागा। हरिके चरणकमलमें पागा ॥
महिमा सुनि राजा तहँ आया। दे परिक्रमा शीश नवाया ॥
हाथ जोरि ठाढ़ो फिरि भयो। तपसी मुख ना बैठन कह्यो ॥
ठाढ़ेभये बार बहु भयी। तब राजाने मनमें कही ॥
यह तपसी है बहु अभिमानी। मो आवन महिमा नहिं जानी ॥
ऐसी कहि मनमाहीं ऐठा। आपहि आप भूप वह बैठा ॥
दोहा–जो हरिके रँगमें रँगे, भूपनसूं क्या काम ॥
चरणदासकुछभय नहीं, ना कुछ चहिये दाम ॥
तपसी कछू न मुखसूं भाषा। राजा उठि चढ़ि मारग लागा ॥
क्रोधभरा महलनमें आया। खोटा मनमें मता उपाया ॥
पातुरि भेजि वाहि अजमाऊं। भेद झूंठ सांचेको पाऊं ॥
जबहीं पातुरि लई बुलाई। ये बातैं वाकूं समझाई ॥
कहै पातुरी आज्ञा दीजै। देखि तमाशा वाका लीजै ॥
आयसु लै पातुरि घर आई। प्रथमैं लौंडी एक पठाई ॥

वा तपसीका लावो भेदं। कौन वस्तुसे वाको हेतु॥
कहां सु भोजन करै अहारा। छुटै भजनसूं कौनी वारा॥
बाँदी गई भेद सों लाई। पातुरिकूं सब बात सुनाई॥
दोहा-झारे जा मुख धोयकै, फिरि तलाबमें न्हाय॥
चरणदास फलपात जो, गिरे पडेही खाय॥
पातुरि सुनि मनमें डरपाई। कैसे वाकूं वश करुंजाई॥
बिनवश किये भूप नहिं रीझे। काढ़ि नगरसूं बहुतै खीझे॥
ताते मकर पेंच कछु कीजे। तपसी काम नरकमें लीजे॥
जो कहुँ इच्छा नेकहु पइये। छलबलकरि वा मदन जगइये॥
यह विचार पातुरि जब कियो। नानाविधिभोजनकरिलियो॥
गई तहां तपसी अस्थाना। वह तौ करतहतो हरिध्याना॥
बैठ रही धीरज उर धारी। जबलग उठै ध्यान निरबारी॥
उठे ध्यानते आँखैं खोली। करि दण्डवत नारि यों बोली॥
पुत्र नहीं हमरे घरमाहीं। जिस कारण दर्शनकूं आई॥
यह कहि भोजन आगे राखा। तपसी भोजन लिया न भाखा॥
वा दिन तौ योंहीं उठि आई। अंगुली टिकन ठौर नहिं पाई॥
दूजे दिन गइ बहुत सवारा। न्हाकर आये थे उहिबारा॥
कहा कि भोजन हमरा कीजे। हमरे नैननको सुख दीजे॥
तपसी कहै न चित्त डोलाऊं। सूखेपात और फल खाऊं॥
पातुरि कहै दूरसूं आई। तुमतौ दयावंत सुखदाई॥
यही मान मेरो तुम राखो। बहुत नहीं अँगुलीभरिचाखो॥
कहि कहिवचन वाहि पघिलाया, अंगुली भरि भोजन चटवाया॥
चाटत चाटत चाटत रहा। रणजित कहैं योंमन बहिगया॥
दोहा-पातुरिने करजोरि करि, बहुरो वचन सुनाय॥
एकबार अरु लीजिये, इन्द्रीजित ऋषिराय॥

फिरि भारी अंगुली भरि लीन्हा। बहरौ मुखके माहीं दीन्हा ॥
अंगुली टिकन कामकरि आई। घर आकर बहुतै हुलसाई ॥
फिर ह्वां दिना चार ठहराई। उतनहिं गई यही मन आई ॥
पातुरि चतुर ढीलसूं गई। तपसी कही कहां तुम रही ॥
जबहीं पातुरि प्रीति पिछानी। अपनी कला पैठती जानी ॥
वा दिन व्यंजन कछू न लाई। बहुविधि भोजनबात सुनाई ॥
घर ठाकुर सेवा चित लाऊं। नानाविधिके भोग लगाऊं ॥
लै आज्ञा निज भवन पधारी। चरणदासकहैंछलकियोनारी ॥

दोहा—तपसीकूं जीतन कियो, टेंक बांधिकरि वाद ॥
हौरै हौरै लाय हूं, या जिह्वाके स्वाद ॥
नानाविधिके स्वादकरि, लै गई वाही पास ॥
कह्यो कि यह परसादहै, लीजै कोई ग्रास ॥

ठाकुरको परसाद जु लीजै। याको नाहीं कबहुं न कीजै ॥
नाहीं किये होय अपराध। तुमतौ कहिये पूरे साध ॥
कछूक पातुरि वचन सुनायो। कछूक तपसीके मन आयो ॥
डारो हाथ थारके माहीं। ज्योंज्यों खात सराहत जाहीं ॥
पातुरि कहो सदा ले आऊं। जो जो ठाकुर भोग लगाऊं ॥
यामें कछू दोष नहिं लागै। तनमनका सब पातक भागै ॥
वाकूंवश करिकै घर आई। सखियनकूं यह कथा सुनाई ॥
कामदेवकी सौगंध खाऊं। तपसी बंधुवा करिदिखलाऊं ॥

दोहा—रसनास्वादहि वश किये, मनमें जीतन वाद॥
कभी आप बांदी कभी, पहुँचायो परसाद ॥

कबहूँ वा तपसी ढिगजावै। नानाविधिके भोजन खावै ॥
कबहूँ भेजै बाँदी हाथा। कहिये छुट्टी मोहिं न नाथा ॥
वह जानै मम सेवा करै। यह तो भजन तपस्या हरै ॥

एक दिना पातुरि ह्वां गई। हाथ जोरि भाषत यों भई ॥
कहोकि मेरेभवन पधारो। करो पवित्तर जूँठनि डारो ॥
लावनकी बहुबात बनाई। सो तपसीके मन नहिं भाई ॥
ह्वांई रही टोना सो कीन्हों। तपसीको मनवशकारिलीन्हों ॥
दूजे रसकी कला दिखाई। मोह बढो अरु आँख लजाई ॥
भोरभये फिर बात सुनाई। छलबल करि घरही लै आई ॥
चरणदास तपसी नहिं जानी। अजहूं ठगनी ना पहिंचानी ॥

दोहा–घरमें ला बहुसुख दिया, दिना आठही राखि ॥
तपसीहू वा वश भयो, पांचनसूं रस चाखि ॥

इन्द्रीवश पातुरि घर आया। अपने तपका तेज घटाया ॥
सिमटामन भया फूटकफूटा। लागा ध्यान रामका छूटा ॥
देखौ घरके वैरी किया। पकड बाँधि औरे कर दिया ॥
फिर पातुरि राजा पैगई। तपसी ठगनबात सब कही ॥
नेक नेक सब कहि समझाई। तब राजाकूं हाँसी आई ॥
योंहीं कही वेगि लै आवो। वाकी सूरत हमें दिखावो ॥
फिर पातुरि उलटीही धाई। तपसीकूं इकबात सुनाई ॥
राजा दर्शन करन बोलावै। जितसेती खाने कूं आवै ॥
वाकूं चलकरि दर्शन दीजै। किरपा प्यार बहुतही कीजै ॥
हमतो उनकी सदा कहावैं। नितउठिकरि मुजरेको जावैं ॥
वांतो अपना घरही जानौ। उठिये चलिये सकुच न मानौ ॥
पाछे तपसी आगे बाला। ऐसे राज दुआरे चाला ॥
जा राजाकूं दई अशीशा। राजा बैठै नायो शीशा ॥
हँसिकरि कहीजुकिरपा कीन्ही। यहनगरीअपनी करिलीन्ही ॥
घर बैठे हम दर्शन पाये। वै धन है जो तुमको लाये ॥
तपसी कही धन्य तुम राजा। बहुतनको सारत हौ काजा ॥

तुम्हरो तेज देखि हम चीन्ही। तुमहुँ तपस्या आगे कीन्ही॥
बिना तपस्या राज न पावै। वेदपुराणनमें यों गावै॥
हमहूँ दर्शन तुम्हरे पाये। तपसी कहि यों वचन सुनाये॥
भूपति बहुत अचम्भा कीन्हा। बहुत द्रव्य पातुरिको दीन्हा॥
फिर राजा तपसीसूं बोला। खोट हिये का सबही खोला॥
एकदिना हम तुम ढिग धाये। वनमें तुम्हरे दर्शन पाये॥
ठाढ रह्यो हौं बहुतीवारा। ना तुम बोले नैन उघारा॥
आजद्योस ऐसा हद कीन्हा। ह्वांईआ तुम दर्शन दीना॥
यह सुनि तपसीशोचिविचारा। तबहीं पातुरि सूं भयो न्यारा॥
वेगहि उठि जंगलकूं गया। चरणदास कहैं रमता भया॥
दोहा—जो इन्द्रिनके वश भयो, यही हाल ह्वैजाय॥
पछतावा मनमें रहै, करै हाय दुखहाय॥
पांचौ चोर महा दुखदाई। सोया जगमें देह फँसाई॥
तन मन कूं बहु व्याधि लगावैं। कायिक वाचिक पाप चढावैं॥
करम लगा बहुतै भरमावै। यमके छप्पन वास दिखावै॥
फिर चौरासी माहिं फिरावै। जठर अग्निमें ताहि तपावै॥
जन्म मरण भारी दुख देवै। मानुष देहका सर्वस लेवै॥
तीन लोकमें डोलै हाला। सुरपुर मृत्यु और पाताला॥
कैसे मुक्ति धामकूं पावै। जो इन्द्रिनके वश हो जावै॥
छूटै जब गुरु किरपा करैं। चरणदासके शिर कर धरैं॥
दोहा—स्वारथहीके सब सगे। कुटुँब मित्र कुल गोत॥
परमारथ समझावई, जो दयालु गुरु होत॥
परमारथमें दुख मिटै, कलह कलपना जाय॥
स्वारथ माहीं सुख नहीं, तामें चित न लगाय॥
स्वारथमें चिन्ता घनी, जो ह्वांकर हो गेह॥

बिना आगकी चितामें, जीवत जरि है देह ॥
चिन्ता घटमें नागिनी, ताके मुख हैं दोय ॥
निशिदिन खाये जातहैं, जानसकै नहिं कोय ॥
ताघट चिन्ता नागिनी, जामुख जप नहिं होय॥
जो टुक आवै यादभी, उहीं जाय फिरि खोय॥
चिन्ताहीसूं लगत है, चरणदास उर आग ॥
तहां ध्यान हरिचरणको, कैसेही अब लाग ॥
जगत वासनाकेविषै, घर चिन्ताका जान ॥
जगकीआशाछोड़िकरि, हरिसुमिरणही ठान ॥
आशा नदीमें चलै, सदा मनोरथ नीर ॥
परमारथ उपजै वहै, मन नहिं पकड़ै धीर ॥
धीर बिना नहिं ध्यानहै, निश्चल जप नहिं होय॥
जो चाहै हरिभक्तकूं, जगत वासना खोय ॥
जबलग जगसूं प्रीतिहै, तबलग दुःख अपार॥
भय भारी चिन्ता घनी, भवन पिछानो दार ॥
जगसूं छुटि बाहर परै, उसी समय सब चैन ॥
उपजै आनँद परमहीं; तहाँ कुछ लैन न दैन ॥
रहै एक हरिभक्तिही, बाधा सब छुटि जाहिं ॥
जबै राम अपनो करैं, वेगाहि पकरैं वाहिं ॥

ताते सुन मन मेरे मीत । जक्त छुटनकी राखो चीत ॥
ऐसा अवसर फिर नहिं पावौं । काहे मानुष देह गँवावौं ॥
संगी तेरा नाहिं धनधाम । तू क्यों पचै मूढ़ बेकाम ॥
पिछली गई तासकूं रोय । आगे रही योंहि मत खोय ॥
इकइक घड़ी अमोलक जान । चेत चेत मतहोय अजान ॥
अपने घरका करो सँभाल । ललकारत आवत है काल ॥

याते कीजे यही विचार । डारि सिदौसी जगजंजार ॥
शुकदेव कहैं सुनचरणहिं दास । हरिके चरणकमल करवास ॥

दोहा—यामें ढील न कीजिये, यह विचार मन आन ॥
चरणदास यों कहत है, यह गो यह में दान ॥
आयुर्दा यों जात है, ज्यों तरुवरकी छांह ॥
चेत सितावी भक्ति में, तजो जगत की बांह ॥
तूही पकरो जगतने, तैंहीं पकरो आय ॥
ज्यों नलिनी को सूवटा, धोखे पकडो जाय ॥

जैसे बांदर आपहि फँसिया । समझवान मनमाहीं हँसियो ॥
मूठ चनोंकी जो वह तजता । तौ काहेकूं फँसा जु रहता ॥
ज्यों कांटेसूं मच्छी लागी । आपहि आई चली अभागी ॥
सरुवरमें तरुवरकी छाहीं । अजया देखि गिरी वा माहीं ॥
जैसे पक्षी जाल मँझारा । आपहि आय फँसा बजमारा ॥
खन्दकमें हाथी आ परिया । लैन गयोकोउआपहिगिरिया ॥
बाजत बीण मृगाचालि आया । पकर कौन चंचलकूं ल्याया ॥
योंही तुम अपनी गति जानो । आपहि बधे यही पहिंचानो ॥
ऐसे जगने तोहिं नहिं पकड़ा । चरणदास कहैं योंहीं जकड़ा ॥

दोहा—छोड जगतकी वासना, यही जु छुटन उपाव ॥
ये मन ऐसी धारिये, अबहीं नीको दांव ॥
अबकी चूके चूक है, फिर पछितावा होय ॥
जो तुम जक्त न छोड़िहो, जन्म जायगो खोय ॥
जग माहीं न्यारे रहो, लगे रहो हरिध्यान ॥
पृथ्वी पर देही रहै, परमेश्वरसें प्रान ॥
ज्यों तिरिया पीहरबसै, सुरति पियाके माहिं ॥

१ जल्दी.

ऐसे जन जगमें रहैं, हरिकूं भूलैं नाहिं ॥
ज्यों किरपण बहुदामहीं, गाड़ि जिमींके नीच ॥
सदा वाहि तकतौ रहै, सुरति रहै ताबीच ॥
तन छूटै हो सरपही, जा बैठे वा ठौर ॥
जहां आश तहँ वास है, कहूं न भमैं और ॥
चितरहैगोविंदके विषे, जगमें सहज सुभाय ॥
तन छूटै हरिकूं मिलै, चरणकमललपटाय ॥
जग त्यागो वैरागलै, निश्चय मनकूं लाव ॥
आठपहर साठौघरी, सुमिरनसुरति लगाव ॥
सबसूं रहु निरवैरता, गहौ दीनता ध्यान ॥
अंत मुक्तिपद पाइहौ, जगमें होय न हान ॥
चरणदास यों कहत हैं, बड़ी दीनता जान ॥
औरनकी तौ क्या चलै, लगै न मायाबान ॥
दया नम्रता दीनता, क्षमा शील संतोष ॥
इनकूं लै सुमिरण करै, निश्चय पावै मोष ॥
ये सब लक्षण राममें, प्रगटत देखैं मोहिं ॥
जो वे आवैं तुझ विषे, प्यारकरैं हरि तोहिं ॥
हरिसूं प्रीति लगायकै, सबसूं लेहि उठाय ॥
ताते सुन सदा इक रामहीं, और सकल मिटजाय ॥
ऐसा अवसर तेसूं मत प्रीतिकर, रहतेसूं कर नेह ॥
संगी तेरा तजि दीजिये, सांचेमें करि गेह ॥
पिछली गई हरिका नाम है, झूठा यह संसार ॥
इकइक घड़ी कहैचरणदासहो, सुमिरणकरो विचार ॥
अपने घरका इनकूं खैंचकरि, अभयअमरफलचाख ॥
सुमिरण होतहै, तामें मनकूं राख ॥

मानसरोवर देहमें, मुक्ताहल जो श्वाँस ॥
चुगिये हंस स्वरूपहै, खुलै कम्र्मकी गांस ॥
अजपा को यहि अर्थ है, बिना जपेही होत ॥
कछुवाकीज्योंसिमटकरि, तहां लगावो गोत ॥
आवतही कूं देखिये, जातेकूं जो निहारि ॥
ऐसे सुरत लगाइये, चरणदास हियधारि ॥
सक्कारेतन सींचिये, हक्कारे सुख होय ॥
ऐसे सुमिरण सत्तकूं, जानै विरला कोय ॥
नाभिहि सेती उठत है, फिर तामाहिं समाय ॥
याको भेद अपार है, सद्गुरु देहि बताय ॥
नाभि नासिकामाहिंकरि, घाल हिंडोला झूल ॥
उपजै अति आनन्दही, रहै न दुखका मूल ॥
ब्रह्म सिंधुकी लहरहै, तामें न्हान सजोय ॥
कलिमलसबछुटिजायगे, पातक रहै न कोय ॥
अरसठ तीरथ तो विषे, बाहर क्यों भटकाव ॥
चरणदास यों कहतहैं, उलटाही घर आव ॥
श्वासासँभलविचारिकरि, तहां करो विश्राम ॥
जाते हरिही हरिकहो, आवत कहिये श्याम ॥
श्वासा लेवै नाम बिना, सो जीवन धिक्कार ॥
श्वास श्वासमें रामजप, यही धारणाधार ॥
उलट पलट जपरामही, टेढ़ा सीधा होय ॥
याका फल नाहिं जायगा, कैसेही लो कोय ॥
खाते पीते नाम ले, बैठे चलते सोय ॥
सदा पवित्तर नाम है, करै ऊजला तोय ॥
नीचनकूं ऊंचा करै, ऊंचन को कर देव ॥

देवनकूं हरिही करै, रहै न दूजा भेव ॥
भरमत भरमत आइया, पाई मानुष देह ॥
ऐसो अवसरफिरि कहां, नाम शिताबी लेह ॥
कै घरमें कै बाहरे, जों चित आवै नाम ॥
दोनों होहिं बराबरी, कै जंगल कै ग्राम ॥
करै तपस्या नाम बिन, योग यज्ञ अरु दान ॥
चरणदास यों कहतहैं, सबही थोथे जान ॥
अधिकी ऊंचा नाम है, सब करणीका जीव ॥
अष्टादश अरु चारिका, मथिकरि काढ़ाघीव ॥
चारोंयुगमें देखिले, जिनजपियाजिननाव ॥
टेक पकरि आगे धँसै, परा न पीछे पाँव ॥
जसी गति उनकी भई, गावत साधु पुरान ॥
वैसी तेरी होयगी, यह निश्चयकरिजान ॥
दुखधन्धेकूं छोड़िकरि, कलहकल्पनात्याग ॥
शुकदेवकहिचरणदासकूं, राम भजनमें लाग ॥
हरिके गुण माला करौ, रसना ऊपर लाव ॥
कियाकियाही देखिकरि, ताहि सराहत जाव ॥
देखि देखि देखतरहो, अस्तुतिमुखसूं भाख ॥
वाकी चतुराई सबै, लैकरि मनमें राख ॥
वैसा तौ रँगरेजना, वैसा छीपी नाहिं ॥
वैसा कारीगर नहीं, या दुनियाके माहिं ॥
अजबअजबअचरजाकिये, अद्भुतअधिकअपार ॥
जलथलपवनअकाशमें, देखो दृष्टि उघार ॥

---

१ जल्दी.

सृष्टि बाग माली रचौ, भाँति भाँति गुलजार ॥
रीझरीझ शिर दीजिये, एहो निरख बहार ॥
कबहूं जग परगट करै, कबहूँ करै अलोप ॥
नानाविधि बाजीकरै, आप रहतहै गोप ॥
बाजी गर बाजी रची, सब गति पूरण साज ॥
किये तमाशे बहुतही, तोहिं दिखावन काज ॥
देखि होय परसन्नहीं, तू वाको गुणमान ॥
चरणदास जो बुद्धिहै, अधिक सुघरता जान ॥
बहुतप्यार तोपै करै, तू नहिं जानत सार ॥
वाहि भुला यौंहीं रहै, नेक न करै सँभार ॥
राम बिसारो आदिसूं, लियो द्रव्य अरु नार ॥
याहीते भरमत फिरो, तन धरि वारम्वार ॥
गइसु गई अब राखिले, एहो मूढ़ अयान ॥
निष्केवल हरिकूं रटौ, सीख गुरूकी मान ॥
सोवनमें नहिं खोइये, जन्म पदारथ पाय ॥
चरणदासह्वै जागिये, आलस सकल गँवाय ॥
सोवनहीमें हानि है, जागनमें बहु लाभ ॥
बुद्धि उज्वलही होतहै, मुखपर चढ़ैजु आभ ॥
दिनकूंहरिसुमिरणकरौ, रैनि जागकरि ध्यान ॥
भूँखराखि भोजन करौ, तजि सोवनकी बान ॥
चारिपहरनहिंजागिसकै, आधीरात सुजाग ॥
ध्यानकरो जपहीकरो, भजन करनकूं लाग ॥
जो नहिं श्रद्धा दोपहर, पिछिले पहरे चेत ॥
उठ बैठे रटना रटौ, प्रभुसूं लावहि हेत ॥
जागै ना पिछिले पहर, ताके मुखड़े धूल ॥

सुमिरै ना करतारकूं, सभी गँवावै मूल ॥
जागै ना पिछले पहर, करैं न आतम ध्यान ॥
ते नर नरकै जाइँगे, बहुत सहैं यमसान ॥
जागै ना पिछले पहर, करै न गुरु मत जाप ॥
मुँह फारे सोवत रहै, ताको लागै पाप ॥
पिछिलेपहरेजागिकरि, भजन करै चितलाय ॥
चरणदास वा जीवकी, निश्चय गति ह्वै जाय ॥
पिछले पहरे जागिकरि, भरि भरि अमृत पीव ॥
विषयजक्तकी ना रहै, अमरहोय करि जीव ॥
जन्म छुटै मरणा छुटै, अवागमन छुटिजाय ॥
एक पहरकी रातसूं, बैठा हो गुण गाय ॥
पहिले पहरे सब जगै, दूजे भोगी मान ॥
तीजे पहरे चोरही, चौथे योगी जान ॥
मरयादाकी यह कही, क्या विरक्त परमान ॥
आठ पहर साठौ घरी, जागै हरिके ध्यान ॥
जे कोइ विरही रामके, तिनकूं कैसी नींद ॥
शस्तर लागा नेहका, गया हियेको बींद ॥
तिनसे जग सहजे छुटा, कहा रंक कह भूप ॥
चलेगये घरछोड़िकै, धारि विरक्तका रूप ॥
जिनकोमनविरकतसदा, रहो जहाँ चितहोय ॥
घर बाहर दोउ एकसा, डारी दुविधा खोय ॥
सोये हैं संसारसूं, जागे हरिकी ओर ॥
तिनकूं इकरसही सदा, नहीं सांझ नहिं भोर ॥
उनकूं नींद न आवई, राम मिलनकी चीत ॥
सोवै ना सुख सेजपै, तजिकै हरिसों मीत ॥

कैसे वे हरिसूं मिले, जिनके ऊंचे भाग ॥
कैसे वे हरि त्यागिके, रहे जगतसूं लाग ॥
सोवन जागन भेदकी, कोइक जानत बात ॥
साधूजन जागत तहां, जहां सबनकी रात ॥
जो जागै हरिभक्तिमें, सोई उतरे पार ॥
जो जागै संसारमें, भवसागरमें ख्वार ॥
कै जागत हूका भरा, कै जागा वश काम ॥
कै जागा जग टहलमें, लाग रहो धनधाम ॥
ऐसे जन्म गँवाय दिय, महामूढ़ अज्ञान ॥
चौरासीमें फिरि चले, मनका कहा जु मान ॥
सद्गुरुशरणै आयकरि, कहा न मानै एक ॥
ते नर बहु दुखपाइ हैं, तिनकूं सुख नहिं नेक ॥
सद्गुरु चरणौ नलगे, किया न हरिका खोज ॥
सो खर कूकर शूकरा, अरु जंगल का रोझ ॥
पेट भरे भर सोइया, ते नर पशू समान ॥
परनारी कै आपनी, तिनका नाहीं ज्ञान ॥
जैसा तैसा खाय करि, पेट भरे भरि लेह ॥
पड़कर सोवै भोरलौं, सो शूकर की देह ॥
हरिचरचा बिन जो बकै, सो कूकर की भूंस ॥
कहरणाजितवहसांझ लौं, खाय धूंसही धूंस ॥
जो पावै सोई चरै, करै नहीं पहिंचान ॥
पीठ लदे हरि ना जपै, ताकूं खरही जान ॥
रोझ जान वा देहकूं, ताकूं नहीं विचार ॥
फिरै बिना मर्य्यादही, बहुता करै अहार ॥
बहुता किये अहारही, मैली रहै जु बुद्धि ॥
हरि के निर्मल नामकी, कैसे आवै शुद्धि ॥

सूक्षम भोजन खाइ करि, रहिये ना परि सोय ॥
ऐसी मानुष देहकूं, भक्ति बिना मत खोय ॥
जन्म चलोही जात है, ज्यों कूंवेमैं लाव ॥
दौरत मृगकी छाँहको, नेक नहीं ठहराव ॥
समझ शिताबी भक्ति ले, नेक न ढील लगाव ॥
आपा हरिकूं दे चुको, याको यही उपाव ॥
जगका कहा न मानिये, सद्गुरुसों लै बुद्धि ॥
ताकूं हियमें राखिये, करो शिताबी शुद्धि ॥
गुरुसेती सद्गुरु बडे, परमेश्वर के रूप ॥
मुक्ति छाँह पहुँचाय दें, जगत छुटावैं धूप ॥

कुण्डलिया—पहिला गुरुदाई कहूं, दूजे माई जान । तीजा गुरु खिलावड़ी, चौथा पिता पिछान ॥ चौथा पिता पिछान पाँचवें पाधा जानौ । कनफूका गुरु छठा तासपूजा दे मानौ ॥ सतवां सद्गुरु जानिये, जगसूं करैं उदास । मुक्तिधाम सोइ देत हैं, कहैं चरणहीदास ॥

दोहा—गुरु मिलते ऐसे कहैं, कछू लाय मोहिं देह ॥
सद्गुरु मिल ऐसे कहैं, नाम धनीका लेह ॥
कनफूका गुरु जगतका, राम मिलावन और ॥
सो सद्गुरुको जानिये, मुक्ति दिखावन ठौर ॥
गलियारे गुरु फिरतहैं, घर घर कंठी देत ॥
और काज उनकूं नहीं, द्रव्य कमावन हेत ॥
सद्गुरु डंका देत हैं, भक्ति रामकी लेहु ॥
पहिले हमकूं भेंटही, शीश आपनो देहु ॥
सो सद्गुरु शुकदेव हैं, समझि हियेमें राखि ॥
तिनके शरणै आव मन, चरणदास कहै भाखि ॥

यह सिगरो उपदेशही, मैं आपनकूं कीन ॥
मो मनकूं आपा घना, कहीं होय आधीन ॥
सद्गुरुसूं मांगौं यही, मोहिं गरीबी देहु ॥
दूर बड़प्पन कीजिये, नान्हाहीं करिलेहु ॥
जनक परमगुरुदेवजी, सुतु सद्गुरु शुकदेव ॥
यही अर्ज मैं करतहूं, मोहिं साधु करिलेव ॥
चारौयुग के भक्तजन, तुमहौ सुखके धाम ॥
चरणहिंदासा होयकै, तुम्हें करूं परणाम ॥
आदि पुरुष किरपा करौ, सबअवगुणछुटिजाहिं ॥
साधहोन लक्षण मिलैं, चरणकमलकी छाहिं ॥
तुम्हरी शक्ति अपारहै, लीला को नहिं अंत ॥
चरणदास यों कहत हैं, ऐसे तुम भगवंत ॥

छप्पय—रच्यो आपमें जगतरूप नारायण कीन्हों । दूजे लक्ष्मी भई बहुरि पानी रँग भीन्हों ॥ नाभिकमल फिरि भयो जहां ब्रह्माजी उपजे । विधिकी त्रिकुटी माहिं तहां शंकरजी निपजे ॥ चारि वेद अरु विष्णु है सकल जगत छिनमें कियो । निराकार आकारसों चरणदास जिहिं मन दियो ॥

कबित्त ॥ वही तो अडिग्ग राम चौथे पद वास जाको, वही तौ अडिग्ग राम मथुरामें आयोहै । वही तौ अडिग्ग राम योगी जाको ध्यान धरैं, वही तौ अडिग्ग राम सीतापति पायो है ॥ वही तौ अडिग्ग राम सभीठाम रमि रह्यो, वही तौ अडिग्ग राम संतन सहायो है । वही तौ अडिग्ग राम चरण-दास चेरो जाको, वही तौ अडिग्ग राम काया खोजि पायोहै ॥ मायाभ्रम फंददेख साधनको संगपेख, रामजूको पहिरि भेख कंचन तनतावरे । मनकूं पहिंचान ज्ञान एकाएकी सबै जान,

नादके गेहेते तू अनाहद बजावरे ॥ उलटि पलटि काया बीच चारो कर दूर नीच, ऐसी विधि मेरुपै समीरकूं चढावरे। कहैं चरणदास गगन मध्यकरौ वास जहां, नहीं शीत उष्ण निरभय पद पावरे ॥

दोहा—दुर्योधन रावण गये, अरु यादव परिवार ॥
चरणदास थिरको नहीं, होय मिटै संसार ॥

कबित्त ॥ भोरसो बिहानो जात ढरैगी दुपहरीसी, समझकै विचारि देखि चली आवेरात है। भवँत है सुचान काल तेरेपर तकिरहो, छिन पलकी खबर नाहिं करै आय घात है ॥ दारासुत सम्पति सब सपनेको सुख भयो, जानौगे जभी जब छूटिजाय गात है। कहैं चरणदास अब तजै क्यों न विषय वास, पानी में नाव जैसे आयु चलीजात है ॥ कुमारगसूं भाज और लाज खोटे करमनसूं, चौरासी के त्रासनसूं मूढ क्यों न लजरे। साधुनके संग बैठि धर्महूकी नाव लेटि, गुरुहूको ज्ञान राखि प्रेम भक्ति सजरे ॥ छूटै जब नारी यम देवैं दुखभारी डारैं, नरक मँझारी आवागमन क्यों न तजरे। कहैं चरणदास अब तजै क्यों न विषय वास, रामके सँवारे तू रामराम भजरे ॥

सवैया।

भूलिरहो जगमें जडता वश दरसुतासुत प्रीतिबढावे। इनसूं मन बाँटिरहो गृहबीच सो अन्तसमै कोइपास न जावै ॥ आनिगहे यमजामतैरो सबही मिलि प्रीतम रामबतावै। चरणदास कहैं चेतो नर मूरख रामबिना कोई काम न आवै ॥

कवित्त ॥ धावै भस्म देवनकूं भीतनके लेवनकूं, कोई संग साथी नाहिं भीर परे तेरा है। परसता है चंडकी भूत अरु शीतलाकूं, भजै क्यों न रामनाम कटै यम बेराहै ॥

भैरौं अरु बराही पाखंड पूजा सभी करैं, लगी है बहीर किन्हूं नैनन न हेरा है ॥ चरणदास कूँर सब सन्तनको चेरो कहै, ऐसो जग अन्धा जानि कर्मननें घेरा है ॥

दोहा–यंतर टोना मूड़हलावन, और कीमियाँ झूँठ ॥
चरणदासकहैं सबभगलहै, यह जग लीन्हालूट ॥

कवित्त–भूतनकूं सेवै सो भूतनमें जाय मिलै, जादूको सेवै सो चमार ताकी माईसूं । देवतौंकूं सेवै तो देवलोक बास लहै, औषधीकूं सेवै तो मिलाप रावराईसूं ॥ कीमियां सेवै तौ खराब होय दुनियामें, ऐसे धन खोवै जो सुनावै नाहिं भाईसूं । कहैं चरणदास हम इतनेकूं मानै नाहिं, देखी सबी छाँड़िमन लगो है कन्हाईसूं ॥

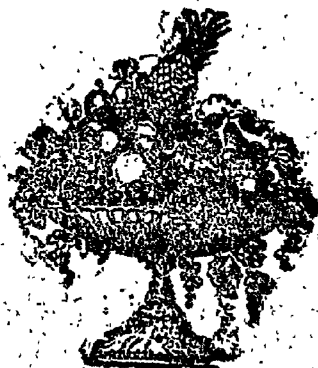
कुं०–पारा मारा ना मरै, गंधक होय न तेल ॥
केते पचि पचि मरिगये, शिरमें मिट्टी मेल ॥
शिरमें मिट्टी मेल भटक करि जन्म सिरायो ॥
जड़ी बूटिकूं फिरे कहीं कुछ हाथ न आयो ॥
बौरे हरि क्यों न भजै काहे जन्म सिरायो ॥
चरणदास कीमियां झूठ गुरु शुकदेव सुनायो ॥

अरिल्ल ॥ सात पांचकी सेवत जो लागि एकसूं । साधनकी करिसेव मुड़ो मत भेषसूं ॥ भेषी माहिं अलेख यही तू जानियो । चरणदासकी सीख निश्चय करि मानियो ॥

दोहा–आपै भजन करैं नहीं, औरै मने करैं ॥
चरणदासकहैं वे दुष्टनर, भर्मभर्म नरकै परैं ॥
औरनकूं उपदेश करि, भजन करैं निष्काम ॥
चरणदासकहैं वे साधुजन, पहुँचैं हरिके धाम ॥

शून्य शहर हम बसतहैं, अनहद है कुलदेव ॥
अजपागोत विचारिले, चरणदास यहिभेव ॥
भक्ति पदारथ उदयसूं, होयसभी कल्याण ॥
पढ़ै सुनै सेवन करै, पावै पद निर्वाण ॥
भक्ति पदारथ मैं कही, कछुइक भेद बखान ॥
जो कोइ समझै प्रीतिसूं, छूटै यमदुखसान ॥
पाठकरै मनमें धरै, बहुहूं करै विचार ॥
कहैं गुरू शुकदेवजी, उतरे भवजल पार ॥
जयजय श्रीशुकदेवजी, तुम्हैं करूं परणाम ॥
तुम प्रसाद पोथी कही, भये जो पूरणकाम ॥
हिरदयमें शीतल हुये, तपतिगई सब दूर ॥
या वाणीके कहे ते, कायर मन भयो शूर ॥
चन्दन चरचै पुष्पधरि, बहुरि करै परणाम ॥
कथा बांचि सबही सुनै, कहापुरुष कह वाम ॥
कहै सुनै जो प्रेमसूं, वाकूं राखै याद ॥
चरणदास यों कहत हैं, बनिहौ पूरे साध ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृतभक्तिपदार्थवर्णनं सम्पूर्णम् ॥



॥ अवधूतायनमः ॥



अथ मनविक्तकरनगुटकासार।

दोहा—नमो नमो श्रीव्यासजी, सद्गुरु परमदयाल ॥
ध्यान किये आशा नशै, लगै न जगत बयाल ॥

अष्टपदी।

नमोनमो शुकदेव तुम्हैं परणाम है। तुम किरपासों आप मिलैं घनश्याम है ॥ तुम्हरी दयासों होय जु पूरण योग है। तनकी व्याधा छुटै मिटै मन रोग है ॥ तुव किरपासों ज्ञान पदारथ पावई। उपजै सार विचार असार छुटावई ॥ तुम्हरी दयासों होय भक्ति निसभोरहै। हियसरोवर उठत जु प्रेम हिलोरहै ॥ तुमकिरपा वैराग दूरलगि आवई। सकल वासना छूटि परमपद पावई ॥ सब गुणदायक लायक परमदयालहौ।

ममहिरदयमें आय भेद सबही कहौ ॥ मोसे कछु नहिं होय जु तुमबिन नाथजू। नितहि रहै तुव हाथजु मेरे माथजू ॥ अरज करै रणजीत सुनो गुरुदेवजी। मोमुखसेती भाषि कहौ सब भेवजी ॥

दोहा-एकादश भागवतमें, जाकी यह मति जान ॥
दत्तात्रेयीने कह्यो, राजा यदुसों ज्ञान ॥
अब मैं भाषा कहतहौं, तुमहीं करौ सहाय ॥
ज्योंकी त्यों मुखसे निकसि, पूरीही ह्वै जाय ॥
सुनियो ज्ञानीसन्तजन, रहन गहनकी चाल ॥
जो कोइ लै हिरदय धरै, होवै तुरत निहाल ॥
चरणदासहौं कहतहौं, परमारथके काज ॥
जो अँग श्रीभागवतमें, साधु होनेके साज ॥
गुरु शुकदेव प्रतापसों, कहूं विचार विवेक ॥
दत्तात्रेयीने किये, चौबीसौ गुरु देख ॥

कुं०-एक दिना यदुभूपही, खेलन गये शिकार ॥
तहाँ नगरके निकट जो, ह्वां थी अधिक उजार ॥
ह्वांथी अधिक उजार, एक अवधूता लेटे ॥
मूरति पुष्ट प्रसन्न जक्तके भय सब मेटे ॥
राजा देखि प्रणाम करि, पूछा शीश नवाय ॥
पाये आनँद कहाँ तुम, मोसे कहौ सुनाय ॥

दोहा-बोलै दत्तात्रेय जब, सुन हो भूप विशाल ॥
चौबिसपरिक्षागुरुकिये, तासों भये निहाल ॥

कुं०-पृथ्वी पवन अकाशहै, नीर अग्नि शशि भान ॥
कपोत गुरुअजगरलखो, और सिंधुको जान ॥

और सिंधुको जान पतंगा भँवरा कहिये ॥
माखी हाथी मृगामीन अरु पिंगला लहिये ॥
चीलहूबाल कन्याकहूं, तीर बनावन हार ॥
साँप माकरी भृंग जो, चौबीसों उरधार ॥
दोहा–भिन्नभिन्न अब कहतहों, जुदो जुदो बिस्तार ॥
ताको सुनिकरि चेतियो, चरणदास नरनारि ॥

अष्टपदी ॥ दत्तात्रेयकी बात सकल अब गायहौं । बीसचारि गुरुकिये ताहि समुझायहौं ॥ जिसकारण जिसहेतु जु उन ऐसीकरी । जो जो शिक्षालई समझ हिरदयधरी ॥ जासों भजे मनरोग जक्त ब्याधानसी । उपजि परम संतोष क्षमा हिय आवसी ॥ परम भये आनँद परमपद पाइया । जीवन्मुक्ता होयके चाह उठाइया ॥ सोइ कहूं अब साध सबै सुनि लीजिये । शुकदेव परीक्षितसों कहो सांच पतीजिये ॥ दत्तात्रेय अवतार श्रीभगवानके । राजा यदुसों बोलि वचन भाषत भये ॥ हमने गुरू चौवीस करे संसार में । तिनको ज्ञानन विचार कहूं निर्धारमें ॥ पहिले गुरुकी शरणगही बहुप्रीति सों ॥ उन दीनों उपदेश मंत्र जो रीतिसों ॥

दोहा–सद्गुरुने किरपाकरि, धरो हाथ मम शीश ॥
यही कही सुमिरण करो, ध्यान करो जगदीश ॥

अष्टपदी ॥ काया छीजत देखि यही मनमें धरो । विरथा खोवन आयु नेम तपको करो ॥ गहि विरक्तकी रीति तभी गृहको तजो । रामभक्ति को चाव हमारे मन रचो ॥ जगसों रहो उदास वास हरिपद जहां । छुटि छुटि जावैं ध्यान न मन लागे तहां ॥ बालक गारी देइ कोई वेल नहीं । शिरपै डारैं खेहसोई बेकाजहीं ॥ हँसि हँसि ताली पीट जु हमरे संग लगे ।

मैंहूं चलो उठाय तौ वे आगे भगैं ॥ ताते निशिदिन क्रोध आपने मनधरूं। हरिसुमिरण गो भूलि जक्तमें यों फिरूं ॥ अब शिक्षा गुरु किये चौवीसो भेदही ॥ सो अब वर्णन करूं छुटै सब खेदही ॥ तिनसों सीखीचाल सभी उरमें धरी। चरणहिंदास होय सुरती आनँद भरी ॥

पृथ्वी १.

दोहा–पहिले गुरु पृथ्वी किया, तीन सीख लइतास ॥
गिरिवर तरुवर मही जो, भयो चरणको दास ॥

अष्टपदी ॥ पहिले पृथ्वी गुरू हमरो जानिये। ताते लइमति तीन सांच हियआनिये ॥ पहिले पर्वत एक मही ऊपर लखा। जा निकटै जाय जु चढ़ि बैठा शिखा ॥ कोइ ऊपर चढ़ि जाय कोई आवे तले। जल वरषै ना बहै पवन सो ना हिलै ॥ वा पर्वतकी सीख बुद्धिमें मानियां। देह लोभ दिय त्याग जु थिरता आनियां ॥ क्रोध दियो बिसराय जो तामस डारई। कोउ कहो दुर्वचन कोउ क्यों न मारई ॥ क्रोध लोभ जो होय करै मन भंगहै। कैसे सुमिरण होय लगै हरि रंगहै ॥ क्रोध लोभ छुटिजाय यह रहन अगाध है। पर्व्वतकी सम होय जो निश्चल साध है ॥ वृक्ष कहूं अब जान जाकीमति पाइया। कहै चरणको दास जो चित्त लगाइया ॥

दोहा–तरुवरने काया धरी, परमारथके हेत ॥
कोऊ बैठे छाँहमें, कोऊ कारज लेत ॥

अष्टपदी ॥ दूजे देखे वृक्ष धरणि ऊपर भले। उनहूंकी लइ सीख गयो उनके तले ॥ मन न हुती यह बात जु पर काज करूं। याप्राणीके काज नहीं करतो फिरूं ॥ जब आई यह रीति वृक्षकी दृष्टिमें। मैं लीन्ही सोइ धारि भलीविधि सृष्टिमें ॥

कोई बैठे छाहँ कोई डारी हनै । कोई ले फल फूल वृक्ष कछु ना भनै ॥ परमारथके काज वृक्षदेही धरी । सकल जीव ब्योसाह यही मनसा करी ॥ जो विरक्तसों काज कोई अपनो कहै । वाको नाटै नाहिं सभी शिरपर सहै ॥ काहूको कछु काज जो काया सो सरै । यह शिक्षा भलिभाँति वृक्षकी मनधरै ॥ तीजे शिक्षा और महीकी धारिया । चरणहिंदासा होय अहूंको मारिया ॥

दोहा—कोई खोदे नीवको, कोई खोदै कूप ॥
अरु ऐसे कारज किते, ऐसो धरो स्वरूप ॥

अष्टपदी ॥ काहूको वह भलो बुरोहूना कहै । ऐसे विरक्तरहै सभी दुख सुख सहै ॥ हरि सुमिरणमें मगन सदा आनँद रहै । भलो बुरो नाहिं मान एकता दृढ़ गहै ॥

पवन २.

दूजे गुरु कियो पवन सीखलइ जासुकी। दोय भाँति पहिंचान हिये धार तासुकी ॥ इकदिन बागके माहिं सहजही मैं गयो । देखन लाग्यों फूल जाय ठाढो भयो ॥ पुष्पनसौं लगि पवन वास मोहिं आइया। जबहीं कीन्हों ज्ञानवास सब पाइया॥ वह तो अतिहि सुगन्ध हर्ष उपजावई । फिर आई दुर्गन्ध बहुत अनखावई ॥ गन्धहिसों लागि पवन आप गन्धहि भई । फुनआई बिन गन्ध शुद्ध निर्म्मल वही ॥ वाको देखि स्वभाव यही मन आइया । चरणहिंदासा होय अंग उपजाइया ॥

दोहा—एक दिना इच्छा करी, भिक्षामाँगी जाय ॥
अपनी श्रद्धा उन दियो, भोजन करमें लाय ॥

अष्टपदी ॥ वाकी अस्तुति नाहिं कछु मुखते कही । फिरि गयो दूजे द्वार दई भिक्षा नहीं ॥ जाकी निंदा नाहिं कछू

उचारिया । अस्तुति निंदा त्याग यही जु विचारिया ॥ जिन कछु दीन्हों नाहिं नहीं औगुण धरो । जो कछु पहिले आयो सोई भोजन करो ॥ जो कहुं अपने काज गयो भलि ठांवहीं॥ गरहण कीन्हों नाहिं रंग नहिं लावहीं ॥ जो गयो भोंडिठौर बुरो नहिं जानियां । आतमरूप सँभाल जहां मन आनियां ॥ सबहीसों निर्लेप सबन के माहिंहू । सहज भवनमें आय सहज कहि जाहिंहू ॥ परालब्ध जो पाय ताहि भोजन कियो। नातौ करि परणाम वैठि योंहीं रह्यो ॥ जिह्वा लोहीं जान स्वाद भोजन सभी । इकरस सबही होयँ उदर जावै जभी ॥ अब आयो सन्तोष कल्पना सब गई । चरणहिं दासा भयो जभी यह मति लई ॥ २२ ॥

आकाश. ३

दोहा–तीजे गुरु आकाश को, कीन्ह्यो सभी सँभार ॥
जाकी मतिके लेतही, पायो ब्रह्म विचार ॥

अष्टपदी ॥ तामें वरसै मेह और आंधी चलै । बिजली चमक वामाहिं और पावक जलै ॥ सदा रहै निर्लेप और निर्मलरहै । सबही जग वामाहिं आप निर्लम्बहै ॥ पवन हलावै नाहिं अग्नि जारै नहीं । ताहि न भिजवै नीर मरै मारै नहीं॥ लघुदीरघ नहिं होय पुरुष नहीं नारहै । नहिं सूक्षम नहिं भार वार नहिं पारहै ॥ शब्द उठै बहुभाँति वही जो अबोलहै । उतपति परलय माहिं सदा जो अडोल है ॥ यह नभ ब्रह्मसमान लखै दृष्टांत है । निरखि हियेकी आंखि गयो सब भ्रांत है ॥ भाँड़े कनक के होहिं चांदी के देखिया । कांसी पितलके होयँ मट्टी के पेखिया ॥ सब माहीं आकाश एकही जानिया । यों घट घटमें ब्रह्म सकल पहिंचानिया ॥ थिर चरहीके माहिं जु थावर

जंगमें । न्यारा अरु सब बीच भली विधि रंगते ॥ जो बर्तन गयो फूटि रहो आकाशहूं । ऐसेहि काया विनशि रहै नित ब्रह्मजू ॥ नित्य अनित्य विचार तभी निश्चय भई । पायो आत्मज्ञान सभी दुबिधा गई ॥ ना काहूसे वैर काहूसे प्रीति है । ना काहू दुख देहुँ नहीं सुख रीति है ॥ काहूसे नहिं डरूं न काहू सँग लगूं । काहूकी शरण न जावँ न काहूसे भगूं ॥ कहै श्रीशुकदेव विवेक विचार सो । दत्तात्रेयी कह्यो असें यदुराज सों ॥ यह शिक्षा आकाशसों लीन्ही जानिकै । चरणहिंदास भयो यही मत मानिकै ॥ २४ ॥

नीर ४.

दोहा—चौथे गुरु किय नीरही, जाको सुनिय प्रसंग ॥
आप सदा उज्ज्वल रहै, मिलिजावै सब रंग ॥

अष्टपदी ॥ जल ज्यों निर्मल होय सदा बिरकत वही । तजै न शीतल अंग वसै नितही मही ॥ गृही संग जो चलै बाट कबहूं कहीं । मनसों न्यारा रहै लेप लागै नहीं ॥ ऐसो रखै विचार जैसे वरषा समै ॥ जल मैला ह्वै जाय खेह सँगही रमै ॥ संगति गुणसों होय जु गँदला आपही । जाडे में ह्वै शुद्ध लगै नहिं पापही । समझो यों चितमाहिं संगको गुण यहै । निर्म्मल नीर स्वभाव सदा उज्ज्वल रहै ॥ संसारीके संगसों जब मन फिरगयो । तब नारायण रूप ध्यान आनँद लयो ॥ कछू मैल मनमाहिं कबहुँ व्यापै नहीं । जल अरु साधू भाँति एक जानौ तहीं ॥ जो कुचील कहु होय सो जलसों धोइये । वाको कीजै शुद्ध मैल सब खोइये ॥ साधू ऐसा होय ज्ञान मुख उच्चरै । श्रोताके सब पाप ताप व्याधा हरै ॥ तातेही उपदेश भक्तिका कीजिये । नीच ऊंच मतदेख वृक्ष ज्यों सींचिये ॥ मीठे शीतल

नीरको यह गुण लीजिये । मीठा सबसों बोलि परमसुख दीजिये ॥ गुरु शुकदेव प्रतापसों जल गुण गाइया । चरणहिं दास होय न मनता आइया ॥

अग्नि ५.

दोहा—पंचमगुरु कियो अग्निको, समझि निहारि निहारि ॥
उत्तम मध्यम जारदे, राखै कछु न विचारि ॥

अष्टपदी ।

ब्राह्मणहू करै होम शूद्र जोपै करै । दोउ पवित्र करै युगल के अघ हरै ॥ ऐसे साधूलोक जहां भोजन करैं । वाको पावन करैं पाप सबहीं हरैं ॥ गृही जु सेवा करै आश ऐसी धरै । विरकत भोजन किये पाप निश्चय जरै ॥ धान्य हमारो खायजु साधूजन कभी । हमरे प्राछत जाहिं और व्याधा सभी ॥ साधूजन जो होय अग्निके भाँतिही । सकलपाप करै छार जु वाकी क्रांतिही ॥ सदा गुप्तही रहै प्रगट किये होतहै । ऐसे साधूभेद छिपावै जोत है ॥

चन्द्रमा ६.

छठवाँ गुरु कियो चन्द सदा इकसम बहै । कला घटै अरु बढ़ै मावस लग ना रहै । पूनोको सब होहिं कलाभर पूरही । चांदनि सब जगमाहिं विराजत नूरही ॥ शशिमण्डल इकभाँति रहै नाहीं घटै । योंहीं आतमरूप चरणदासा रटै ॥

दोहा—उतपति परलय देहको, घटै बढ़ै दुख होय ॥
आतम इकरस जानिये, अविनाशी है सोय ॥

अष्टपदी ॥ ताते कियो विचार यह काया ना रहै । जन्म मरण नाहिं होय कलाके ज्यों यहै ॥ परमातम इकभाँति सदाही जानिये । घटै बढ़ै वह नाहिं यों मनमें आनिये ॥ काया छोटी

होय बड़ी धुनि होत है। कबहूँ हो मनमगन कभूं रोवै वहै ॥ आतमहीं नितजानि जु कायामें रहै। वही सदा इकभाँति कोई ज्ञानी लहै ॥ ताते श्रीभगवानको सबठां पेखिकै। मनमाहीं बैराग फिरतहूं भेखिकै ॥

15686

सूर्य्य ७.

सतवें गुरु कियासूर जु शिक्षा दोलई। आठमहीने किरणि नीर सोखत वही ॥ चारमास वह आप फेरि वरषा करै। वा जलको कछु मोहनहीं मनमें धरै ॥ ऐसे साधु होय जु कछु कोई देतहै। वाको आछीभाँति सोई वह लेतहै ॥ मोह न कबहूं करै जु कोई कछु चहै। चरणहिं दासा जानि सोई यह गति लहै॥

दोहा—लेते कछु हरपै नहीं, देते दुख नहिं होय॥
ऐसे निर्लोभी रहै, चरणदास हैं सोय॥

अष्टपदी।

दूजे जो प्रतिबिम्ब सूरको देखिये। जल भांड़ौं के माहिं सबन अवरेखिये॥ खोजिकै देखौ वाहि सूर तौ एक है। घटघटमें प्रतिबिम्ब विचारि अनेकहै॥ ना काहूसे वैर प्रीतिहु ना करै। सूरज एक निहारि सकल घट छबि धरै॥ ऐसेही निर्मोह सदा निर्लोप है। वाको साधू जान सो ऐसी विधि रहै॥

कपोत ८.

अठवें कियो कपोत गुरू मैं विचारिकै। निर्मोहित मन भयो तभी जु निहारिकै॥ उठी एक मनमाहिं नारि सुत कीजिये। जगमें ह्वै निश्चिन्त बहुत सुख लीजिये॥ सहज बागके माहिं जाय ठाढ़ो भयो। वृक्षपै एक कपोत कपोतिनि को

लह्यो ॥ ता ऊपर उन गेह आपनो साजिया । बहुत प्रीति सुख-मानि सकल दुख भाजिया ॥

दोहा—करि विचार मनमें धरी, धन्यभाग सुख होय ॥
हम समान या जगतमें, और न दीखै कोय ॥

अष्टपदी ॥ भयो कपोतिनि गर्भ अण्ड द्वै वादिये । प्रीति-सों सेवन किये फूटि द्वैसुत भये ॥ केतक दिवसन माहिं पंख निकसे सभी । उडिकै बैठन लगे डारऊपर तभी ॥ निरखत बहु सुखमानि कपोत कपोतिनी । हमरे अति बड़भाग दियो यह सुख धनी ॥ एक रहे घर माहिं जु रक्षा धारने । दूजे बनमें जाय जीविका कारने ॥ वनसे चूगालाय वचन मुख डारई । वाते उनकी क्षुधा सकल निरवा-रई ॥ जन्म सुफल मनजानि रैनदिन यों रहै । वसुधामें कछु शोच न हियमाहीं लहै ॥ इकदिन कह्यो कपोत कपो-तिनि साथही । ये बच्चा अब बड़े भये सब गातही ॥ एतौ रहैं गृहमाहिं दोऊ हम वन चलैं । चूगालावे बहुत करैं भोजन भलैं ॥ है करि निस्संदेह दोऊ वनको चले । कहैं चरण-हिदास चुगनलागे भले ॥

दोहा—पाछे वधिक जु आइया, दीनो जाल बिछाय ॥
पकरनकी मनमें करि, बैठ्यो घात लगाय ॥

अष्टपदी ॥ दोऊ गे वनमाहिं वधिक इक आइया । उन बच्चनको देखिकै जाल बिछाइया ॥ तापर किणका डारि आप तो छिपिरह्यो । बच्चन चूगा देखि भेद कछु ना लह्यो ॥ यह कणकारण मात पिता वनको रमै । सो पायो यहिठौर चुगैं क्यों ना हमैं ॥ दोऊ उतरे तहां जबै मुख डारिया । तब वहि वधिकने जाल फंदको मारिया ॥ आय कपोतिनि जबै शब्द

नाहीं सुनो । घरमें पाये नाहिं शीश तबहीं धुनो ॥ बचन कारण शब्द कियो हंकारिकै । बोले पिंजर माहिं जु वचन निहारिकै ॥ देखि कपोतिनि जालमें यह मन आनियां । अपना जीवन अफल जगतमें जानियां ॥ तनमें अतिदुखपाय कल्पना बहु करी । कहैं चरणहींदास बुरी आशा धरी ॥

दोहा—जाल माहिं मोसुत फँसे, जाय परौं वा ठौर ॥
विकल होय चाली तबै, कियो विचार न और ॥

अष्टपदी ॥ मोह फंदवश होय जालमाहीं परी । वाहू को गहि वधिक पिंजरमाहीं धरी ॥ आयो बहुरि कपोत लख्यो सुत बालहू । इन बिन कैसे जिऊं मरौं बेहालहूं ॥ परो जालके माहिं बहुत दुख मानिकैं । चारौ गहि लै चलो वधिक सुख जानिके ॥ राजा मों मनहुति जु सुतदाराकरूं । निरखि लई यह सीख बहुरि नहिं चितधरूं ॥ वाको कीन्ह्यो गुरू यह कौतुक देखिकै । हरि सुमिरणमें पगोरहूं जु विशेषिकै ॥ मोह महादुखरूप सकल बिसराइया । लिये रहूं वैराग परमसुखपाइया ॥ सदारहूं निर्बंध द्वन्द सब भाजिया । चरण कमलको ध्यान हियेमें साजिया ॥ तहां वसौं निशि भोर अंत नाहीं वहूं । चरणहिंदासा होयकै निज आनंद लहूं ॥

अजगर ९.

दोहा—नवां गुरु अजगर कियो, लियो परमसंतोष ॥
परालब्ध दृढ कारि गही, रहा राग नहिं दोष ॥

अष्टपदी—जिहि कारण गुरु कियो कहूं कारण सभी । जासों रहौं दृढ़ बैठि आयो धीरज तभी । आगे भिक्षा काज ध्यान तजि डोलतो । कोऊ देतो भीख कोउ दुर्बोलतो ॥ जो कोउ भोजन दियो मगन होतो तहां । जो कोउ नाहिं दियो क्रोध

करतो तहां ॥ अजगर इक दिन लखो जहां उतपतिभयो। निशिदिन ह्वांई रह्यो कहूं नाहीं गयो ॥ आय अचानक मृगा सिंह वा मुखधँसै। चौपाये यों आय तासु मुखमें फँसै ॥ जो वह जागतहोय उन्हैं मुखसों गहै। तिनको भोजन करै उदर योंही भरै ॥ परालब्ध जो होय सोई ह्वां आरहै। परो रहै वहिठौर सभी दुख सुख सहै। वाकी लीनी रहनि बहुत सुखपाइया। चरणहिंदासा होय अधीर गँवाइया ॥

दोहा–जबसों पर आशा तजी, गृहीद्वार नहिं जावँ ॥
लगो रहौं हरिध्यानमें, सहज मिलै सो खावँ ॥

अष्टपदी ॥ मनराखौं प्रभु ध्यान सदा आनन्दमें। ज्ञान दिशा अब भई रहो नहिं द्वन्दमें ॥ याचक घर घर फिरै न भिक्षा पावई। साधनको वनमाहिं भोजन हरि ख्वावई ॥ जब भइ ऐसी समझ निचल बुधि आइया। जहँलग जिह्वा स्वाद सभी जु गँवाइया ॥ स्वादी अरु बिन स्वाद जो भोजन आवई। सबहीकरुं अंगीकार सुरुचिसों पावई ॥ सूखो गीलो होय जु भूनो हो कछू। ताको फेरौं नाहिं सभी लेकर भछूं ॥ जो कछु आवै नहिं ह्वांई बैठो रहूं। परालब्धीहिजानि बुरो भलो नागिनूं ॥ सकल विकल नहिं होय न आशा कछु कहीं। नारायणके ध्यान रहूं लागो वहीं ॥ अजगर कीसी वृत्ति निरी मेरे रही ॥ चरणहिंदासा होय भक्ति दृढ़कारि गही ॥

सिंधु १०.

दोहा–दशवें गुरु कियो सिंधुको, कहुँ सोई परसंग ॥
लीन्हें समझ विचारिकै, जाके तीनौ अंग ॥

अष्टपदी ॥ खारी नीर स्वभाव सदा इक रस वही ॥ मीठी सरिता बहुत चली आवै वही ॥ मिलि नाहिं फिरै स्वभाव तासु

को जानिये। ऐसे विरक्त रहै जगतमें मानिये॥ बहुतै होय गँभीर थाह नहिं पावई। ऐसा साधू जानि राम मन भावई॥ वर्षाऋतुकी नदी रलैं बहुवादसों। घटै बढ़ै वह नाहिं रहै मर्यादसों॥

पतङ्ग ११.

एकादश जो पतंग कहूं मैं सुनायकै। देखि दीपकी ज्योति गिरैहै आयकै॥ दीन्हों आप जराय हाथ कछु न लगो। समुझिकामिनी रूप सो मैं दूरीभगो॥ ज्ञान जाय अरु नरकपरै इस रीतिसों। सुन्दररूप निहारि करो मत प्रीतिसों॥

भँवरा १२.

दोहा—फूल फूलपर बैठिकै, उदर भरै तिसनाल॥
सो भँवरा गुरु बारवां, लई जु बाकी चाल॥

अष्टपदी॥ भिक्षा कारण मांगन घर घर जात हो। कोऊ देतो आनि कोऊ जु रिसातहो॥ ताते शिक्षा भवँर कि यह उरमें लही। सूक्षम सबही पुष्पसों उन रसनागही॥ तब मैं कियो विचार इकट्ठो लेनते। देनहार को दुःख बहुतही होतहे॥ नेक नेकही लेहु बहुत घर जायकै। उदर पूरणा करूं जु आनँद पायकै॥ जितना होय अहार सोई अब लेतहौं। बासी नेक न राखि न काहू देतहौं॥ अलिसुतकी यह रीति भूखभरि खावई। और दिना के काज न नेक बचावई॥ फूलनको रस चाटि नहीं उनसों बँधै। ऐसे विकरत रूप जगत में ना फँधै॥ चरणहिं दासा होय त्याग मन राखई। राजा सों इहिभाँति ऋषीश्वर भाखई॥

मधुमक्खी १३.

दोहा—देखि दशा माखीनकी, तजो सकल संग्रेह॥
मिटि दुविधा निर्भय हुये, भई सुखारी देह॥

अष्टपदी ॥ तेरहूँ शहतकी माखी ताहि पिछानियाँ । सब वृक्षनको मीठो इकठाँ आनियाँ ॥ जब छत्ता भयो पूर किसीने तोरिया । सब रस लीन्हों काढ़ि कै वाहि मरोरिया ॥ बहुत भयो उन कष्ट जु वै भागी फिरीं । बहुत मरीं वहि ठावँ बहुत सिसकैं गिरीं ॥ ताते माखी गुरू हिये माहीं धरो । कोउ जक्तकी वस्तुको संग्रह ना करो ॥

हाथी १४.

चौदहवें हाथी जानि कामवश होयकै । आपा आप बँधाय जन्म दियो खोयकै ॥ इकगज मातो हुतो जंगल के बीचहीं । अति बलवंत विशेषि कोऊ वा सम नहीं ॥ वा ढिग हस्ती और कोई नहिं जात हौ । मानुष पशुजिया योनि कहूँ कह बातहौ ॥ वाकी आई बात जु राजापै चली । इक कुंजर वनमाहिं रहत है अतिबली ॥ भूपति अज्ञादई पकरि वा लीजिये । जामें आवै हाथ यतन सोई कीजिये ॥

दोहा—पीलवान अज्ञालई, खोदी खंदक जाय ॥
चरणदासतहँछलकियो, दीन्हों घास बिछाय ॥

अष्टपदी ॥ भगलकी हथिनि बनाय सवाँरी बुद्धिसों । खंदक ऊपर धरी खरी करि शुद्धिसों ॥ जल पीवनके काज जु हस्ती आइया । वा हथिनीको देखिकै अधिक लोभाइया ॥ जब हथिनीकी ओर चलो मति हीनहीं । सपरश इच्छा धारि परो खंदकमाहीं ॥ निकसन कैसे होय बहुत लंघनकरे । अति दुर्बल तन भयो पराक्रम सब हरे ॥ तब वापर चढ़ि बैठ महावत आयकै । बाहर लायो काढ़ि जु ताहि सधायकै ॥ फिरि राजाके पास खड़ो कियो लायकै । अंकुश शिरके माहिं जु बेडी पायकै ॥ शीश धुनै पछिताय वै आनँद

कितगये। जो सुख बनके माहिं सभी स्वपना भये॥ सदाहुतो निर्बंध आय बंधन बँधो। कहैं चरणहीं दास काम फंदन फँधो॥

दोहा—सपरशकी इच्छा किये, भया जु ऐसा हाल॥
पशुपक्षी नर नारिही, फँसे कामके जाल॥

अष्टपदी॥ भाषत दत्तात्रेयजु साधूजन कभी। कामिनि और निहारि करै सपरश तभी। हस्ती केसो हाल साधुको होय है। सुमिरण ज्ञानरु ध्यान जु सबही खोय है। जो कहै हम है साधु जु कोई भार्य्या। चूमै हमरे चरण तासु होय है कहा॥ चरणन चूमै आय हाथ धरि पायँ पै। साधूमन चलिजाय स्पर्श सुख पायकै॥ वाको सुख उरधारि करै इक कामिनी। वाते पुत्र कलत्र बहुतही यामिनी॥ वनमें तप अरु योगजु करतो निशिदिना। सो सबही गो भूलि नहीं सुख इकक्षना॥ ताते हस्ती गुरूहिये में धारिया। कामिन को परसंग सकल निर्वारिया। काठकि पुतली होयकै कागज में रची। चरणहिंदासा होय सोभी देखनतजी॥

मृग १५.

दोहा—पन्द्रहवाँ गुरु मृगकियो, ताकीगति सुनिलेहु॥
औगुणहींको छोडिकरि, गुणहींमें चितदेहु॥

अष्टपदी॥ मृग देखो वन माहिं ताकी मति आनियां। जीव दियो वहि ठौर सोई हम जानियां॥ वधिक बजाई बीण राग गावनलगो। सरवण सुनि वह हिरण रीझि आयो भगो॥ पहुँचो पारधिपास बाण उन मारिया। ता दिन रागको चाव सकल निर्वारिया॥ जो विरक्त सुनै राग जु रस शृंगारको। ऐसहि होवै ख्वार नरकमें जायसो॥ सुनिये गुण गोपाल चरित्र कर्त्तारको। जासों दुख छुटिजाय ये मायाजारको॥

तासों उपजे ज्ञान ध्यान दृढ़ कारि गहै । पावै पद निर्वाण जहां सुखसों रहै ॥ निश्चयही तू जान जु मैंने यह कही । चंचलता गइ छूटि जु बुधि निश्चल भई ॥ ना नारी री राग नाच बिसराइया । चरणहिंदासा होय चरण चित लाइया ॥

मछली १६.

दोहा—कहूं सोलवीं मीनकी, बुरी जीभकी स्वाद ॥
जो कोई यामें फँसै, लगै बहुत उठि व्याध ॥

अष्टपदी ॥ सोलहो गुरु लुल मीन जो ऐसे देखिया । वा मच्छीको एक वधिक अवरेखिया ॥ थोरो मांस लगाय जु बंसी साथही । जलमें दी छुटकाय डोरगहि हाथही ॥ जिह्वा स्वादकेकाज मीन वह खाइया । गई उदरके माहिं हिये अटकाइया ॥ तीक्षण कांटा लोह हियको फारिया । ताही क्षण वह मीन प्राण तजिडारिया ॥ ताते मच्छी गुरुहिये माहीं करो । जिह्वाको कछु स्वाद नहीं मनमें धरो ॥ जो विरक्तको स्वाद जीभको चाहिये । बहुत भाँति दुख होय नहीं सुख पाइये ॥ जिह्वास्वादके काज गृही घर जायहै । आछो भोजन पाय तौ रुचिसों खायहै ॥ भोंडो भोजन होय तौ नाक चढ़ावई । हरि सुमिरणको त्यागिकै जिततित जावई ॥ ताते साधूलोग नहीं घर घर फिरैं । जिह्वाको कछु स्वाद नहीं चितमें धरैं ॥ ऐसो भोजन खाय लखैं ज्यों औषधी । सबही रोग नशाहिं रहै काया शुधी ॥ चीकन भोजन खाय नींदबहु आवई । ध्यान भजनकी रीति सकल बिसरावई ॥ सब इन्द्रिनके माहिं जो जिह्वावश करै । जो आवै सोइ खाय कभूं भूखोरहै ॥ जो जिह्वावश होय तौ इंद्री वश सबै । जो रसनावश नाहिं तौ सब परबल तबै ॥ चीकन भोजन खाय तौ इंद्री सब जहां । अतिही है बलवन्त

करैं औगुण तहां। षटरसही के स्वादसों नारी वश भये। जग-
माहीं दुखपाय मुये नरकै गये ॥ मनमें देखि विचारि गुरू
कियो मीनहूं। जासों लीनी साख इन्द्रीभइ क्षीनहूं ॥ सबही
स्वाद भुलाय शरण हरिकी लई। चरणहिंदासा होय सुरति
निर्मल भई ॥

पिंगला १७.

दोहा–सत्रहवाँ गुरु पिंगला, लीन्हों जासों ज्ञान ॥
आशातजि निर्मल भयो, लगो रहूं हरिध्यान ॥

अष्टपदी ॥ गुरु सत्रहवाँ जान हमारो पिंगला। पर आशा
दइ छाँड़ि रहूं आनँद मिला ॥ इक दिन राजा जनक विदेही
के नगर। गयो अचानक लखो पिंगलाको बगर ॥ पिंगला
उठि परभात भली विधि न्हाइया। भूषण वस्तर पहिरि सु-
गन्ध लगाइया ॥ घरके द्वारे बैठि जु बाट निहारई। कोऊ दे
बहु द्रव्य सु ह्यां पग धारई ॥ मारगमें नर देखि यही आशा
कर। आवत जानै ताहि खुशी हियमें धरै ॥ जब वह आयो
नाहिं दुखी मनमें भई। कबहूं आश निराश ऐसही निशि अई॥
ऐसे सब दिन बीतिगयो यहि भाँतिही। मनमें भई मलीन
आइ पुनि रातिही ॥ काया आलस धारि जु घर भीतर गई।
पलँगा बैठी जाय जहां भलि सेजही ॥ बिछे बिछौना श्वेत
फूल तापर धरे। लेटी तहँ मग जोय नैन निद्राभरे ॥ कबहूं
उठि जा द्वार कभूं जा भीतरै। कहै चरणहिंदास नींद नाहीं परै॥

दोहा–आशाकी डोरी बँधी, क्षण घरमें क्षण द्वार ॥
थिरता ना संतोष बिन, दुखी पिंगला नार ॥

अष्टपदी ॥ ऐसे आधीरात गई जब बीतिकै। कोऊ आयो
नाहिं सुहां कछु प्रीतिकै ॥ पिंगला उपजो ज्ञान हिये परकाशही।

उदयभयो संतोष लोभ गयो नाशही ॥ वर्ष सहसदश माहिं जु तपकोऊ करै । हिरदै निर्मल होय सभी कलिमल हरै ॥ ऐसो ज्ञान उजास पिंगलाको भयो । तब उन हिरदै माहिं वचन ऐसो कह्यो ॥ हीन हमारे भाग जन्मयोंही गयो । मनुष रूपसों काम क्रोध लोभै छयो ॥ ताते जिविका आस हियेमें चाहिया । परमातम भगवानसों प्रीति न लाइया ॥ सदा विराजत निकट दूरि नहिं होत है । सब-विधि पूरणकाम सकल जग ज्योति है ॥ सबहीको नित देत खान अरु पानई । चरणहिंदासा होय सोई यह जानई ॥

दोहा—लख चौरासी योनिमें, सबको भोजन देय ॥
सदा वही पालन करै, अपनो नाम न लेय ॥

अष्टपदी ॥ मनुषरूप जो देय एकदिन खानको । दूजे दिन वह बहुत घटावै मानको ॥ नारायणसों भक्ति जो जग-को सुख चहै । ऐसे वाको देय सदा इकरस रहै ॥ जाके लीन्हें नाम सकल पातक नशैं । कथा जु उनकी सुनै हिये आनँदलशैं ॥ ऐसो हरि बिसराय मनुषको चाहिया । विरथा जन्म गवाँयके सुख नाहिं पाइया ॥ काया है इक गेह हाड़ अरु माँसको । नाड़ी गुणसों बांधिरखो है तासुको ॥ चामरु लोहू पीव तहां नवद्वारहैं । सदा बहतही रहत यही जु विचार हैं । विष्ठा मूत जो होय या गेहके माहिंहीं । ऐसे घरसों भोग मुदित मन चाहहीं ॥ ऐसे बिरथा आयु सकल जु गवाँइया । हरिके चरणनदास नहीं जु कहाइया ॥

दोहा—अब उरमें ऐसी उठी, करूं भक्ति चितलाय ॥
चरणकमलमें मन धरूं, जगसों नेह उठाय ॥

अष्टपदी ॥ अब करूं भक्ति उपाय जु हरिमन भाइया। ताते लेहुं रिझाय परमगुण गाइया ॥ जैसे लक्ष्मी सेवकरी मन लायकै। कीन्हें महा प्रसन्न श्रीपति धायकै ॥ ऐसे मन भगवानसों अपनो लायहौं। पावों गुरुप निधान प्रीतिके भाय हौं ॥ लक्ष्मी करी जु भक्तिपुराणनमें कहैं। नारायण दई ठौर सदा हियमें रहैं ॥ मैं हूं ऐसी भक्तिकरूं अतिप्रेमसों। करूं महापरसन्न अधिकही नेमसों ॥ आजके दिनसे आश मनुषकी त्यागिकै। राखूं प्रभुकी आश चरणहीं लागिकै ॥ जो कछु हरि मोहिं देयँ सोई निर्दोष हैं। करूं भजन भगवन्त तासु सो मोषहै ॥ मनुषरूप कहा वस्तु जु आशा कीजिये। बहुत हुवाँलौं देत जहां लौं लीजिये ॥

दोहा—दुखमें काम न आवई, मुये न संगी कोय ॥
चरणदास यों कहतहैं, ये संसारी लोय ॥

अष्टपदी ॥ जब वह मृत्यक होय नहिं कछु हेतहै। हरि जु सदाही संग सभी सुधि लेत है ॥ मनुष आपनी नाहिं जु इच्छा करिसकै। औरनको कह देय मूरख योंहीं तकै ॥ पिंगलाकहो यह ज्ञान मुझे क्यों आइया। नीके काजन माहिं न चित्त लगाइया ॥ तीरथ बर्त्तन साधू दर्शन देखिया। हौं तिरिया बुरे कर्म कि चाल विशेषिया ॥ परमेश्वरकी दया सों यह पहिंचानिये। और बात कछु नाहिं हियेमें आनिये ॥ जो कोई कहै आज कछू धन नालयो। कोई आयो नाहिं ज्ञान ताते भयो ॥ आगेहू बहुदिवस कोई नहिं आइया। कीन्हें लंघन बहुत द्रव्य नहिंपाइया ॥ ज्ञान कबौं नहिं भयो आज जानत नहीं। कौनभाग बड़ मोरभयो परगट अभी ॥ कहै

गुरू शुकदेव जु उन नहिं जानिया। दत्तात्रेयके दर्शसों कुमति भुलानिया॥

दोहा—पिंगला आई घर विषे, छोंड़ि मनुषकी आश॥
सुखी होय सोवन लगी, जब वह भई निराश॥

अष्टपदी॥ मनसें किय सन्तोष सकल दुख मिटिगये। छोड़ी जगकी आश हिये आनँद छुये॥ यों कहैं दत्तात्रेय राजासों यही। वाकी मैं लइ सखी सोई दृढ करिगही॥गृही द्वार नहिं जावँ न माँगौं कछु कहूं। तातें सुखीरु शान्त सदा बैठोरहूं॥ उद्यम करूं कछु नाहिं वासना त्यागिकै। आनँद तन मन मोहिं बहुत अनुरागिकै॥ मनुष दुखी वहि होय रहै आशा लिये। काम क्रोध अरु लोभ मोह उतपति किये॥ जो आशा मन आय कबौं वह ना भई॥ क्रोधभयो उत्पत्ति यही मनसा ठई॥ काहूते इकवस्तु कछू जु मँगाइया। वाने दीन्हीं नाहिं क्रोध उपजाइया॥ वाते कीन्हों वैर अधिक रिस ठानिया। नारायणके ध्यान सुरति नहिं आनिया॥ यह शिक्षा लइ मानि पिंगलासे तभी। जगकी छोड़ी आश भये कारज सभी॥

चील्ह १८.

दोहा—चील्हअठारहोंगुरुकियो, मिटो सकल सन्देह॥
रहौं अकेलो संग तजि, करौं न कछु संग्रेह॥

अष्टपदी॥ जब गृहसेती निकसि वैरागी हमभये। तब हमरे मनमाहिं जु ये कारज छये॥ दो भाजन सँग होहिं एक जल पीजिये। दूजे भाजन माहिं खानको लीजिये॥ इक चादर कौपीन दोयहू चाहिये। ताते ओढि नहानकि युक्ति बनाइये॥ करिकै जब अस्नान ध्यान करने लगो। मनमें

चिंत्यो कोऊ कौपीनहि लैभगो ॥ समझो यह मनमाहिं बहुत अधिकारते। अन्त महादुख होय मोह उरधारते ॥ ऊंची पदवी पाय बहुरि नीचेपरै। जब वह संयुत जाय घनो मनसें झुरै ॥ जो कोइ रहै इकन्त अकेलोई सहै। ताहि उदरको शोच कछु नाहीं रहै ॥ दशविश सौ जो साथ अधिक दुख लहत है। आप अकेलो रहैं परसदुख सहत है ॥ सकल विकल विसराज जु आनँद पावई। चरणहिदासा होयकै बोझ बगावई ॥

दोहा—उडती देखी चीलहको, पंजे माहीं मांस ॥
बहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन न देवैं श्वास ॥

अष्टपदी ॥ पक्षी सभी लोभाहिं माँसको देखिके। वाको मारै चोंच जु लोभ विशेषि कै॥ कोई नोंचै पंख कोई मस्तक भनै। वह दुख पावै बहुत समाझि मूडी धुनै॥ मैं काहूसे वैर प्रीति नहिं मानिया। या भक्षणके काज कष्टही जानिया ॥ माँस दियो छिटकाय जु दे पक्षीभये। वा भक्षणके पास सभी दौरेगये॥ वह बैठी मन मुदित जु पंखपसारिकै। दीन्ह्योदुख विसराय जु व्याधा टारिकै॥ वा दिनते लइ सीख जु संग्रह ना करौं। कछु न राखौं पास नग्नतन मैं फिरौं॥ जहँ चाहूं तहँ जावँ भजन आनन्दमें। कछु मन चिन्ता नाहिं छुटो मन बन्धते। काहू वस्तु न शोच कोई लैजायगो ॥ चरणहिंदासा होय ध्यान हरिपायको ॥

बालक १९.

दोहा—बालक गुरु उन्नीसवों, ताके लिये स्वभाव ॥
नहीं मान अपमान है, लोभ न कछू उपाव ॥

अष्टपदी ॥ बालक माहीं नहीं मान अपमानहू । लोभजु वामें नाहिं रहै अनजानहूं ॥ मारै कोई वाहि रोष वह ना करै । करै जु फिरि वह प्यार बाल हँसिहँसि परै । निन्दा अस्तुति दोय कभी नहिं धारई । वैर प्रीतिको अंग कछू न विचारई ॥ जो मणि बहुतै मोलकी वासे लीजिये । खेल खिलौना फूलको पलटै दीजिये ॥ मणिको लोभ न करत कछू नहिं भाषई । चितको अपने खेलके माहीं राखई ॥ जो कोउ नारी पकरि हिये सो लागई । बालक अरु वा नारिको काम न जागई ॥ नगन जु बालक फिरत लाज नहिं आवइ । ज्योंभावे त्यों रहै कोई न चलावई ॥ क्रिया कर्म अरु सकुच कछू वाके नहीं । ठाकुर अरु चरणदास कछू जानै नहीं ॥

दोहा—बोले दत्तात्रेयजी, राजासों यह बैन ॥
इकदिन बालककी सबै, देखी अपने नैन ॥

अष्टपदी ॥ भाषैं दत्तात्रेय बालगति देखिकै । वाके लिये स्वभाव सभी जु विशेषिकै ॥ जो कहुँ हमसों प्रीति बहुत आदर कियो । काहू गारी काढ़ि बहुत झिड़को दियो ॥ दोनों एक समान और नाहिं व्यापई । बैठूं सहज स्वभाव उठूं फिर आपई ॥ जो कीन्हूं भोजन दियो चाटि ह्वांई लियो । करहीको कर पत्र जहाँ पानी पियो ॥ अष्टधातु को लोभ त्याग सबही कियो । कैसोहिं वस्तरदेहु छाँड़ि तितही दियो ॥ ज्यों बालक निज खेलमें आनँदसों रहै । त्यों परमातम संग कछू दुखहूं न भै ॥ तुरिया पद निर्वाण मातु समही कहूँ । ताकी गोदी माहिं सदा सुखसों रहूं ॥ चरणहिंदासा होयकै गर्व नशाइया । छोटापनके अंग सबै तब आइया ॥

कन्या २०.

दोहा–कन्या गुरु कियो बीसवों, समझि विचारिकै देखि ॥
रहौं अकेलो तभीसों, पायों यही विवेकि ॥

अष्टपदी ॥ पुण्य तू बिसवो जान गुरु कन्या कियो । वाको मत अनुराग हियमाहीं लियो ॥ इक नगरीके माहिं एक दिन हमगये । इक ग्रहचारीके गेहजाय ठाढ़े भये । स्यानी कन्या तासु जु घरमाहीं हुती । मातापिता किसीकाज गवन कीन्हों तभी ॥ करन सगाई आयलोग बैठेतहीं । या कन्याकी करैं सगाई आजहीं ॥ कन्या कीन्हों शोच यही कैसेकहूं । मात पिता कहिं गये अकेली मैं अहूं ॥ ऐसैं मात और पिता चिन्ता मनमें करैं । भोजनको कछु नाहिं जु हम आगे धरैं ॥ कन्या करिकै शोच ये वचन उचारिया । मात पिता गये न्हान अभी पगधारिया । आवो बैठो खाट रसोई खाइये । भोजन होत सवार कहीं नहिं जाइये ॥ वाके गृह कछु नाहिं धान थोरेहुते । कूटनलागीं ताहि सोई अपने मते । चूरी हाथके माहिं बहुत करकन लगीं । फिरि समझी मनमाहिं शोच-माहीं पगीं ॥ यों समझैं ये लोग कछू गृहमें नहीं । भोजन कारन धानजु कूटतिहै तहीं ॥ चूरीडारी फोरि दोय तहँ राखिया । तऊ न खरको गयो शब्दही भाषिया ॥ दूजीदइ बिगसाय एकही रहगई । तब खरका नहिं होय कुटत निर्भय भई ॥ वादिन कन्या गुरूजु हमने चितधारा । साधु अकेलो रहै सदा आनँद भरा ॥ धर्मशाला ते निकसि शिष्यको साथले । कबहूँ उपजै क्रोध शिष्य भापै यहै ॥ आपनहीं लियो बहुत हमैं थोरो दियो । गुरुको चहिये टहल शिष्य रूठैगयो ॥ गुरू कहै कछु और शिष्य औरै कहै । झगड़ैं

आपसमाहिं प्रीति थिर ना रहै ॥ दोउमें कलकल होय शान्ति नहिं आवई । बिना अकेले रहे चैननहिं पावई ॥ पशुपक्षी नरनारि संग नहिं लीजिये । दूजेही को साथ सभी तजि दीजिये ॥ छूटैं सकल कलेश ध्यान लागैं भलो । चरणहिंदासा होय रहै हरिसों मिलो ॥

तीर बनानेवाला २१.

दोहा–गुरु कीन्हों इक्कीसवों, ताहि तीरगर जान ॥
चरणदास यों कहतहैं, वासों सीखो ध्यान ॥

अष्टपदी ॥ पुनि इकीसवों गुरू तीरगर हम कियो । ताते ध्यानको भेद सीखि हियमें लियो ॥ इकदिन नगरीमाहिं तीरगर हाटमें । ठाढ़ो भयो तहँजाय चलतही बाटमें ॥ वह तौ बनावत तीर आपनी जानमें । और कछू सुधि नाहिं पगो वा ध्यानमें ॥ वाके आगे होय भूप इक आइया । हस्ती अरु दल साज निशान बजाइया ॥ भयो मुहूरत एक मनुष तहँ आइकै । भूपगयो इसराह बुझो जु सुनायकै ॥ वह तौ साजत तीर यही उत्तर दियो । हम तौ जानतनाहिं नहीं दर्शन कियो ॥ भाषत दत्तात्रेय जु हमवासों कह्यो । राजा सँग बहु भीर शब्द दुन्दुभि भयो ॥ बहुत कटक लिये साथ जु भूप सिधारिया । तैं काहे नाहिं सुनो न दृष्टिनिहारिया ॥ उन यों उत्तर दियो तीरके ध्यानहीं । सुरतिरही तेहि माहिं याते नहिं जानहीं ॥ वाको कीन्हों गुरू हियेमें धारिकै । मन हरि चरणन पास रखूं निर्धारिकै ॥ दृष्टि मना अरु बुद्धि जहां जु लगाइया । ऐसो कहिये ध्यान विरले कहुँ पाइया ॥

दोहा–ध्यान करै दृग मूँदि करि, जो कोई नर नार ॥
खटका सुनि पलकैं खुलैं, मन चल वारम्बार ॥

अष्टपदी ॥ वह नहिं कहियत ध्यान जु खुलिखुलि जातहै। निश्चल लागै ध्यान जु पूरी बातहै॥ ध्याता ध्यानके बीच ध्यान ध्येय माहिं है। तीनों एकहि होहिं विघ्न कछु नाहिंहै॥ मन हरि-चरणन पास कायकी सुधिनहीं। भूख प्यास कछु नाहिं ध्यान लागत तहीं॥ मन गयो औरै ठावँ ध्यान जो लाइये। सो वह डिगि डिगि जाय न थिरता पाइये॥ जब नारायण साथ मगन मन ह्वैगयो। सबकारज गयो भूलि कछू सुधि ना रह्यो॥ जैसे भाषत लोय समाधी पुरुषको। दिन बीतैं दश बीस नहीं सुधि बुधि कहूं॥ कहिये यही समाधि वासना सब जरैं। कोटिन मध्ये एक ध्यान ऐसो धरैं। सोई चरणको दास सोई योगी सहै। सोइसाधक सोई सिद्ध जु बिस्वेवीसहै॥

दोहा—ध्यानी ध्यान लगायकै, रहै राम लवलाय॥
आपा बिसरै हरिमिलै, बहुरि न उपजै आय॥

अष्टपदी॥ तनकी सुधि बिसराय कछू सुधि ना रहै। या विधिसे जो करै ध्यान ताको कहै॥ हलचल ध्यान जो करै सो हरिसों ना मिलै। अफल ध्यान सोइ होय जो मन क्षण क्षण चलै॥ तीर बनावनहार गुरू हमने कियो। ताते यह उपदेश हिये माहीं लियो॥ ऐसे मनको साधि प्रभू चरणन धरै। ह्वांइरहै चितलाय जु इतउत ना फिरै॥

सांप २२.

बाइसवों गुरु सांप हमारो जानिये। ताते लीन्ही सीख यही पहिंचानिये॥ सदा अकेलो रहै कबों घरना करै। रैनि जहां कहुं होय वहीं वह बासिरहै॥ वाकी देखी रहनि जु मनमें लाइया। सदारहूं निर्बंध न मन्दिर छाइया॥ उपजो मोह न लोभ नहीं मन दाग है। चरणहिंदासा भयो द्वेष नाहिं राग है॥

दोहा—बँधा जु पानी गांदला, चलता निर्मल होय ॥
दोनों रीति विचारिकै, भली होय सो लेय ॥

मकरी २३.

तेइसवों मकरी गुरू, उगिलि तार भषि जाय ॥
ऐसे जग परकाश करि, प्रभु ले आप लुकाय ॥

अष्टपदी—तेइसवों गुरु जान हमारो माकरी । आपसों काढ़ै तार रहै बामो खरी ॥ फिरि वह तार समेटि लेय उरमें धरै । यों हरि लीला जानिय कौतुक सो करै ॥ वसुधाको उपजाय करै पालन जभी । फिरि सब लेय मिलाय आप माहीं तभी ॥ जैसे मकरी तारसों जाल बनाइया । फिरि आपन वा बीचमें सहज समाइया ॥ जब चाहै वह जाल उदरमें लै धरै । मक्षी जालमें फँसै सो नाहीं ऊबरै ॥ भाषैं दत्तात्रेय मुक्ति जो चाहिये । हरि उतपति क्षय करन कि शरनमें आइये ॥ जन्म मरण भय मानि भक्तिमें पागिये । जगके जालसों छुटि वेगिही भागिये ॥ लीजै त्यागि वैराग्य चरणहीं दासहो । हरियश हरिगुण गाय तजो जग वासहो ॥

भृङ्गी २४.

दोहा—भृंगी मिलि भृंगी भवै, सुनो हतो यह बैन ॥
अबमन आई सांचही, देखा अपने नैन ॥

अष्टपदी—चौविसवों गुरु कियो जु भृंगी जानिकै । वासों निश्चय भई हियेमें आनिकै ॥ सुनीहुती यह बात जु कोई हरिभजै । निशिदिन मन ह्वां लायकै प्रभुसेवा सजै ॥ सो ...यण रूप आप ह्वैजात है । यामें संशय नाहिं सांच यह दोहा ॥ मन ठहरत ना हुतीय बात सुहावनी । सेवक जो रवै सो क्यों होवै धनी ॥ भृंगीको हम लखो कीट इक

आनिकै ॥ राखो उन गृह माहिं आपनो जानिकै ॥ आपन बाहर बैठि ताहि सम्मुख कियो। केतक दिवसन माहिं व भृंगीकरि लियो ॥ भृंगी रूपको देखिकै भृंगी ह्वै गयो। ताते भृंगी गुरू हमारे मन छयो ॥ जैसे करै कोई ध्यान सो वासम होत है। नहीं रहै चरणदास रहै ब्रह्मज्योति है ॥

दोहा—चौबीसों पूरेकिये, समझि समझिकरि देखि॥
विरक्त ह्वै जग में रहूं, लगै न माया रेखि ॥
फिरिअपनीकायालखी, रही न जासों प्रीति ॥
थके जु इन्द्री स्वादही, सहज गई सब रीति ॥

देह।

अष्टपदी ॥ भाषैं दत्तात्रेय गुरू इक देहहै। पहिले मोकोहो तो अधिक सनेह भै ॥ देखौ क्षण क्षण देह क्षीण ह्वै जातही। नित उठि सुखके काज भला कुछ खातही ॥ बहुतचाव करि आप कछू भोजन कियो। दूजे दिन वहि भाँति घनोही दुख दियो ॥ इकदिन वस्तर विसल बनाये लायकै। फिरि वस्तरके काज फिरूं दुखपायकै ॥ जितनो कियो उपाय काया सुख काजही। कबहूं सुख ना भयो फिरत बेलाजही ॥ इकदिन एक उपाय जु सुखको धारिया। दूजेदिन वहि दुःख बहुत विस्तारिया ॥ और लखी इक बात यह काया आपनी। अपनीही होवै नाहिं विचारीही घनी ॥ मूरख जानै नाहिं सुयाही भेदको। होवैना चरणदास सहै बहु खेदको ॥

दोहा—बालपनै अरु तरुणमें, और बुढ़ापे माहिं ॥
तीनों पनमें देह यह, कबहूँ अपनी नाहिं ॥

अष्टपदी ॥ बालकपनमें हाथ बाप अरु मायकै। तरुणापनमें फँसै त्रिया कर जायकै ॥ वृद्ध अवस्था माहिं पुत्रके

हाथहीं। पुनि जब मृत्यक होय अगिनि जारै तहीं॥ जो योंहीं रहिजाय पशू आदिक भषैं। देहन अपनी होय ज्ञान माही लषैं॥ वादिनते सुख काज नहीं श्रम धारिया। परालब्ध जो आय उदरमें डारिया॥ कायाते इककाज भलो पुनि होत है। हरिकी प्रापत होय जु ज्ञान उदोत है॥ मृत्यु जबहिं होय यह काया ना रहै। भारे कैसो गेह जीव काया लहै। जबहीं आवै कालनहीं ठहरायगो। खर्चै जो बहु द्रव्य न क्षण रहिजायगो॥ जबहीं समुझो ज्ञान देहको जीयमें। भयो विरक्त विचार आपने हीयमें॥ लई सीख चौवीस देहहित त्यागिकै। कीन्हों हरिको ध्यान बहुत अनुरागिकै॥ दत्तात्रेय ये वचन कहे बहु चावसों। पुनि तीर्थनको गये भक्तिके भावसों॥ राजा सुनि यह ज्ञान हियेमें धारिया। हरिसों सुरति लगाय सकल दुख टारिया॥ चरणहिं दासा होय परम सुखही लियो। तनको जगमें राखि जु मन हरिको दियो॥

दोहा—दत्तात्रेयीने कहे, जो राजासे बैन॥
सो मैं भाषामें कियो, समझो पावो चैन॥

अष्टपदी॥ चौवीसों के माहिं होय उपदेशदे। सद्गुरु वाहि उबारि किये सब दूरि भै॥ उनहींके परताप चौवीसों समझही। आई घटके माहिं जु उज्वल बुद्धिही॥ चौवीसों तनधारि जु अंग बताइया। जासोंभयो कल्याण अधिक सुख पाइया॥ ऐसे हैं गुरुदेव ये निश्चय जानिये। सकल विकल सब छोड़ि गुरुही मानिये॥ गुरुहीके परसाद मिलें नारायणा। जन्ममरण बँध छूटि होय पारायणा॥ समरथ श्रीगुरुदेव शीशपर राखिये। भवसागरकी व्याधि सकलही

नाखिये ॥ कहैं मुनी शुकदेव चरणहीदासको । वही जु पावै चौथे परम निवासको ॥

दोहा—गुरुसमानतिहुँलोकमें, और न दीखै कोय ॥
नामलिये पातक नशैं, ध्यान किये हरिहोय ॥
गुरुहीके परतापसों, मिटै जगतकी व्याध ॥
राग द्वेष दुख ना रहै, उपजै प्रेम अगाध ॥
गुरुके चरणनमें धरो, चितबुधिमनअहंकार ॥
जब कछु आपा ना रहै, उतरै सबही भार ॥
मन विरक्तके करनको, कीन्हों गुटकासार ॥
पढ़ै सुनै चितमें धरै, भवसागर हो पार ॥

इति श्रीस्वामीचरणदासकृतमनविरक्तकरन
गुटकासारवर्णनसम्पूर्ण ।





अथ श्रीब्रह्मज्ञानसागरप्रारम्भ ।

दोहा—जैसे हैं शुकदेवजी, जानत सब संसार ॥
भगवतमतपरगटकियो, जीव किये बहु पार ॥
तिन मोपै किरपा करी, दियो ज्ञान विज्ञान ॥
सो शिख तुमसों कहतहौं, छूटै सब अज्ञान ॥
शिष्यसुनो अब कहतहौं, परम पुरातन ज्ञान ॥
निगुरेको नहिं दीजिये, ताके तपकी हान ॥
कुं०—मोक्ष मुक्ति तुम चहतहौ, तजौ कामना काम ॥
मनकी इच्छा मेटिकरि, भजौ निरंजन नाम ॥
भजौ निरंजन नाम तत्त्व देह अध्यास मिटावो ॥
पंचनके तजि स्वाद आपमें आप समावो ॥
जब छूटै झूठी देह, जैसके तैसे रहिया ॥
चरणदास यह मुक्ति, गुरूने हमसे कहिया ॥
दोहा—देह मरै तू है अमर, पारब्रह्म है सोय ॥
अज्ञानी भटकत फिरै, लखै सो ज्ञानी होय ॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान ॥
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान ॥
डोलन बोलन सों बनो, भक्षण करण अहार ॥
दुख सुख मैथुन रोगसब, गर्मी शीत निहार ॥

जातिवर्णकुल देहकी, सूरति मूरति नाम ॥
उपजै विनशै देह सो, पांच तत्त्वको ग्राम ॥

पंचतत्त्व।

पावक पानी वायु है, धरती अरु आकास ॥
पंचतत्त्वके कोटमें, आय कियो तैं वास ॥

तीन गुण।

पांच पचीसौ देह सँग, गुण तीनों हैं साथ ॥
घट उपाधिसों जानिये, करत रहैं उत्पात ॥

तमोगुण।

तामस अरु हिंसा करै, वचन चलन विपरीत ॥
आलस अरु निन्दा करै, तामस गुणकी रीति ॥
दम्भकपटछलछिद्रबहु, खोटें सब व्योहार ॥
झूठ वचन ऐंठो रहै, तामसके गुण धार ॥

रजोगुण।

मान बड़ाई नाम ना, सिद्धि चहैं भजि राम ॥
भोजन नाना स्वादके, राजस गुणके काम ॥
खेल तमासे राजसी, अरु सुगन्धकी वास ॥
आपनको ऊंचो गनै, औरनकी कर हास ॥

सतोगुण।

दया क्षमा आधीनता, शीतल हिरदय धाम ॥
सत्यवचनगुणसात्विकी, भजन धर्म निष्काम ॥
दुखी न काहूको करै, दुखसुख निकट न जाय ॥
समदृष्टी धीरज सदा, गुण सात्विकको पाय ॥

ग्रहण करनेयोग्य गुण।

राजससों तामस बढ़ैं, तामससों बुधि नास ॥
रजगुणतमगुणछाँडिकै, करो सतोगुण वास ॥

सतगुणमें मन थिरकरो, करि आतमसों नेह ॥
आतम निर्गुण जानिये, गुण इन्द्रीसँग देह ॥
सात्त्विक राजसतामसी, त्रैगुणते संसार ॥
तीन पांचको नाश है, माया ब्रह्म विचार ॥
अहंतत्त्व ॐ भयो, जिनते तीनों देव ॥
जिनके परे जु आतमा, अगम अगोचर भेव ॥
उपजै सो माया सभी, विनशि नेकमें जाय ॥
छलमाया सो कहत हैं, स्वप्नो सकल विहाय ॥
निराकारअद्वैत अचल, निर्वासी तू जीव ॥
निरालम्ब निर्वैर सो, अज अविनाशी सीव ॥

ज्ञान इन्द्री ।

जिह्वा इंद्री नीरकी, नभकी इंद्री कान ॥
नासा इंद्री धरणिकी, करिविचार पहिंचान ॥
त्वचासो इंद्री वायुकी, पावक इंद्री नैन ॥
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुखचैन ॥

पृथ्वीकी प्रकृति ।

चाम हाड नाडी कहौं, रोमजान अरु माँस ॥
यह पृथ्वीकी प्रकृति है, अन्त सबनको नास ॥

पानीकीप्रकृति ।

रक्त बिन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान ॥
चरणदास प्रकृती इते, पानीसों पहिंचान ॥

अग्निकी प्रकृति ।

निद्रा संगम आलकस, भूख प्यास जो होय ॥
चरणदास पांचो कही, अग्नि तत्त्वसों जोय ॥

वायुकी प्रकृति।

बलकरना अरु धावना, उठना अरु संकोच ॥
देह बढ़ै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥

आकाशकी प्रकृति।

कामक्रोधमोहलोभभय, तत्त्वआकाशकोभाग ॥
नभकी पांचौ जानिये, नित न्यारो तू जाग ॥

प्रकृतिविचार।

रोमगगन नाडी पवन, मास अग्निका अंश ॥
त्वचानीर सो जानिये, अस्थि महीको वंश ॥
कफाकाशबिंदुवायुसों, रक्त अग्निसों बूझ ॥
मूत्र नीर रणजीत भन, मेदपृथ्वीसों सूझ ॥
नीर व्योमसपरशपवन, आलसअग्नि पिछान ॥
प्यासनीर रणजीतभन, भूख महीसों जान ॥
उठना तौ आकाशसों, बल करना है वायु ॥
वढ़निअग्निधावनउदक, संकोचन महिआयु ॥
लोभ जु नभका अंशहै, काम वायुका भाग ॥
क्रोध अग्नि जल मोहहै, भय पृथ्वीका लाग ॥

ब्रह्म।

पांच पचासौ एकही, इनके सकल स्वभाव ॥
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार ॥
आपन देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥
शस्त्रछेदि सकै नहीं, पावक सकै न जारि ॥
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥
जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय ॥

जीवऽविनाशी नित्य है, जानै विरला कोय ॥
जरा मरण धर्म देहको, भूख प्यास धर्मप्रान ॥
सकलविकलमनजानिये, स्वाद सु इंद्रीजान ॥
आँख नाक जिह्वा कहूं, त्वचाजान अरु कान ॥
पांचौ इन्द्री ज्ञान हैं, जानै संत सुजान ॥
जो जो इनसों जानिये, निश्चय ना ठहराय ॥
कहै सुनै चाखै लखै, सो सोई मिटिजाय ॥
इन्द्री जानिसकै नहीं, मन बुधि लहैन ताय ॥
ज्ञान दृष्टि पहिंचानिये, वासों वाको पाय ॥

कर्म इन्द्री।

गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पावँ लखिलेह ॥
पांचौ इन्द्री कर्म हैं, यहभी कहिये देह ॥
देह मिटत है स्वप्न ज्यों, जीव रहत है नित्त ॥
देहकर्म बिसराय करि, आतमसों कर हित्त ॥

साधन।

मनजीतै इन्द्री गहै, चित्त स्थिर जब होय ॥
आतम सों परचो रहै, राखै सुरति समोय ॥

पृथ्वी।

पृथ्वी काल जे ठौर है, मुखै जानिये द्वार ॥
पीरो रँग पहिंचानिये, पीवन खान अहार ॥

जल।

जलको वासा भाल है, लिंग जानिये द्वार ॥
मैथुन कर्म अहार है, रंग सफेद निहार ॥

अग्नि।

पित्तमें पावक रहै, नैन जानिये द्वार ॥
लाल रंग है अग्निको, मोह लोभ आहार ॥

पवन।

पवन नाभिमें रहत है, नासा जानि दुवार ॥
हरो रंग है वायुको, गंध सुगन्ध अहार ॥

आकाश।

आकाशशीशमेंवास है, श्रवण दुवारे जान ॥
शब्द कुशब्द अहारहै, ताको श्याम पिछान ॥

तीन शरीर।

कारण सूक्षम लिंग हैं, अरु कहियत अस्थूल ॥
शरीर तीनसों जानिये, मैं मेरी जड़मूल ॥

अवस्था चार।

जाग्रत का अस्थूल है, स्वप्ने लिंग शरीर ॥
कारण जान सुषुप्ती, तुरिया साक्षी वीर ॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ती, तुरी अवस्थ विचार ॥

वाणी।

परा पश्यंति मध्यमा, वैखरी वाणी चार ॥
जाग्रत वासो नैनमें, स्वप्न कण्ठ अस्थान ॥
जानसुषुप्ती हियेमें, नाभि तुरिय मनतान ॥
नाभि मध्य वाणी परा, हिये पसंती सुक्ख ॥
कंठ मध्यमा जानिये, कहूं वैखरी मुख्य ॥
चितबुधिमन हंकार जो, अन्तःकरणसुचार ॥
ज्ञान अग्निसों जारिये, आतम तत्त्वविचार ॥

अन्तःकरण।

जलसों मन निश्चय कियो, भयो वायुसों चित्त ॥
अहंकार भो अग्निसों, बुद्धि पृथ्वीसों मित्त ॥

पंच विषय।

शब्द स्पर्शरु गंध है, अरु कहियत रसरूप ॥

देह कर्म तनमात्रा, तू कहियत निहरूप ॥
शब्दा गुण आकाशका, सपरश गुण है बाय ॥
पृथ्वीका गुण गंध है, सो यह प्रकट दिखाय ॥
रूप अग्निका गुण कहूं, रसगुण जलका जान ॥
रणजीतबतावैखोलिकारि, ऐशिष ले पहिंचान ॥

इन्द्रियोंकी उत्पत्ति ।

श्रवण मुख सु इन्द्री भई, तत्त्वाकाश सों दोय ॥
त्वचा हाथ इन्द्री युगल, वायु तत्त्वसों होय ॥
पावकसों इन्द्री युगल, भये नैन अरु पावँ ॥
जलसों जो इन्द्री भई, लिंग रसना दो नावँ ॥
गुदा नाशिका दो भई, पृथ्वीसों पहिंचान ॥
चरणदास यह कहत हैं, एक कर्म इक ज्ञान ॥
राजससों इन्द्री भई, तामससों तत्त्वपांच ॥
सात्त्विकसों चारों[1] भये, चरणदास कहैं सांच ॥
तीनों गुणसे है परे, सो आतमको रूप ॥
सो वह दृष्टि न आवई, अगम अगोचर रूप ॥

चौवीस तत्त्व ।

दश इन्द्री तन पांच है, तन्मात्रा भी पांच ॥
चारों अन्तःकरण हैं, ये चौवीसों बांच ॥
पन्द्रहको अस्थूल है, नौको लिंग शरीर ॥
कारण झीनी वासना, तुरिया निर्म्मल धीर ॥
जाग्रतमें चौवीस हैं, स्वप्नेमें नौ जान ॥
सुषुप्तिमें सब लीन है, ये अँग जड़के मान ॥

१ अन्तःकरण, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ।

तुरिया इकरस आतमा, निर्म्मलअचलअनाद॥
घटै बढ़ै उपजै नहीं, तहां न वाद विवाद॥
घटै बढ़ै उपजै मिटै, जड़को यही स्वभाव॥
सो सब कौतुक कर रही, नाना किये उपाव॥
चेतन ज्योंकी त्यों सदा, सदा अकर्त्ता जोय॥
सब कर्मनसों रहित है, आतम ऐसो होय॥
काहूते उपजो नहीं, वाते भयो न कोय॥
वह न मरै मारै नहीं, राम कहावै सोय॥
योग युगतकरिखोजिले, सुरतिनिरतिकरिचीन॥
दशप्रकार अनहद बजै, होय जहां लवलीन॥

दशवायु।

तीन बंध नौ नाटिका, दश बाईको जान॥
प्राणापान समान हैं, और कहत उदान॥
व्यानवायुअरुकिरकिरा, कूरम बाई जीत॥
नाग धनंजय देवदत, दश बाई रणजीत॥

नाडी तीन।

नवो द्वारको बंधकरि, उत्तम नाडी तीन॥
इड़ा पिंगला सुषुम्ना, केलि करै परवीन॥

प्राणायाम।

करतै प्राणायामके, पावै आतम वेख॥
अनहद ध्वनिके बीचमें, देखै शब्द अलेख॥
पूरक करि कुंभक करै, रेचक पवन उतार॥
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्षम करै अहार॥
धरती बन्ध लगाय करि, दशौ वायुको रोंक॥

मस्तक प्राण चढ़ाय कै, करै अमरपुर भोग ॥
पांचौ मुद्रा साधिकै, पावै घटको भेद ॥
नाड़ी शक्ति चढाइये, षट चक्रको छेद ॥
नासाध्यान दृष्टि भृकुटीमें, सुरतिश्वासकेमाहिं॥
आतम देखो जातहै, यामें संशय नाहिं ॥
योगयुक्तिकै कीजिये, कै आतमको ध्यान ॥
आपा आप विचारिये, परम तत्त्वको ज्ञान ॥

वर्णविचार

शूद्र वैश्य शरीर है, ब्राह्मण औ रजपूत ॥
बूढ़ावाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥

आत्मज्ञान ।

काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ॥
कायाछुटि सूरति मिटै, तू परमातम नित्त ॥
पाप पुण्य आशा तजौ, तजौ मान अरु थाप ॥
काया मोह विकारतजि, जपै सु अजपा जाप ॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ॥
जाको ढूँढत फिरतहौ, सो तू आपहि आप ॥
इच्छा दुई बिसारिकै, क्यों न होय निर्वास ॥
तू तो जीवन्मुक्त है, तजौ मुक्तिकी आस ॥
आपाखोजै आपलखि, आप अपनको देख ॥
चरणदास नहीं तूब्रह्महै, तू ही पुरुष अलेख ॥
जैसे कछुवा सिमिटिकै, आपहि माहिं समाय ॥
तैसे ज्ञानी श्वासमें, रहै सुरति लवलाय ॥
सबघट रमो सो राम है, आदि पुरुष निर्ग्रन्थ ॥
लखचौरासी योनिमें, एक समानो सन्थ ॥

दृष्टि मुष्टि आवै नहीं, रूप न देखो जाय ॥
बिनसूरतिबिननामको, घट घट रहो समाय ॥

छप्पय ॥ इच्छा दुईकर दूर आप तू ब्रह्महै जावै । और सो द्वितीया कौन तासुको शीश नवावै ॥ मालातिलक बनाय पूर्व अरु पश्चिम दौरा । नाभि कमल कस्तूरि हिरण जंगल भो बौरा ॥ चरणदास लखि दृष्टि भरि एक शब्द भरपूर है । निरखि परखिले निकटही कहन सुननको दूर है । झूठीसी यह दृष्टि जगत सब झूठो दरशै । मूरख जानै सत्य तासुसों फिरि फिरि परशै ॥ चंद सूर थिर नहीं नहीं थिर पौन न पानी । त्रैदेवा थिर नहीं नहीं थिर मायारानी ॥ नवनाथ चौरासी सिद्ध जो चरणदास थिर ना रहै । ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है आत्म विचार क्यों नाग है ॥

दोहा–जो मुख सेती बोलिये, अरु सुनियत है कान ॥
जो आँखिनसों देखिये, सबही माया जान ॥
एकै सबतन रमि रह्यो, चेतन जड़के माहिं ॥
मायादर्शत हैं सभी, ब्रह्म लखत है नाहिं ॥
जैसे तिलमें तेल है, फूल मध्य ज्यों वास ॥
दूध मध्य ज्यों घीव है, लकड़ीमध्य हुतास ॥
थावर जंगम चर अचर, सबमें एकै होय ॥
ज्यों मनिको में डोरि है, बाहर नाहीं कोय ॥
एकडोरि मनिका गुहे, अवरण वरण निहारि ॥
आतम तो निहरूप है, नित्य अनित्य विचारि ॥
माया यही स्वभाव है, उदय होय छिपि जाय ॥
चंचल चपल सुहावनी, ओला ज्यों गलिजाय ॥

परमातम तौ नित्य है, ताको आदि न अन्त ॥
सदा अचल चंचलनहीं, सब गुण रहत अनन्त ॥
सत चेतन आनन्द है, आदि अन्त मधि हीन ॥
आदिअन्त आकारको, सो तू झूठो चीन ॥
सूरति नाम आकार है, ज्यों भूतनको नाच ॥
मृग तृष्णाको नीर है, निकट गये नहिं सांच ॥
चितवत सांचीसी लगै, खोजकिये मिटिजाय ॥
दीखै है पर है नहीं, कौतुक सो दरशाय ॥

शिष्यवचन ।

ब्रह्म बिना खाली नहीं, धरबेको इक पाँव ॥
मायाको कह ठौर है, सद्गुरु मोहिं बताव ॥
निर्विकार तौ ब्रह्म है, अद्वय अचल अपार ॥
आई माया कहांते, सद्गुरु कहौ विचार ॥

गुरुवचन ।

आप ब्रह्म माया भयो, ज्यों जल पाला होय ॥
पाला गलि पानी भयो, ऐसे नाहीं दोय ॥
झूठी माया सो कहैं, ज्ञानी पंडित लोय ॥
भर्म भूल सांची लगै, समझे सांच न होय ॥
सोनेको गहनो गढ़े, कहन सुननको दोय ॥
गहनो ना सोनो सबै, नेकजु दो नहिं होय ॥
झूठ सांच दोना वहै, झूठ मिटै इक सांच ॥
नाम मिटै सूरत मिटै, भूषणको लगआंच ॥
जाको माया कहत है, सो तू नेक निकास ॥
जैसे हींग कपूरकी, नेक जुदी करवास ॥
जल समान तौ ब्रह्म है, माया लहर समान ॥

लहर सबै वह नीर है, लहर कहै अज्ञान ॥
खेल खिलौना खाँड़के, कीजै लाख पचास ॥
सकलखिलौना खांड़है, ऐसे गहु विश्वास ॥
चरणदासखिलोनाखांड़के, भाजन राखे खांड़ ॥
विन विनशेभी खांड़ है, विनशि जाय तौ खांड़ ॥
माटीके भांड़े भवैं, सूरति अरु बहुनाम ॥
विगसि फूटि माटीभई, बासन कहु केहिठाम ॥
ऐसेही माया नहीं, समझिदेखु मन माहिं ॥
जो दीखै सो ब्रह्म है, रंचक मायानाहिं ॥
इच्छा मेटै दुइ तजै, एके मन विश्राम ॥
ब्रह्मज्ञान विज्ञान है, समझ परमपद धाम ॥

सवैया ॥ श्वास उसाँस चलै जब आपहि है जु अखण्ड टरै नहिं टारो। भीतर बाहर है भरिपूर सो ढूंढ़ौं कहां नहिं नाहिं न न्यारो ॥ चरणदास कहैं गुरुभेद दियो भ्रम दूरिभयो जुहुतो अतिभारो। दृष्टिअदृष्टि जु रामको देखत रामभयो पुनि देखनहारो ॥

विज्ञापन।

दोहा–आप आपमें आपहै, खेलौ बहु विस्तार ॥
द्वितिया तौ कछु है नहीं, एकहि एक निहार ॥
कहीं नरायण नाभि है, कहीं ब्रह्म कहिं वेद ॥
कहिं शंकरगिरजाकहीं, कहीं अभेदाभेद ॥
कहिंऋषिमुनिकहिंदेवता, कहींसिद्धकहिंनाथ ॥
आपनको आपै खड़ो, कहूं न नावै माथ ॥
कहिंआसनकहिंतपकरै, कहीं ज्ञान कहिं योग ॥
कहींदुखीकहिंसुखभयो, कहीं रोग कहिंभोग ॥

कहींनारि कहिंनर भयो, कहीं बालक बाल ॥
कहिंमँगता दाता कहीं, कहीं सुखी कंगाल ॥
कहींवृक्ष कहिंफलभयो, कहींफूल कहिं बीज ॥
कहीं मूल शाखाभयो, कहिं माली कहिंसींच ॥
कहिंमालिनिकहिं मालती, कहिंफुलवाकहिंहार॥
कहींमहलखिडकीभयो, कहिं दीपक उजियार ॥
कहीं बाग क्यारी भयो, कहीं भवँर गुंजार ॥
कहींघटाकहिं बिज्जुली, दादुर मोर बहार ॥
कहिं पर्वत जंगल भयो, कहिं वारिदकहिंवारि ॥
कहिंवड़वानलअग्नि है, धारो तेज अपार ॥
मानसरोवर भयो कहिं, मोती कहीं मराल ॥
कहिं सरिता धीवर कहीं, कहीं मीन कहिंजाल ॥
कहीं कथा श्रोता कहीं, कहीं कीर्त्तन रूप ॥
कहीं त्याग वैराग ले, कीन्हों संत स्वरूप ॥
कहिं पृथ्वी कहिंवृक्षहो, कहिंगोपीकहिंग्वाल ॥
कहीं प्रेमके रूप है, कहिंप्रेमीकहिंख्याल ॥
कहिं कालिंदी निकटहो, कहिं वृन्दावनधाम ॥
कहिं कुंजे अति सोहनी, कहीं युगल लयोनाम ॥
कहिंसुगन्धशीतलपवन, कहिं बंशी बटठावँ ॥
कहीं चरणहींदास है, बार बार बलिजावँ ॥
कहीं कन्हैया ह्वै खड़ो, एकपावँ अँगमोर ॥
कहिं मुरली अधरनधरी, बाजत है घनघोर ॥
कहीं मुकुटकुण्डलभयो, अलकैं कहीं कपोल ॥
कहिं ललचौं हैं नैन हैं, नासा मुकुतसडोल ॥
कहीं धुकधुकी कंठ है, कहीं मोतियनकीमाल॥

कहिं बाजू नवरत्नके, नटवर मदन गोपाल ॥
कहींकड़ाकहिंकरभयो, कहिं पहुँची जहँगीर ॥
रतन चौक मुँठी भयो, लागी संग जँजीर ॥
कहीं बादलो जर्द है, नीमो ह्वै गयो अंग ॥
कहिं बब्बी गल जिंद है, कहीं साँवरो रंग ॥
कहिं पैंजनि कहि पंगभयो, कहीं चरणको दास ॥
कहीं आपही नख भयो, शशि समान परकास ॥
आप आपमें आप है, आप आपमें आप ॥
आप अपनमें जपत है, आप आपनो जाप ॥
अविनाशी नाशै नहीं, नाश न कबहूं होय ॥
तत्त्व स्वरूपी एकहै, कभी होय नहिं दोय ॥
आपब्रह्म मूरति भयो, ज्योंबुद गलजलमाहिं ॥
सूरति विनशै नामसँग, जल विनशत है नाहिं ॥
बुदगल देखौ जल सबै, बुदगल कहूं न होय ॥
कहबेको दूजो कहो, जल बुदगल नहिं दोय ॥
भयो नेकमें बुलबुलो, नाच कूद मिटिजाय ॥
निराकार रहि जायगो, मूरति ना ठहराय ॥
निराकार आकार धर, खेलौ कै इकबार ॥
स्वप्नो ह्वै है मिटिगयो, रहो सारको सार ॥

आप आपमें खेल मचायो। ज्यों पानी बुदगिल ह्वै आयो ॥
ऐसे ब्रह्म धरी है काया। आपहि पुरुष आपहीं माया ॥
आप नारायण लक्ष्मी भई। नाभि कमल अरु आपहि दई ॥
आपहि धरती आपहि पानी। आपहि रुद्र चतुर विज्ञानी ॥
है नारायण विष्णु कहायो। शेषनाग ह्वै तल पठायो ॥
तेतिसकोटि देवता भयो। ऋषिमुनिकोटिअठासीछयो ॥

चारौयुग आपहि भयो लोका । पापपुण्य आपहिभयोशोका ॥
आपहि फूल शूल अरु वारी । आपहि पुरुष आपही नारी ॥
दोहा—जल थल पावक रामहै, राम रमो सब माहिं ॥
हरी सबमें सब राममें, और दूसरो नाहिं ॥
दश अवतार आपधारि आयो । सेवक साहब आप कहायो ॥
आपहिगिरिवर आपहि तरुवर । आपहि हंस आपही सरवर ॥
आपहि चारि वर्ण षट दर्शन । पूजै आप आपही पर्शन ॥
आपहि ध्यानी आपहि प्रेमी । आपहि योग भोग अरु नेमी ॥
चरणदास शुकदेव बतायो । अपनो भेद आपही गायो ॥
तारा मंडल आप अकाशा । आपहि चंद सूर प्रकाशा ॥
जैसे जल तरंग ह्वै आई । उलटि फेरि जलमाहिंसमाई ॥
आप आपमें स्वप्न उठायो । आपहि स्वप्न आपह्वै आयो ॥
ना कछु गयो नहीं कछु आयो । अपनो भेद आपही पायो ॥
ना कछु कटै मिलै नाहिं छीजै । ना कछु उठै चलै नहिं भीजै ॥
स्वप्नो मिटिभयो एकंकारा । ज्ञानी अबही त्योंह निहारा ॥
नहीं सूक्ष्म अस्थूल न भारी । रूप रंग नहिं है परकारी ॥
वार पार कछु दीखत नाहीं । कबसों है अरु कबसों नाहीं ॥
कहा कहौं कछु कहत न आवै । गूँगो स्वप्नो कहा बतावै ॥
वार पार पार नहिं पायो । ढूँढत ढूँढत आप भुलायो ॥
कहत कहत मैं गयो हिराई । अब मोपै कछु कह्यो न जाई ॥
दोहा—हद कहूं तौ है नहीं, बेहद कहौं तौ नाहिं ॥
हद बेहद दोनों नहीं, चरणदास भी नाहिं ॥
जग स्वप्नो सो है गयो, भयो पेखनो गावँ ॥
जबजागो तब मिटिगयो, चरणदास नहिं नावँ ॥

छप्पय॥ तब न चंद नहिं सूर नहिं नभमें तारागण। नहिं धरती नहिं शेष नहीं अगती पारायण॥ तब न रूप नहिं नाम नहीं त्रैगुण त्रैदेवा। तब न ब्रह्म नहिं जीव नहिं साहब नहिं सेवा॥ रणजीत मीत नहिं वैर तब निर्गुण सगुण नाहुता॥ तब न वेद वाणी नहीं नहिं ज्ञानी नहिं पंडिता॥ जो श्रवणन सो सुनै और मुखसेती भाषै। जो कछु देखै नैन और सोवै अरु जागै॥ औ आवै दुर्गंध गंध नासाके माहीं। यह सब झूँठो जान कछू ठहरतहै नाहीं॥ अरु चरणदास उपजै नहीं विनशै नहिं संसार कहुँ। ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है सु झूंठो दरशै स्वप्न यहुँ॥

दोहा–ब्रह्म विना खाली नहीं, सरसों सम कहुँ ठोर॥
स्वप्नो सो जग देखिये, स्वप्न भयो मनमोर॥
शुद्ध ब्रह्म है रैनि सम, जगत दिवाली दीव॥
ज्यों तरंग जलमें उठै, ब्रह्मबीच ये जीव॥
वार न जाको पाइये, पार परे नहिं चीन॥
ऐसे सिन्धु अथाहमें, जगत जानिये मीन॥
ब्रह्म बीच ये जीव सब, फिरत रहत आधीन॥
जैसे सागर सिन्धुमें, नानारूपी मीन॥
जैसे लहरि समुद्रकी, उठत रहत तेहि माहिं॥
विन इच्छाबिनभावना, ह्वै ह्वै मिटिमिटि जाहिं॥
औंडो सीव गँभीर है, विन इच्छा विन दोय॥
निजस्वभावजगहोतहै, मिटि २ फिरि २ होय॥
धरतीमें लीकट खिंचै, उठि नाहिं आवै हाथ॥
ब्रह्म सत्य जग झूँठ है, ह्वै ह्वै मिटिमिटि जात॥

जगत ब्रह्ममें यों दिपै, ज्यों धरतीपर रेख ॥
रेख मिटै धरती रहै, ऐसेही जग देख ॥
झूंठ सांच दोउ नाम हैं, झूंठ मिटै थिर सांच ॥
ज्यों लोहा पावक मिलो, लोह रहे मिटि आंच ॥
ज्यों सोवतस्वपनो उठो, दृष्टि खुली जब नाहिं ॥
जगस्वपनो सो है मिटै, समझि देखु मन माहिं ॥
देखनकोअतिनिकट है, कहबेको बहुदूरि ॥
एकै ब्रह्म अखण्ड है, सकल रह्यो भर पूरि ॥
अद्वै अचल अखंड है, अगम अपार अथाय ॥
नहीं दूर नहिं निकट है, सद्गुरु दियो बताय ॥
भूल हुती जब दो हुते, अब नहिं एक न दोय ॥
अटक उठी धोखोमिटो, आपनहूं गयो खोय ॥

छप्पय–जहां गुरू नहिं शिष्य जहां नहिं साहब दासा। जहां गुफा नहिं योग जहां नहिं गगन निवासा ॥ जहां नहीं तप दान जहां नहिं देवल पूजा। जहां ब्रह्म नहिं जीव जहां नहिं एक न दूजा ॥ अरु चरणदास मिलि मिटि गयो सो अचरज ऐसो न सूझिया। कौन सुने कासों कहै सो आप आप नहिं दूजिया ॥

दोहा–अपरम्पार अपार है, आदि अनादि अडोल ॥
पुरुष पुरातन ब्रह्म है, बिनकाया बिन बोल ॥

चौ०–अगम अगोचर अजर अनंता। अद्वैरूप अथाह भगवंता निराकार निर्भय निर्वाना। परमेश्वर परमात्मा प्राना ॥ अधेउर्द्ध नहीं गोसाईं। नहिंबाहर नहिं मध्यम माहीं ॥ नहीं जीव नहिं सीव सहाई। श्वेत श्याम नहिं है अरुणाई ॥

है जैसो तैसोही राजै। आपन माहिं आपही गाजै॥
नहीं नाँव नहिं भावन भारी। है अखण्ड नहिं खंडित कारी॥
है सर्वज्ञ सत्य विज्ञाना। अभेद अछेद अकत्थ सुज्ञाना॥
ज्योंका त्यों जैसेका तैसा। नहिं ऐसा नहिं कहिये वैसा॥

दोहा–नीचे नीचे अन्त ना, ऊपर ऊपर ऊप॥
बाँयें बाँयें हद्दना, दहिने दहिने गूप॥
नहिं नीचे ऊपर नहीं, नहिं दहिने नहिं वाम॥
मध्य नहीं आकारना, निराकार नहिं नाम॥
निर्गुण ना सगुण नहीं, उपजै ना मिटिजाय॥
सबकुछहैअरुकुछनहीं, सदा ब्रह्म थिरथाय॥
जहां सांच जहँ झूँठहै, जहां झूंठ जहँ सांच॥
झूँठ सांच दोनों नहिं, तहँ कुछ शील न आंच॥
बंध नहीं मुक्तौ नहीं, पाप पुण्यभी नाहिं॥
उतपति ना परलय नहीं, नहीं नहीं भी नाहिं॥
इन्द्री ना निग्रह करौं, मन नहिं जीतूं ताहि॥
भूलौंना चेतौं नहीं, मैं नहिं खोजौं वाहि॥
योग नहीं युगता नहीं, नहीं ज्ञान नहिं ध्यान॥
बुधि विचार पहुँचै नहीं, तहँ कछु लाभ न हान॥
जैनधर्म शिवशक्तिना, स्वर्ग नरक नहिं वास॥
षट् दर्शन चौवर्णना, नहीं कर्म संन्यास॥
सिद्ध नहीं साधक नहीं, नहीं तिमिर नहिं भान॥
शून्य नहीं बेशून्यना, नहीं तत्त्व विज्ञान॥
धर्म कर्म अरु मोहना, अरु नाहीं वैराग॥
ज्योंका ज्यों सो भी नहीं, नहीं दुखी अनुराग॥

चौ०—ब्रह्मज्ञान विन मिटै न दोई । ब्रह्मज्ञान बिन मुक्त न होई ॥
दान यज्ञ तप नाना भोगा । ब्रह्मज्ञान विन सबही रोगा ॥
कलह कल्पना मनमें दोष । ब्रह्मज्ञान विन ना सन्तोष ॥
तिमिर अविद्या सबही भागै । ब्रह्मज्ञानमें जो तू जागै ॥
मत मारग मिलि भर्म बढ़ावै । पक्षपातलै सब भर्मावै ॥
गुरु विन ब्रह्म ज्ञान नहिं पावै । गुरुविन तत्त्व कौन दर्शावै ॥
गीता अरु वेदान्त बतावै । सामवेदभी योंहीं गावै ॥
ब्रह्मज्ञानमें निश्चय आवै । जीवन्मुक्ता सोइ कहावै ॥

दोहा—तू नाहीं सब रामहै, वेद भेदकी सीख ॥
एक रमैया रमि रह्यो, सकल अण्ड व्यापीक ॥
सिद्ध स्वरूपी ब्रह्ममें, ज्यों पाला सब लोक ॥
पाला गलि पानीभवै, कछू न निकसै फोक ॥
उलझे को सुलझायकै, कई जन्मको सूत ॥
चरणदास निर्भय भये, आशा तजि अवधूत ॥

कवित्त—स्वर्गहू न चाहिये जो होम यज्ञ दानकरौं, इन्द्र-आदि भोगनको चित्तते उठायो है । ऋद्धिहू न चाहिये जो जक्तमें बड़ाई चलै, सिद्धिहू न चहीं सब साधन बिसरायोहै ॥ जातिहू न चाहीं जो कुलकी मर्य्याद चलै, चारि वर्ण एक यों वेदनमें गायो है । कासों कहैं मुक्त और बंध तोन सूझेकहूं, कहै चरणदास आप आपन लौ लायो है ॥

सवैया—आदिहू आनंद अन्तहू आनँद मध्यहू आनँद ऐसेही जानो । बंधहू आनँद मुक्तहू आनँद आनँद ज्ञान अज्ञान पिछानो ॥ लेटेहु आनँद बैठेहु आनँद डोलत आनँद आनँद आनो । चरणदास बिचारि सबै कछु आनन्द आनँद छांड़िकै दुःख न ठानो ॥ १ ॥ आदिहु चेतन अन्तहु चेतन मध्यहु चेतन

माया न देखी। ब्रह्म अद्वैत अखण्ड निरालँभ और न दूसरो आनँद ऐखी॥ सिन्धु अथाह अपार विराजत रूप न रंग नहीं कुछ रेखी। चरणदास नहीं शुकदेव नहीं तहँना कोई मारग ना कोई भेखी॥ २॥ भक्षतहैं नहिं भक्षत भोजन पीवतहैं नहिं पीवत पानी। डोलतहैं नहिं डोलत परसों बोलतहैं नहिं बोलत बानी॥ नानारूप ब्योहार में देखत निश्चयके मध्य कछू नहिं आनी। चरणदास बताय दियो शुकदेवने ऐसे रहै ताहि जानिये ज्ञानी॥३॥ सोवत है नहिं सोवत नींद सो जागतहै नहिं जाग दिखानी। योग करैं न करैं कछु साधन ध्यान करैं न करैं कछु ध्यानी॥ वचन विशाल करैं चरचा न करैं चरचा नहिं होय बिनानी। चरणदास बताय दियो शुकदेवने ऐसे रहै ताहि जानिये ज्ञानी॥ ४॥

कवित्त–मंदिर क्यों त्यागै अरु भागै क्यों गिरिवरको, हरिजीको दूर जानि कलपै क्यों बावरे। सब साधन बतायो अरु चारिवेद गायो, आपन को आप देखि अन्तर लौ लावरे॥ ब्रह्मज्ञान हिये धरो बोलते का खोजकरो, माया अज्ञान हरो आपा बिसरावरे। जैहैं जब आप धाप कहा पुण्य कहा पाप, कहै चरणदास तू निश्चल घर आवरे॥

अथ ब्रह्मज्ञानीलक्षणवर्णन—(ज्ञानपरीक्षा)

निरालंब १ निर्भ्रम २ निर्वासिक ३ निर्विकार ४ (अथ विचारपरीक्षा) निर्मोहत १ निर्बंध २ निर्हिंसक ३ निर्वाण ४ (अथ विवेकपरीक्षा) सावधान १ सर्वंगी २ सारग्राही ३ संतोषी ४ (अथ परमसंतोषपरीक्षा) अयाचक १ अमानी २ अपक्षीक ३ स्थिर ४ (अथ सहजपरीक्षा) निष्प्रपंच १ निहतरंग २ निर्लिप्त ३ निष्कर्म ४ (अथ निर्वैरपरीक्षा)

सुहृद् १ सुखदायी २ शीतलताई ३ सुमती ४ (अथ शून्य परीक्षा) शीलवंत १ सुबुद्धी २ सत्यवादी ३ ध्यान समाधी ४ जामें ये लक्षण होयँ ताको ब्रह्मज्ञानी कहिये और जामें ये लक्षण न होयँ ताको वाचकज्ञानी वितंडा जानिये ॥

दोहा—जनक गुरू शुकदेवजी, चरणदास शिष्य होय ॥
आप रामहीं राम हैं, गई दुई सब खोय ॥
ब्रह्मज्ञान पोथी कही, चरणदास निर्वार ॥
समझे जीवन्मुक्त हो, लहे भेद ततसार ॥

इति श्रीशुकदेवजीकेशिष्यश्रीस्वामीचरणदासजी-
कृतब्रह्मज्ञानसागरसम्पूर्णम् ॥



॥ ॐ ॥

अथ

श्रीचरणदासकृतशब्दवर्णन।

मंगलाचरण गुरुस्तुति।

दोहा—ब्रह्मरूप आनन्द घन, निर्विकार निर्लेव ॥
मङ्गल करण दयालजी, तारण गुरु शुकदेव ॥
सतियनमें तुम सत्यहो, शूरन में हो वीर ॥
यतियनमें तुम यतिहो, श्रीशुकदेव गँभीर ॥
पतित उधारण तुमलखे, धर्म्म चलावन भेव ॥
संकट सकल निवारिये, जै जै श्रीशुकदेव ॥
चिंता मेटन भवहरन, दूरिकरण जग व्याध ॥
गुरु शुकदेव कृपा करो, चरण लगे सबसाध ॥
दाता चारो वेदके, श्रीशुकदेव दयाल ॥
चरणदास पर हूजिये, वारम्वार कृपाल ॥

रागकल्याण—नमो शुकदेवहो चरण पखारणम् । द्वंद संकटहरण करणसुख मंगल परम आनन्द घन पतितके तारणं॥ नावतक त्याग वैरागहै मुक्तलौं तीनहूं गुणनते निर्विकारं । महा निष्काम और धाम चौथेरहो सिद्धि चेरी भई फिरैं लारं ॥ ज्ञानके रूप अरु भूप सब मुनिनमें दयाकी नाव-किये जीव पारं । उदैभागौत मति भान परगट कियो तिमिर कियो दूर अरु धर्मधारं ॥ मोहदल जीति अनरीतिके खण्डनं भक्तिके दृढ करन भवविडारं । चरणदासके शीश-पर हाथ नितहीरहो यही मांगो गुरु वार बारं ॥ ६ ॥

अथ चरणोंकेचिह्नका मंगलाचरण ।

दोहा—दश चिह्न दहिने चरण, बाँयें हैं दश एक ॥
जिनके निश्चल ध्यानते, कटैं जो विघ्न अनेक ॥
श्रीशुकदेव आज्ञादई, चरणदास उच्चार ॥
सो अब वर्णन करतहूं, शब्दमाहिं विस्तार ॥

रागकल्याण—चरणचिह्न चितलाव फेरि तेराजन्म न होगा । पद्म झलक छवि निरखि नैनभरि अंकुश मन अटकाव ॥ अम्बर छत्र कुलिश जो राजत ध्वजा धेनु पदभाव । शङ्ख चक्र अरु कलश सुधाहद तासूं चित उरझाव ॥ स्वस्तक जम्बु फलकी शोभा जासों सुरति लगाव । अर्द्धचन्द्र षट-कोन मीन बुन्द ऊर्ध रेख लखिचाव ॥ अष्टकोण तिरकोण विराजे धनुष बाण उरधाव । कोटिकाम नख ऊपर वारूं नूपुर सुन्दर पाव ॥ श्रीशुकदेव चिह्नपद बरणे सो तू हियेमें लाव । चरणदासहितराखिभोरनिशि बारबार बलिजाव ॥

आरती राग भैरव ।

मंगल आरति या विधि कीजे । हर्षपाय आनँदरस पीजे ॥
प्रथमैं मंगल गुरुही जान । जिनसूं पायो पद निर्वान ॥
ज्ञान भानु परगट कियो भोर । मिटिगइ रैन तिमिर घनघोर ॥
द्वितिये मंगल श्रीगोपाल । भक्ति वछल बहुपतित उधार ॥
राम कृष्ण पूरण अवतार । दुष्टदलन सन्तन रखवार ॥
तृतिये मंगल प्रभुजीके साध । मानसरोवर मता है अगाध ॥
तिनकी संगति उठि गयोशंसा । कागपलटि गतिह्वैगयो हंसा ॥
चौथे मंगल श्रीभागौत । घट उजियार करनकूं ज्योत ॥
पाप ताप दुख मेटन्हारी । जिहि नौका चढ़ि उतरो पारी ॥
पँचवें मंगल श्रीशुकदेव । तनमनसूं करि उनकी सेव ॥

चरणहिंदास चरण चितलायो । मंगलचार भयो जसगायो ॥
मंगल आरति कीजे प्रात । सकल अविद्या घटगइ रात ॥
सूरज ज्ञान भयो उजियारा । मिटिगये औगुणकुबुधिविकारा
मनके रोग शोक सब नाशै । सुमतिनीर शुभ जलज प्रकाशै॥
मैं अरु भर्म्म नहीं ठहराई । दुविधा गई एकता आई ॥
जाति वर्ण कुल सूझे नीके । सब सन्देह गये अब जीके ॥
घटघट दरशै दीन दयाला । रोम रोम सब होगइ माला ॥
दृष्टि न आवैं दुख जगजाला । कागपलटि गति भये मराला॥
अनहद बाजन बाजन लागे । चोरनगरियातजितजि भागे ॥
गुरुशुकदेव कि फिरी दोहाई । चरणदास अन्तर लवलाई ॥

भोरकीध्वनी राग भैरव ।

आरति आदि पुरुषकी कीजै । साधो अगमअपार अचल मन दीजे ॥ अद्भुत आरतीॐकारा । त्रैदेवाहै जगत पसारा ॥ पहिले मच्छरूप हरि धारो । वेदलाय शंखासुर मारो ॥ रई मँद्राचल वासकनेती । चौदह रत्न मथे दधि सेती ॥ रूप बराह धारि हरिधाये । हिरण्याक्ष हनि धरतीलाये ॥ खम्भ फारि हिरणाकुश मारो । नरसिंह ह्वै प्रह्लाद उबारो ॥ वामन ह्वैकरि बलि छलि लीन्हें । तीनि लोक तीनों डगकीन्हें ॥ परशुराम ह्वै शस्तर धारे । क्षत्री सबै निकछ करिडारे । रामरूप रावण दलमालिया । लंका राज बिभीषण मिलिया ॥ कृष्णरूप ह्वै कंस पछारो । दर्शन दे ब्रज सकल उधारो ॥ बुद्धरूप अचरज गति तेरी । कौतुक देखि थकी बुधि मेरी । किष्कलंक निर्लिप्त निरासा । संभलसुरति लियो जहँ वासा ॥ हरि हैं एक रूप बहुधारे । निराकार आकार नियारे ॥ दश अवतार आरती गाऊं । निरभै होय अभयपद पाऊं ॥ चरणदास शुकदेव

बतायो । निर्गुणहारि सगुण ह्वै आयो ॥ आरति रमता राम कि कीजै । अन्तर्ध्यान निरखि सुख लीजै ॥ चेतन चौकी सतको आसन । मगन रूप तकिया धरि दीजै ॥ सोहंथाल खैंचि मन धरिया । सुरति निरति दोउ बाती बरिया ॥ योग युगतिसूं आरति साजी । अनहद घंट आपसूं बाजी ॥ सुमति साँझकी बिरिया आई । पाँच पचीस मिलि आरति गाई ॥ चरणदास शुकदेवको चेरो । घटघट दर्शै साहब मेरो ॥ आरति करत हँसै मन मेरो । वारपार कछु दिखै न तेरो ॥ अमर अडोल निरीक्षण भेखा । त्रैगुण रहित रूप नहिं रेखा ॥ चेतन आनँद नित निरधारा । निराकार निर्लिप्त नियारा ॥ निराकार आकार विराजति । निरगुण अरु सरगुण तेरी गति ॥ हाथ पाँव अरु शीश घनेरे । कैसे आरति करूं प्रभु मेरे ॥ सोहं बाती घीव अखण्डा । एकहि ज्योति बलै ब्रह्मण्डा ॥ तुही थाल तुहि आरति साजै । तुहि घंटा तुहि झाँझरि बाजै ॥ चरणदास शुकदेव लखायो । सुरतिथकी पै पार न पायो ॥ गगन मंडलमें आरति कीजै । उत्तमसाज सकल सजि लीजै ॥ सुखमन अमृत कुम्भ धरावै । मनसा मालिनि फूल चढ़ावै ॥ घीव अखंडा सोहंबाती ॥ त्रिकुटी ज्योति जलै दिनराती ॥ पवन साधना थाल करीजै । तामें चौमुख मन धरिलीजै ॥ रवि शशिहाथ गहो तिहिमाहीं । खिन दहिनो खिन बायें लाईं ॥ सहसकमल सिंहासन राजैं । अनहद झाँझरि नितही बाजैं ॥ इहिविधि आरति साँची सेवा । परमपुरुष देवनको देवा ॥ चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसी आरति पार लँघावै ॥ ऐसी आरति करि हुलसावै । दै परिक्रमा शीश नवावै ॥ तनको थाल अरु मनको चौमुख । ज्ञान ध्यानकी बातीलावै । भक्तिभावको

घी भरि तामें॥ जगमग जगमग ज्योति जगावै॥ अर्ध ऊर्ध-
हितसूं करि फेरै रचना रचै फूल वर्षावै। सुरति मृदंग अरु
निरति तँबूरा झँगड़ झँगड़ झाँझ बजावै॥ ताल बीण मुरचंग
शंखध्वनि प्रेम मगन ह्वै हरिगुण गावै। सोरन कलशा जलको
राखै धूपरु अगर सुगन्ध धरावै॥ या विधि सों शुकदेव
श्यामकी गाय आरतीको फल पावै। युगल किशोर निरखि
नैनन सों चरणदास सख बलि बलि जावै॥

राग विभास—या विधि गोविंद भोग लगावो। भक्तवछल
हरि नाम कहावो॥ बेर भीलनी के तुम पाये। देखि ऋषी-
श्वर सकल लजाये॥ जैसे साग विदुर घर पायो। दुर्योधन
को मान घटायो॥ भक्त सुदामा के तंदुल लीन्हे। कंचन
महल अधिक सुख दीन्हे॥ ज्यों कर्माकी खिचरी खाई।
नेह लियो सब शुचि बिसराई॥ तुम्हरी विभौ प्रभु तुम्हरेहि
आगे। हमसूं दीननकूं कहलागे॥ प्रेम प्रीतिसूं भोजन कीजे।
बचै सीथ संतनकूं दीजे॥ चरणदास भरि राखी झारी।
अँचवो हरि शुकदेव मुरारी॥

भोगके आगेकी ध्वनि—काफी।

जैजै पारब्रह्म परधान। जाकूं पावै गुरुके ज्ञान॥ ब्रह्म
पुरुषको धरो स्वरूप। सोतो कहिये अधिक अनूप॥ जैजै ॐ
और त्रैदेव। जै जै दश औतार अभेव॥ जै जै वृन्दावन निज
धाम। जै जै गोकुल अरु नँदग्राम॥ जै जै गोपी जै जै ग्वाल।
जै जै सदा बिहारीलाल॥ जै जै कुंजगली नँदलाल। मोर-
मुकुट मुरली बनमाल॥ जै जै राधे कृष्ण मुरार। जै जै व्या-
सदेव उच्चार॥ जै जै महाविदेह जनकजी। जै जै श्रीशुकदेव

दयाल ॥ इनको नाम जपै जो कोय। प्रेमभक्ति पावतहै सोय॥ चरणदास शुक वास लहैं। हरि चरणनके पास रहैं॥

अथ गुरुदेवकाअंग राग कल्याण।

सद्गुरु पांचौ भूत उतारो। जन्म जन्म के लागेहि आये है संतर अब तिन्हैं बिडारो॥ काम क्रोध मोह लोभ गर्भनै मन बौराय कियो अप भायो। जिनके हाथ परो जिय मेरो घेरा घेरी बहुत दुखपायो॥ एकघरी मोहिं छोंडत नाहीं लहरि चढायकै बहुत निवावो। कपि ज्यों घर घर द्वार नचावै उत्तम हरिको नाम छुटावो॥ अबके शरणि गही है तुम्हरी चरणहिंदास अजाने। किरपा करि यह व्याधि छुटावो गुरु शुकदेव सयाने॥

रागधनाश्री–अब मैं सद्गुरु शरणौं आयो। बिन रसना बिन अक्षर वाणी ऐसोहि जाय सुनायो॥ काम क्रोध मद पाप जराये त्रैविधि ताप नशायो। नागिनि पांच मुई सँग ममता हमसूं काल डरायो। किरिया कर्म अचार भुलानो ना तीरथ मग धायो। समझौ सहज वचन सुनि गुरुके भर्म को बोझ बगायो॥ ज्यों ज्यों जपू गरक हों वामें वह मों माहिं समायो। जग झूंठो झूंठो तन मेरो यों आपा नाहिं पायो॥ वाकूं जपै जन्म सोइ जीतै सोहं शुद्ध बतायो। चरणदास शुकदेव दया यों सागर लहरि समायो॥

रागसोरठ–गुरुदेव हमारे आवोजी। बहुत दिनोंसे लगो उमाहो आनँद मंगल लावोजी॥ पलकन पंथ बहारूं तेरो नैनन पगपग धारोजी। बाट तिहारी निशिदिन देखूं हमरी ओर निहारोजी॥ करौं उछाह बहुत मन सेती आँगन चौक पुराऊंजी। करूं आरती तन मन वारूं

बारबार बलिजाऊंजी ॥ दै परकर्मा शीश नवाऊं सुनि सुनि वनच अघाऊंजी । गुरु शुकदेव चरणहूं दासा दर्शन माहिं समाऊंजी ॥ हो अँखियां गुरु दर्शनकी प्यासी। इकटक लागी पंथ निहारूं तनसूं भई उदासी ॥ राति दिना मोहिं चैन नहीं है चिन्ता अधिक सतावै । तलफतरहूं कल्पना भारी निश्चल बुधि नहिं आवै ॥ तन गयो सूक हूक अति लागी हिरदय पावक बाढ़ी । खिनमें लेटी खिनमें बैठी घर अँगना खिन ठाढ़ी ॥ भीतर बाहर संगसहेली बात नहीं समझावै । चरणदास शुकदेव पियारे नैनन ना दर्शावै ॥

राग भैरव।

गुरु बिन मेरे और न कोय । जगके नाते सब दियेखोय ॥
गुरुही मातु पिता अरु बीर । गुरुही सम्पति जीवससीर ॥
गुरुही जाति वरण कुल गोत । जहां तहां गुरु संगी होत ॥
गुरुही तीरथ बरत हमार । दीन्हें और धरम सबडार ॥
गुरुही नाम जपौं दिनरैन । गुरुको ध्यान परम सुखदैन ॥
गुरुके चरण कमलकरि बास । और न राखूं कोई आस ॥
जो कुछ चाहैं गुरुही करैं । भावै छाँहैं धूपमें धरैं ॥
आदिपुरुष गुरुहीकूं जानूं । गुरुही मुक्तिरूप पिछानूं ॥
चरणदासके गुरु शुकदेव । आर न दूजा लागै लेव ॥

अथ भक्तिअंगवर्णन राग करखा।

राखिये लाज महाराज गोपालजी दीनजन शरण आयो तिहारी । लगो मोह ध्यान दृढ चरणही कमलमें कीजिये किरपा सुनिहो बिहारी ॥ विषय जंजार रस स्वाद घेरो घन्यो पांचहूं चोर दुख देह भारी ॥ नीच बहु दुष्ट बलवान पच्चीस ठग तकैं निशि द्योस हिये घात डारी ॥ पकरि गजराज

कूं ग्राह खैंच्यो तबै टेरदे हेर कीन्ही पुकारी । गरुड़ तजि धाय आये छुटायो तुरत हरि हिये व्याध तन विपति टारी ॥ ध्रुव अचलकियो प्रहलादकूं दर्शदियो कियो हनुमानसूं प्रीति भारी । भीलनी अरु कामी अजामीलसे अधम अति पतित गणिका उबारी ॥ पाण्डुसुतहूं बचाये जरत अग्निसूं द्रौपदी चीर बाढ़ो अपारी । नामदे सैन पीपा कबीरा सदन नरसिया दास मीरा उधारी ॥ कोटि अनगन भक्त तारि दिये तिनको मैं कहों मेरी सुरति क्यों बिसारी । तो बिना कहां जाऊं कहीं ठोर ना तेरेही द्वारको हूं भिखारी ॥ सकल संशयहरण तूही तारणतरण श्याम शुकदेव गिरिधर मुरारी । चरणदास रणजीतको आसरो तुही है आप तौ जानलीजे सँभारी ॥ साधो सोई जन शूर जो खेतमें मड़रहै भक्तिमें दानमें रहै ठाढा। सकललज्जा तजै महा निरभै गजै पैजनी शान जिन आय गाड़ा ॥ भये बहुवीर गम्भीर जे धीर मत सबनको यश कहत ग्रन्थहोई । तिन विषे कछू इकनाम वर्णनकरूं सुनो हो सन्त दै चित्त सोई ॥ पितासूं रूठि ध्रुव पांचही वर्षको टेक गहि भक्तिके पन्थ धायो । छल भयो ना डिगो टेक पूरीभई जीति मैदान हरिदर्श पायो ॥ इठो प्रहलाद हरिनाम छाँडो नहीं बापने त्रासदै बहु डिगायो । टेक जब ना टरी राम रक्षाकरी दुष्ट को मारिकै जन जितायो ॥ कबीर दादू घने पहिरी बख्तर बने नामदेव सारिखे बहुत कूदे । सेन सदना भक्त बली पीपा बड़ो रामकी ओरकूं चले सूवे ॥ मलूक जैदेव गज ग्राह कलकी धरे शूर रैदास मुख नाहिं मोड़ा । ध्यान बन्दूक सें प्रेम रञ्जकजमा मीर माधो चला कुदाय घोड़ा ॥ दास मीरा पिली प्रेमसम्मुख चली छोड़िदई लाज

कुल नाहिं माना । और शबरी मढ़ी तोड़ि ऊंची गढ़ी दौर करमा चली प्रेम जाना ॥ श्रीशुकदेव रणजीत सांवत कियो लड़े कलियुगविषे खम्भ गाड़े । बहुत सेना लिये ललक हूहू किये चरणहीदास सँग नाहिं छांड़े ॥

राग काफी–हो जगके करतार तेरी कहा अस्तुति कीजे । तूही एक अनेक भयोहै अपनी इच्छाधार ॥ तूही सिरजे तूही पाले तूही करै सँहार । जित देखूं तित तूही तू है तेरा रूप अपार ॥ तूही रामनरायण तूही तूही कृष्ण मुरार । साधोंके रक्षाके कारण युगयुगले औतार ॥ तुही आदि अरु मध्य तूही है अन्त तेरा उजियार । दानव देव तुहींसूं प्रगटे तीन लोक विस्तार जल थलमें व्यापकहै तूही घटघट बोलनहार । तो विन और कौनहै ऐसो जासों करों पुकार ॥ तूही चतुर शिरोमणि है प्रभु तूही पतित उधार । चरणदास शुकदेव तुहीहै जीवन प्राण अधार ॥ तव गुण करूं बखान यह मेरी बुद्धि कहां है । चतुर्मुखी ब्रह्मा गुण गावैं तिनहुँ न पायो जान॥ गुण गावत शंकर जब हारे करनेलागे ध्यान । गुण अपार कछु पार न आये सनकादिक कथ ज्ञान ॥ गुणगावत नारदमुनि थाके सहसमुखनसूं शेश । लीलाको कछु वार न पायो ना परिमाणनमेश ॥ शक्ति घनी अनगिनत तुम्हारी बहुतरूप बहुनावँ । जबहिं विचारूं हियेमें हारूं अचरज हेरि हिरावँ ॥ अति अथाह कछु थाह न पाऊं शोच अचक रहिजावँ । गुरु शुकदेवथके रणजीता मैं कहु कौन कहावँ ॥

रागपरज ॥ रामगुण कोई न जानेहो । शेश महेश गणेश अरु ब्रह्मा रहे थकानेहो ॥ सुरति निरतिबुधि गम नहीं सबदेव लुभानेहो । सनकादिक नारदहू हारे कौन बखानेहो ॥ योगी

जंगम ऋषि मुनि तपसी सुर ज्ञानेहो। ध्यान लगावै अन्त न पावैं गये हिराने हो ॥ पशू मनुषकहाकाहिसके विषैरस लपटानेहो ॥ चरणदास शुकदेव दया यह बात पिछानेहो ॥

रागकाफी–रामारामा जी साँई। अलख निरंजनरूपा। तूही एक अनेक स्वरूपा ॥ तेरी ज्योति सकल जगछाई। तू घटघट रहो समाई ॥ तूहीआदि अनादि कहावै। ब्रह्मादिक पार न पावै ॥ अविगत अविनाशी जाना। निरगुण सरगुण पहिचाना ॥ बहु विधिके भेष बनावै। सिरजै पालै बिनशावै अचरज कौतुक विस्तारा। जनकारण ले औतारा ॥ तूही है देवनको देवा। सनकादिक लहै न भेवा ॥ चाहे सो करै पल-माहीं। तूही व्यापक है सब ठाहीं ॥ तूही ज्ञानी गुणी अपारा। पूरण परमातम प्यारा ॥ गुण बहुत कहांलौं गाऊं। बिनती करि शीश नवाऊं ॥ शुकदेव गुरू बतलाया। चरणदास शरण तेरी आया ॥ २४ ॥ रामारामाजी सुनि लीजै बिनती मेरी। मैं शरण गही है तेरी ॥ तैं बहुतै पतित उधारे। भवजलसूं पार उतारे ॥ हौं सब को नाम न जानूं। अब कोइकोइ भक्त ब-खानूं ॥ अंबरीष सुदामा नामा। सो पहुँचाये निजधामा ॥ ध्रुव पांच बरषको बाला। तेहि दर्शन दियो गोपाला ॥ प्रह-लाद टेक सुत राखी। यों जानतहैं सब साखी ॥ शबरीके फल तुम खाये। त्रयलोचनके घर आये ॥ पण्डवनकी करी सहाई। द्रौपदी कि लाज बढ़ाई ॥ गणिकाहूं पार लखाई। करमाकी खिचरी खाई ॥ मीरा तुम्हरे रँगभीनी। नरसीकी हुंडीलीनी ॥ धनाको खेत जमायो। तैं साग विदुर घरखायो। कबिराके बादललाये। सब काजकिये मनभाये ॥ सदनासे सेना नाई। तैं बहुत किये सुकताई ॥ ग्राहसुं गजजाय छु-

डायो। तैं मोकूं क्यों बिसरायो॥ सनकादिक ब्रह्मा ध्यावैं। तेरा शेष आदि यशगावैं॥ तेरा वेद पार नहिं पाया। जिन नेति नेति बतलाया॥ मैं कामक्रोधने घेरा। ममताकी उर उर झेरा॥ मोह लोभके फंदे फरिया। तेरा नाम बिसारि दुख भरिया॥ अब तुमहीं करो निबेरा। मोहिं जानि चरणको चेरा॥ मैं पापी महासंतापी। अपराधी बहुत कलापी॥ तुम छाँडि कासुपै जाऊं। यह दुख कौने समझाऊं॥ शुकदेव गुरु मैं पाया। जिन तेरहि नाम बताया॥ चरणदास आपनो कीजै। मोहिं भक्तिदान वर दीजै॥

राग रामकली—पतित उधारण बिरद तुम्हारो। जो यह बात सांच है हरिजी तौ तुम हमको पार उतारो॥ बालपने अरु तरुण अवस्था और बुढापे माहीं। हमसे भई सभी तुम जानौ तुमसे नेकहु छानी नाहीं॥ अनगिन पाप भये मनमाने नखशिख अवगुण धारी। हिरि फिरिकै तुम शरणै आयो अब तुमको है लाज हमारी॥ शुभकरमनको मारग छूटो आलस निद्रा घेरो। एकहि बात भली बनिआई जग में कहायो तेरो॥ चेरो दीनदयाल गुपाल विश्वंभर श्रीशुकदेव गुसाईं। जैसे और पतित घनतारे चरणदासकी गहिये बाहीं॥ १॥ अर्ज सुनौ जगदीश गुसाईं। ग्रह[1] नक्षत्र अरु देव बिसारो चरण कमलकी आयो छाईं॥ सत विश्वास यही हिय धारो तोहिं न भूलों एक घरी। इतउतसे मन खैंचि लियो है काहूसे कछु नाहिं सरी॥ अब चाहो सो करो प्रभु तुमहीं द्वार तुम्हारे सुरति अरी। भावै नरक स्वर्ग पहुँचावौ भावै राखौ निकट हरी॥ अपनी चाहरही नहिं कोई जबसूं तुम्हरी आश

१ रवि, चंद्र, भौम, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु, इति नवग्रहाः।

धरी । आन भरोसो छोंड़ि दियो है सकल विकल सब छार करी ॥ यह आपा तुमहीं को दीयो मेरी मो मैं कुछ न रही । आदिपुरुष शुकदेव सुनोजी चरणदास यों टेरि कही ॥ २ ॥

रागविभास—अबकी करौ सहाय हमारी । दुष्टदलन अरु भक्त बचावन ऐसी साखि तुम्हारी ॥ जिन प्रहलाद असुर गहि बांध्यो लीन्हो खड्ग निकारी । हिरणाकुश हनि दास उबारो नरसिंह को तनु धारी ॥ खेंचि ग्राह गज बोरन लागो राम कहो यकबारी । सुनत पुकार पयादेहि धाये तजिकै गरुड सवारी ॥ द्रौपदि लाज उबारण कारण लाये सभा मँझारी । दीनानाथ लई सुधि वेगहि बाढो चीर अपारी ॥ जिन जिन शरण गही सङ्कटमें कहा पुरुष कह नारी । चारों युग हरि करी सहाई रक्षक भये मुरारी ॥ गुरु शुकदेव बतायो तोकों सन्तनकी रखवारी॥चरणदास थकि द्वारे तेरे गुण पौरुष दियो डारी॥२॥

रागधनाश्री—अब तुम करो सहाय हमारी । मनके रोग होयगये दीरघ तनके बड़े विकारी । तुमसों बैद और को दूसर जाहि दिखाऊं नारी ॥ सञ्जीवन मूल अमर मूल हो जासों सोहै दया तुम्हारी । क्रिया कर्म की औषधि जेती रोग बढावनहारी ॥ दीजै चूरण ज्ञान भक्तिको मेटो सकल व्यथारी । जनके काज पयादे धावत चरण कमल पर वारी ॥ मैं भयों दास अधीन तुम्हारो मेरो करो सँभारी । जो मोहिं कुटिल कुचालि जानिकै मेरी सुरति बिसारी ॥ ॥ चरणदासहै शुकदेव तेरो दुष्ट हँसैंगे भारी ॥ १ ॥ हरिजी सङ्कट बेगि निवारो । जनकूं भीर परीहै भारी चक्र सुदर्शन धारो ॥ कंस निकन्दन रावण गञ्जन हरणाकुश गहि मारो । दुष्टदलन अरु भक्त ऊबारण जन प्रह्लाद उबारो ॥ पांचौ पाण्डव राखलिये हैं कौरव दल

संहारो। जिन जिन द्वेष कियो सन्तनसों सो सोई हनि डारो ॥ निरभय भक्तिकरैं जन तेरे ऐसो समय विचारो। चरणदासके घटमें वैरी तिनको क्यों न बिदारो ॥ २ ॥

रागविभास–राखोजी लाज गरीबनिवाज। तुम बिन हमरे कौन सँवारे सबही बिगरै काज ॥ भक्त बछल हरिनाम कहावो पतित उधारण हार। करो मनोरथ पूरण जनको शीतल दृष्टि निहार॥ तुम जहाज मैं काग तिहारो तुम तजि अन्त न जाऊं। जो तुम हरिजी मारि निकासौ और ठौर नहिं पाऊं॥ चरणदास प्रभु शरण तिहारी जानत सब संसार। मेरी हँसी सों हँसी तिहारी तुमहू देखि विचार ॥

रागबिलावल॥ प्रभुजी शरण तिहारी आयो। जो कोई शरण तिहारी नाहीं भर्मि भर्मि दुखपायो॥ औरनके मन देवी देवा मेरे मन तुहि भायो। जबसों सुरति सँभारी जगमें और न शीश नवायो॥ नरपति सुरपति आश तिहारी यह सुनिकरि मैं धायो। तीरथ वरत सकल फल त्यागे चरणकमल चितलायो॥ नारद मुनि अरु शिव ब्रह्मादिक तेरो ध्यान लगायो। आदि अनादि युगादि तेरो यश वेद पुराणन गायो ॥ अब क्यों न बांहगहो हरि मेरी तुम काहे बिसरायो॥ चरणदास कहैं करता तूही गुरुशुकदेव बतायो ॥

राग केदारा॥ अबकी तारिहो बलबीर। चूक मोसों परीभारी कुबुधिके सँगसीर ॥ भवसागरकी धारा तीक्षण महा गँधीलो नीर। काम क्रोध मद लोभ भँवरमें चित न धरत अब धीर॥ मच्छ जहां बलवन्त पांचहू थाह गहर गंभीर। मोह पवन झकोर दारुण दूर पै लवतीर॥ नाव तौ मँझधार

भरमी हिये बाढ़ी पीर । चरणदास कहै कोई नाहिंसंगी तुम बिना हरिहीर ॥

राग सोरठ ॥ अब जगफन्द छुटावोजी हौंतो चरण कमलको चेरो । परो रहूँ दरबार तिहारे सन्तन माहिं बसेरो ॥ बिना कामना करूं चाकरी आठौं पहरे नेरो । मन सब भक्ति क्रिया करि दीजै मोहिं यही बहु तेरो ॥ खानेजाद कदीमी कहियो तुही आसरो मेरो । झिड़क बिडारौ तहूं न छाडौं सेवा सुमिरण तेरो ॥ काहू और आन देवनसों रहोनहीं उर झेरो । जैसे राखो त्योंहीं रहहूं कर लीजौ सुरझेरो ॥ तेरे घर बिन कहीं न मेरो ठौर ठिकानो डेरो । मोसे पतित दीनको हरिजी तुमहीं करो निबेरो ॥ गुरु शुकदेव दयाकरि मोकूं ओर तिहारी फेरो । चरणदासको शरणैं राखो यही इनाम घनेरो ॥

राग बिलावल ॥ तुम साहब करतारहो हम बन्दे तेरे । रोम रोम गुनहगार हैं बकसो हरि मेरे ॥ दशौ दुवारेमें लहै सब गन्दम गन्धा । उत्तम तेरोनाम है बिसरो सो अन्धा ॥ गुण तजिकै औगुण किये तुम सब पहिंचानौ । तुम सों कहा छिपाइये हरिघटकी जानौ ॥ रहमकरो रहमानत यह दास तिहारो । भक्तिपदारथ दीजिये आवागमन निवारो ॥ गुरुशुकदेव उबारलौ अब मेहर करीजै । चरणहिदास गरीबको अपना करलीजै ॥

जन राग रामकली—चारिवरण सों हरिजन ऊंचे । भये पवि-
रावण रिके सुमिरे तनके उज्ज्वल मनके सूचे ॥ जो न पतीजै
जन भक्ता ताऊं शबरीके झूंठे फल खाये । बहुत ऋषीश्वर तिनके घर रघुपति नाहिं आये ॥ भीलनी पाव पैं शुद्ध भयो जल सब कोई जाने । मन्दहतो

सो निर्मल हुवो अभिमानी नरभये खिसाने ॥ ब्राह्मण क्षत्री भूपहुते बहु बाजो शङ्ख श्वपच जब आयो। वालमीकि यज्ञ पूरण कीन्हो जयजयंकार भयो यश गायो ॥ जातिवरण कुल सोई नीको जाके होय भक्ति परकासा। गुरु शुकदेव कहत हैं तोको हरिजन सेव चरणहीदासा॥१॥ सब जातिनमें हरिजन प्यारे। रहनी तिनकी कोई न पावे तनसों जगमें मनसों न्यारे॥ साखिसुनो अँबरीष भूपकी दुर्वासा जहँ आयो। लगो शरापदेन राजाको चक्रसुदर्शन जारनधायो॥ प्रभुजी आये दुर्योधनके वह मनमें गरवायो। नाना विधिके व्यंजन त्यागे साग विदुर घर रुचिसों पायो॥ सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग मान सन्तको राखो। भक्तों वश भगवाने सदाहीं वेद पुराणनमें यों भाखो॥ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र घर कहीं होय क्यों न वासा। धनि कुल वह शुकदेव बखाने यह तुम सुनो चरणहीदासा॥ २॥

राग कान्हरा—धनि वे नर हरिदास कहाये। रामभक्ति दृढहीकरि पकरि आन धर्म सबही बिसराये॥ आठपहर गलतीन भजन में प्रेममगन हियमें हुलसाये॥ आप तरे तारे औरनको बहुतक पापी पार लगाये॥ प्रभु दर्शन बिन और न आशा अर्थ धर्म्मकाम अरु मोक्ष न चाहे। आठौ सिद्धि फिरें सँग लागी नेक न देखैं नैन उठाये॥ तिनको ऋषि मुनि जाप करतहैं हरि हरिजन दोउ सँगही गाये। ऊंची पदवी इन्द्र हुते देवतदेखि अधिक ललचाये॥ कहैं शुकदेव चरणहीं दासा धनिमाता ऐसे जनजाये। जीवत सोभा जगमें पाई तनुछूटै हरिमाहिं समाये॥

राग सोरठ—मोको कछु न चहिये राम। तुम बिन सबही फीके लागैं नाना सुख धन धाम। आठ सिद्धि नौ निद्धि आपनी और जननको दीजे। मैं तो चेरो जन्म जन्मको निजकरि अपनो कीजे॥१॥ स्वर्ग फलनकी मोहिं न आसा। ना वैकुंठ न मोक्षहि चाहौं चरणकमलके राखौ पासा॥ यह उर-माहिं उमाहूं॥ भक्ति न छांड़ौ मुक्ति न मांगौं सुनु शुकदेव मुरारी। चरणदासकी यही टेकहै तजौं न गैल तुम्हारी॥

राग भैरव॥ वह पुरुषोत्तम मेरा यार। नेह लगा टूटै नहिं तार॥ तीरथ जाऊं न बर्त्त करूं। चरणकमलको ध्यानधरूं॥ प्राण पियारे मेरेहि पास। बन बन माहिं न फिरूं उदास। पढ़ूं न गीता वेदपुराण। एकहि सुमिरौं श्री-भगवान॥ औरनको नहिं नाऊं शीश। हरिही हरि हैं बिस्वे-बीश॥ काहूकी नहिं राखूं आस। तृष्णा काटि दही है फाँस॥ उद्यमकरूं न राखूं दाम। सहजहि ह्वै रहै पूरणकाम॥ सिद्धि मुक्ति फल चाहौं नाहिं। नितहि रहूं हरि संतन माहिं॥ गुरु शुकदेव यही मोहिं दीन। चरणदास आनँद लवलीन॥

सन्त महिमा।

राग भैरव—यों कहैं हरिजी दयानिधान। सन्त हमारे जीवनप्रान॥ सन्तचलैं जहँ सँगहीजावँ। सन्तको दीयो भो-जन खावँ॥ सन्त सो लावै जितरहुँ सोय। सन्त बिना मेरे और न कोय॥ सन्त हमारे माई बाप। सन्तहिको मनराखूं जाप॥ सन्तको ध्यान धरौं दिनरैन। सन्त बिना मोहिं परै न चैन॥ सन्त हमारी देही जान। सन्तहि की राखूं पहिचान॥ सन्तकी सकल बलैइया लेवँ। सन्तकूं अपनो सर्वस देवँ॥ सन्तहिहेत

धरूं अवतार । रक्षाकारण करूं न बार ॥ सुखदेऊं दुख सब निरवार । चरणदास मेरो परिवार ॥

राग सोरठ—भक्तजन सो हरिके मनभावै । निष्कामी अरु प्रेमहियेमें अनन्य भक्ति चितलावै ॥ आनदेव जो मोती बरषें तो नाहीं पतियावे । प्रभुके चरण कमलके ऊपर भँवर भयो लिपटावै ॥ सिद्धि न चाहै ऋद्धि न मांगै दर्शनको ललचावै । मुक्ति आदिदे चाह न कोई आशा सकल गँवावै ॥ रोमहिं रोम पुलकि सब देहीं गोविन्दके गुण गावै । गद्गदवाणी कंठउसाँसे नैनन नीर ढरावे ॥ परमेश्वर मिलनेकी लहरें इक आवे इक जावे । कहैं शुकदेव चरणहीं दासा हरिहूं कंठ लगावै ॥

राग बिलावल—हमारे चरणकमल को ध्यान । मूरख जगतभर्मतो डोलै चाहत जल असनान ॥ सब तीरथ वाहीसों प्रकटे गंगा आदिक जान । जिन सेवन सब पातक नाशै नित होवै कल्यान ॥ साकतगिरही वाने धारी है सबही अज्ञान । हरिसों हीरा छांड़ि दियोहै पूजै कांचपखान ॥ हरि चरणनकी महिमा जानें हैं वे सन्त सुजान । भोंदू नर मायाके चेरे इनको कह पहिचान । चरणदास शुकदेव गुरूने दीन्हों अंजन ज्ञान । हरिसों प्रीतम सूझ पराहै बिसरिगयो सब आन ॥

रागनट व बिलावल सारंग ॥ हमारे रामभक्ति धन भारी । राज न डांड़ै चोर न चोरै लूटि सकै नहिं धारी ॥ प्रभु ऐसे अरु राम रुपैया मुहर मुहब्बत हरिकी । हीरा ज्ञान युक्तिके मोती कहा कमी है जरकी ॥ सोना शील भँडार भरेहैं रूपा रूप अपारा । ऐसी दौलत सतगुरु दीन्हीं जाका सकल पसारा ॥ बांटों बहुत घटै नहिं कबहूं दिन दिन ड्योढी ड्योढ़ी । चोखा माल द्रव्य अति नीका बट्टा लगै न कौड़ी ॥

साह गुरू शुकदेव विराजै चरणदास वन जोटा । मिलि मिलि रंक भूप हो बैठै कबहुँ न आवै टोटा ॥

राग नट बिलावल–जो नर हरि धन सों चितलावै । जैसे तैसे टोटा नाहीं लाभ सवाया पावै ॥ मन करि कोठी नाव खजानो भक्ति दुकान लगावै । पूरा सतगुरु साझी करिकै संगति वणिज चलावै ॥ हुंडी ध्यान सुरति लै पहुँचे प्रेम नगरके माहीं । सीधा साहूकारी सांचा हेर फेर कछु नाहीं ॥ जित सौदागर सबहीं सुखिया गुरु शुकदेव बसाये । जन रंजीत बिलसि रहे ह्वांई योनी पंथ न आये ॥ ४६ ॥

राग देवगन्धार–मनुवाँ रामके व्योपारी । अबकै खेप भक्तिकी लादी वणिज कियो तैं भारी ॥ पांचौ चोर सदा मग रोकत इनसों कर छुटकारी । सतगुरु नायकके सँग मिलि चल लूटसकै नहिं धारी ॥ दो ठग मारग माहिं मिलैंगे एक कनक एक नारी । सावधान हो पेच न खइयो रहियो आप सँभारी ॥ हरिके नगरमें जा पहुंचौगे पैहो लाभ अपारी । चरणदास तोको समझावै ये मन वारंवारी ॥

राग सोरठ ॥ हरि पावनकी गति न्यारी है । कष्ट तपस्या पढ़न लिखन सूं ढूंढत मूढ़ अनारी है । अड़सठ तीरथ भरमत डोलै देह गई सब हारी है । निरजल व्रतकिये बहु भाँती आश फलन की धारी है । तप करनेको वन जा बैठे कीन्हीं त्वचा उघारी है । पौन अहारी तनहूं गारौ दर्श नाहिं मुरारी है ॥ विद्या पढि पढि पण्डित हूवा अर्थ करै बहु भारी है । अभिमानी है जन्म गँवायो भयो न प्रेम खिलारी है ॥ सांचि भक्ति विन हरि नहिं रीझै बहुत गये शिरमारी है । चरणदास शुकदेव श्यामपर तनमनसूं बलिहारी है ॥१॥ सुन

रामभक्ति गति न्यारी है। योग यज्ञ संयम अरु पूजा प्रेम सवनपर भारी है॥ जाति वरणपर जो हरि जाते तो गणिका क्यों तारी है। शवरी सरस करी सुरमुनिते हीन कुचील जो नारी है। दुश्शासन पति खोवन लागो सबही ओर निहारी है। होय निराश कृष्ण कहँ टेरी बाढ़ो चीर अपारी है॥ टेढ़ी लौंडि कंसराजाकी दीन्हों रूप करारी है। एकसूं एक अधिक व्रजनारी कुबिजा कीन्हीं प्यारी है॥ पांचौ पाण्डवन यज्ञ सजो है सगरी सजी सवारी है॥ वालमीकि बिन काज न होतो वाजो शंख मुरारी है॥ साधोंकी सेवामें राचो भूपकि सुरति बिसारी है। सैन भक्तके कारण हरिजी ताकी सूरत धारी है। दासकबीरा जाति जोलाहा ब्राह्मण सिलकीस्वारी है। बनिजारा हो बालिधलाये ताकी करी सँभारी है॥ साखि सुनो रैदास चमारा सो जगमें उजियारी है। कनक जनेऊ काढि दिखायो विप्रगये सब हारी है॥ अजामील सदना तिरलोचन नाभादास अधारी है। धन्नाजाट कालु अरु कूबा बहुतकिये भवपारी है॥ प्रीतिबराबर और न देखे वेदपुराण विचारी है। चरणदास शुकदेव कहत हैं तावश आप मुरारीहै॥

रागगौरी—आवो साधौ हिलमिल हरियशगावें।प्रेमभक्तिकी रीतिसमझकरि हितसों राम रिझावें॥ गोविंदके कौतुक लीला गुण ताको ध्यान लगावें। सेवा सुमिरण वंदन अर्चन नौधासों चितलावें॥ अबकी औसर भलो बनो है बहुरिदावँ कबपावें। भजन प्रताप तरें भवसागर उर आनन्द बढ़ावें॥ सतसंगति को साबुन लेकर ममता मैल बहावें। मनको धो निरमल करि उज्ज्वल मगनरूप ह्वै जावें॥ ताल पखावज झांझ मँजीरा

मुरली शङ्ख बजावैं । चरणदास शुकदेव दयासूं आवागमन मिटावैं ॥

राग बिलावल–करिले प्रभुसों नेहरा मन माली यार । कहा गर्व मनमें धरै जीवन दिनचार ॥ ज्ञानबेलि गहु टेककी दया क्यारी सवाँर । यतसत दृढको बीजाहि बोवै तासु मंझार । शील क्षमा के कूपको जल प्रेमअपार । नेमडोलभरि खैंचिकै सींचोबाग विचार ॥ छलकोकरकूं काटकै बाँधो धीरज बार । सुमति सुबुद्धि किसानको राखो रखवार ॥ धर्म्म गिलेलजु प्रीतिकी हित धनुष सुधार । झूंठ कपट पक्षीनकूं तासों मार बिडार ॥ भक्तिभाव पौधालगै फूलै रङ्ग फुलवार । हरिरसमाताहोयकै देखै लालबहार ॥ सतसंगति फलपाइये मिटै कुबुधि विकार । जब सतगुरु पूरा मिलै चाखै अमृतसार ॥ समझावै शुकदेवजी चरणदास सँभार । तेरीकायामें खिलै साँचो गुलजार ॥

राग मंगल–सोई सुहागिल नारि पियामन भावई । अपने घरको छोड़ि न परघर जावई ॥ अपने पियको भेद न काहू दीजिये । तन मन सुरति लगाय कि सेवा कीजिये । पतिकी आज्ञा चाल पाल पियको कहो । लाज लिये कुलवंत यतनहीसूं रहो ॥ धनि धनि है जगमाहिं पुरुष बहु हितधरै । सबसे नायकहोय जो सबरको करै ॥ पियको चाहो रूप शृंगार बनाइये । पतिव्रता कुल दोयमें शोभा पाइये ॥ नौधा बस्तर पहिरि दया रँगलालहै । भूषण लक्षनधार बिचित्तर बालहै ॥ रङ्गमहल निर्दोष ह्वां झिलमिल नूरहै ॥ निर्गुण सेज बिछाय सभी करि दूरमैं ॥ मन्दिर दीपक बाल बिना बातीघीवकी । सुघर चतुर गुणराशि लाड़िली पीवकी ॥

कहैं गुरू शुकदेव यों बालम मोहिये। चरणदास ले सीख जो प्रेम समोइये॥ १॥ परमसुखी सोइ साधु जो आपा नाथपै। मनके रोग मिटाय नाम निर्गुणजपै॥ परनिन्दा परनारि द्रव्य नाहीं हरे। जिन चालन हरिदूरि बीच अन्तरपरे॥ क्षण नहिं बिसरै राम ताहि निकटे तकै। हरिचर्चा बिन और वाद नाहीं बकै॥ झूठ कपट छल भगल ये सकल निवारिये। यत सत शील सँतोष क्षमा हिय धारिये॥ काम क्रोध मद लोभ बिड़ार न कीजिये। मोह ममत अभिमान अकस तजदीजिये॥ सब जीवन निर्वैर त्यागि वैरागले। तब निरभै है सन्त भाँति काहू न भै॥ काग करम सब छोंड़ि होय हंसागता। तृष्णा आश जलाय सोई साधू मता॥ जगसूं रहै उदास भोग चित ना धरै। जब रीझै करतार दास अपनो करै॥ कहै गुरूशुकदेव जो ऐसा हूजिये। चरणहिंदास बिचार प्रेममें भीजिये॥२॥ राधेकृष्ण राधेकृष्ण राधेकृष्ण गावरे॥ या देहीको कहा भरोसो पल पल छिन छिन छीजत आवरे॥ कहाअभिमान करै मायाको यह धोखा सा जान बावरे। मानुषजन्म भाग्यसों पायो बहुरि न ऐसों कबहुँ दावरे॥ भवसागर जो उतरो चाहै सतसंगति की चढ़ले नावरे॥ ज्ञानवली गहिपार मुक्तिहो निश्चय तत्त्व पदारथ पावरे॥ सतयुगमें सतही सत कहते त्रेता तप करते तनतावरे॥ द्वापर पूजा राजमानसी कलियुग कीर्त्तन हरिहि रिझावरे। ताते सबतजि हरिही हरिभजि निशिदिन चरणकमल चितलावरे। चरणदास शुकदेव बतावे श्याम मिलनको यही उपावरे॥३॥ जगमें दो तारणको नीका। एकतो ध्यान गुरूका कीजै दूजे नाम धनीका॥ कोटि भांति

करि निश्चय कीयो संशयरहा न कोई । शास्त्र वेद पुराण टटोले जिनमें निकासा सोई ॥ इनहींके पीछे सवजानौ योग यज्ञ तपदाना । नौविधि नौधा नेम प्रेम सब भक्ति भाव अरु ज्ञाना ॥ और सवै मत ऐसे मानो अन्न बिना भुस जैसे । कूटत कूटत बहुते कूटा भूखगई नाहिं तैसे ॥ थोथा धर्म वही पहिंचानौ तामें ये दो नाहीं । चरणदास शुकदेव कहत हैं समझि देखि मन-माहीं ॥ ४ ॥

रागआसावरी—साधो भक्ति नफा करिलीजै । दिनदिन काया छीजै ॥ मक्कर तजै तौ मथुरा मनमें कपट तजै तौ कासी । और तीर्थ सबही जग न्हाया नाहिं छुटी यम फांसी ॥ भाल तले तिरवेणी राजैं विरले जन कोई न्हावैं । सुगुरा होय सो नित उठि परशै निगुरा जान न पावैं ॥ कायामन्दिरमें हरि कहिये वेदपुराण बतावैं । इत उत भूले लोग फिरतहैं धोखेको शिर नावैं ॥ यंतर टोना मूड़ हलावन ताकूं सांच न मानो । तजिके सार असार गह्यो है तापर भयो सयानो । चरणदास शुकदेव कहत हैं निजकरि मूल गहीजै । पारब्रह्म जिन सृष्टिउपाई ताओरी चितदीजै ॥

रागबिलावल—नमो नमो श्रीरामजी देवनके देवा । शिव नारद संनकादि लौं कोइ लहैं न भेवा ॥ एजी निर्गुणसों सरगुण भये कौतुक विस्तारे । साधुनकी रक्षाकरी दानवदल मारे ॥ दशरथ सुत भूले कहै कोइ जानत नाहीं । इकसात अंड दिखाइया अपने मुखमाहीं ॥ गोरान परचोलियो सिय-वेष बनायो । देखे रूप अनन्तही जब मन बौरायो ॥ आदि निरंजन एक तू दूजा नहिं कोई । शुकदेव कही चरणदासको नित सुमिरो सोई ॥ १ ॥ नमो नमो गोविन्दजी हूं दास तिहारो

चौरासी दुख सब हरो आवागमन निवारो ॥ कर्मनको प्रेरो फिरूं नहिं पायो नेरो । अबके ऐसी कीजिये दीजै चरणबसेरो॥ पतित उधारण तुम सुने वेदन में गाये । अजामील गणिका तरी ले पार लगाये ॥ एजी गुरु शुकदेव बताइया गही तुम्हरी आस । आनधर्म को छोड़िकै भयो चरणहिंदास ॥ २ ॥

रागजैजैवन्ती–आदि तो सनातन ओई अज अविनाशी है साईं । जाको नहिं वारपार निर्गुणको तत्त्वसार तासों भयो जगसब आप निर्वासी है ॥ अद्वै निराकार जानौ सतचिदानन्द मानौ पुरुषको रूपधारि माया परकासी है । नेति नेति वेद कहै अस्तुति माहीं रहे भेद कछु नाहीं लहै थकथक जासी है ॥ योग ध्यान आवे नाहीं ज्ञानसों न गहोजाई भक्तों के हिये माहिं सदा जो विलासी है । सन्तौं हेतु देह धरै आयके सहा–यकरै पृथ्वीको दुःख हरै घटघटवासी है ॥ एहो चरणदास जन वासों क्यों न लावोंमन शुकदेव कृपा घन खोलिदई गांसी है ॥ १ ॥ साँवरोसलोना प्यारो मेरे मन भायो है माई । कहा कहूं शोभा वाकी तीनलोक माया जाकी शेषहू की रसना थाकी पारहू न पायो है ॥ निरगुण निराकार कोऊ कहा जानै सार सन्तोंकी सहायकाज देह धरि आयो है । ब्रजहू में कौ–तुक कीन्हे सन्तन को सुख दीन्हे मुरली बजाय गाय रीझि–के रिझायो है ॥ योगी जाको ध्यान लावैं ब्रह्मा अरु वेद गावैं याको तो यशोदा माता गोदमें खिलायो है । चरणदास सखी–पर शुकदेव कृपा कीन्ही बांकोसो बिहारी एक पलमें दि–खायो है ॥ २ ॥

बधाई रागमलार–बधाई सबही ब्रज सोहाई । मुदितभये वसुदेव देवकी मनमें अति अधिकाई ॥ पहुँचे जाय महरि

घरमाहीं काहू भेद न जानो। यशुमति रानी बालक जन्मो। सबने योंकर मानो॥ घर घर मंगलचार भये हैं बन्दनवार बँधाईं। नूतन बस्तर पहिरि पहिरिके नारिसबै घिरि आईं॥ करि कौतूहल मिलि २ गावत करैं उछाह घनेरा। याचक भीर बहुतभई द्वारे बजत दमामे भेरा॥ जिसलायक देखा सो दीन्हा करीशुश्रूषा भारी। इक आवत इक जात बिदाहो देत अशीशमहारी॥ धनिगोकुल धनिपौरि भवनधनि आये हैं जगदीशा। शिव ब्रह्मादिक ध्यान धरतहैं लख ईशनको ईशा॥ दुष्टदलन सन्तन सुखकाजैं लीन्ह्यो है अवतारा। चरणदास शुकदेव कहतहैं जगपति सिरजनहारा ॥१॥ नन्दघर कौतुक करत नवीने। जो जो वचन किये थे आगे सो आ पूरण कीने॥ भक्तवछल करतार गुसाईं धरिआये अवतारा। रक्षाकारण साधु ऋषिनकी भूमि उतारणभारा॥ जब जब भार बढ़त पृथ्वीपर तब तब होत सहाई। मर्यादा पुरुषोत्तम येही बिगरी सबै बनाई॥ निरगुणसों सरगुण वपुधारे कष्ट निवारण काजै। योगेश्वर जेहि ध्यान लगावैं नामलिये अघ-भाजै॥ भाग बड़े यशुमति रानीके दर्शन दीन्हें आई। चरणदास शुकदेव कहतहैं सुर मुनि करी बधाई ॥२॥ जगतपति देखि महरघर आये। बालचरित्र ही दिखलावन आनँद अधिक बधाये। तपकीन्हीं थो नन्द यशोदा पिछले जन्म अघाई॥ बरमांगो थो हम सुतहोके खेलो भवन मँझाई। वचन न मोड़ा आय विराजे भक्तोंवश सुखदाई॥ जो जो चाहा सो सुखदीया हूये कुवँर कन्हाई। संग लियो सा-मीप मुक्तिको ब्रज में आवन कियो है॥ सुख उपजायो नर नारिनको दर्शन आय दियोहै। जब जब प्रगटे

चारोयुग में सत कलि द्वापर त्रेता ॥ चरणदास शुकदेव कहतहैं सन्तनहीके हेता ॥ ३ ॥ सखी री आज गोकुल भाग बड़ाई । दर्शन दे वसुदेव देवकी नन्दघर प्रगटे आई ॥ भादोंमास वदी बुध आठैं ग्रह नक्षत्र बहु नीके । यशुमति रानी गोद सिरानी भये मनोरथ जीके ॥ भयो उछाह स्वरगके माहीं देवसभी हर्षाये । अपने अपने बैठि विमानन पुष्प बहुत वर्षाये ॥ यह धरती परफुल्ल भई है फूलउठा बनसारा । कालिन्दीको वड़ो उमाहो करिहैं लाल बिहारा ॥ किरपा सागर होय उजागर मर्यादा वँधबाँधन । चरणदास शुकदेव कहतहैं कारण अपने साधन ॥४॥ सखीरी सुनि देख अभी मैं आई । यशुमति रानी बालक जायो यह तोहिं आनि सुनाई ॥ नायन डोले हँसि हँसि बोले घर घर कहत बधाई । भयो उछाह सकल गोकुलमें बातभई सनभाई ॥ सुन सुन आपसमें मुसकाने देन बधाई लागे । भूषण वस्तर लगे सवाँरन नर नारी रसपागे ॥ बनसों रहे गये नँदद्वारे ग्वाल सभी हरपाये । बड़ी पौरिके आगे याचक गावनहीं को आये । मैं घरजाऊं बनकर आऊं तुमहूं देह श्रृँगारो । साथ चलैंगी जायमिलैंगी होइहै कौतुक भारो ॥ शुकदेवा का मुँह देखैंगी करि हैं अधिक हुलासा । ऐसे कहि वह भवन सिधारी भनै चरणही दासा ॥ ५ ॥

राग हिंडोलनो–झूलत हरिजन सन्तभक्ति हिंडोलने ररामसा दृढ खम्भ रोपे प्रेमडोरी लाय ॥ टेक पटरी बैठि सुजनी अति अनन्दबढ़ाय । ध्यानके जहँ मेघ बरसैं होय उमँग हुलास ॥ गुरुमुखी जहाँ समझ भीजैं पूरण हरिके दास । बुद्धि विवेक विचारि गावैं सखी सहेली साथ ॥ अगमलीला

रटैं सजनी जहां ब्रह्मविलास । परमगुरु श्रीजनक झूलैं झूलैं गुरु शुकदेव । चरणदास सखी सदा झूलैं कोइ न पावै भेव ॥

राग हेली—और न मेरे कोय हेली । प्राणपियारे लालजी रोम रोम वेई रमेरी अरीहेली ॥ तन मन व्यापक सोय जित देखों तित लाल कोरी अरी हेली । दूजा नाहीं और आदि अन्तहै लालजी सर्वमयी सबठौर देशकाल सबलाल हैरी अरीहेली ॥ अर्धऊरधहै लाल दहिने बायें लालजी दशोंदिशा में लाल सोवतहीमें लालहैरी अरीहेली । जाग्रतही में लाल माहिं सुषोपति लालजी तुरियाही में लाल ज्ञानध्यान सब लाल हैरी अरी हेली ॥ लालही गुरु शुकदेव चरणदासहै लालकी विरला जानै ॥ १ ॥ जो होवै हरिदास हेली एते कुलतारै वही ॥ फल न मुक्तिचाहै नहींरी अरीहेली भक्ति करै निर्वास ॥ बीस चारकुल दादकेरी अरीहेली बीस नानाके जान ॥ सोलहकुल ससुरारके द्वादशसुता बखान ॥ बहिनीके ग्यारह तरेरी अरीहेली । दश भूवाके पार ॥ मौसीके कुलआठही वेद कहतेहैं चार ॥ अष्टादश यों कहैरी अरीहेली । कहैं साधु अरु सन्त चरणदास शुकदेवभी कहैं कमलको कन्त ॥ २ ॥ छूटे आलजञ्जाल हेली ॥ चरण कमल के आसरे भर्मभूत सबही छुटेरी अरीहेली । सौन नक्षत्रनालजन्तर मन्तर सबछुटेरी अरीहेली ॥ छूटेबीर मशान मूठडीठ अबनालगे नहीं घातको बान ॥ शनीश्चरबल अबना चलैरी अरीहेली नहीं राहु अरु केतु । मंगल बृहस्पति नादहैं नहींभोग उनदेतु ॥ ज्योति बाल परसो नहींरी अरीहेली मानूं न देवी देव । सतगुरु मोहि बताइया साँचो झूठो भेव॥अठसठ तीरथना फिरूंरी पूजूंन पाथरनीर । श्रीशुकदेव छुटाइया

जन्म मरणकी पीर ॥ निश्चलहो हरि की भईरी अरी हेली सुमिरं निर्मलनाव । अनन्यभक्ति दृढ़करि गही मारग आन न जावँ ॥ गोविन्द तजि और न भजेरी अरी हेली जाके मुँहड़े छार । चरणदास यों कहतहैं राम उतारे पार ॥ ३ ॥

अथ सुमिरणका अंग ।

राग काफी–कहा कहि तोहिं पुकारूं करतार हमारे ॥ नाम अनन्त अन्तनहिं जाको बहुगुण रूप तिहारे ॥ अजर-१ अमर २ अविगत ३ अविनाशी ४ अलख ५ निरञ्जन ६ स्वामी। ७ । पुरुष पुरातन ८ पुरुषोत्तम ९ प्रभु १० पूरण अन्तरयामी ११ ॥ कृष्ण १२ कन्हैया १३ विष्णु १४ नरायण १५ ज्योतीरूप १६ विधाना १७ । अपरमपार १८ मुकुन्द १९ मुरारी २० दीनबन्धु २१ ब्रजनाथा २२ ॥ यादवपति २३ जगदीश २४ चतुर्भुज २५ निर्भय २६ सर्वप्रकाशी २७ । पारब्रह्म २८ प्राणनको दाता २९ सबठां घटघटवाशी ३० ॥ निर्विकार ३१ परमेश्वर ३२ गिरिधर ३३ माधव ३४ गोविंद प्यारा ३५ । कमललैनन ३६ केशव ३७ मधुसूदन ३८ सबसे ३९ सबसे न्यारा ४० ॥ हृषीकेश ४१ मुरलीधर ४२ मोहन ४३ ॐ ४४ अखिल ४५ अयोनी ४६ । भगवत ४७ वासुदेव ४८ भगवाना ४९ ज्ञानी ५० ध्यानी ५१ मोनी ५२ ॥ दीनानाथ ५३ गोपाल ५४ हरी ५५ हर ५६ गरुड़ध्वज ५७ घनश्यामा ५८ । भक्तवछल ५९ अरु देवकिनन्दन ६० करता सब विधिकामा ६१ ॥ आदि प्रधान ६२ माधुरी मूरति ६३ धरणीधर ६४ बलबीरा ६५ । नन्दनँदन ६६ अरु यशुदानन्दन ६७ सुन्दर श्याम शरीरा ६८ ॥ परशुराम ६९ नरसिंह ७० विश्वंभर ७१ अचल ७२

अखण्ड ७३ अरूपी ७४ । ईश ७५ अगोचर ७६ और जगतगुरु ७७ परमानंद ७८ बहुरूपी ७९ ॥ करुणामय ८० कल्याण ८१ अनन्ता ८२ दयासिंधु ८३ बनवारी ८४ । धारण शंख चक्र ८५ रुक्मिणिपति ८६ आनँदकन्द ८७ बिहारी ८८ ॥ परसदयाल ८९ मनोहर ९० नरहरि ९१ कृपानिद्धि ९२ फलदाता ९३ । कंसनिकन्दन ९४ रावणगंजन ९५ जगपति ९६ लक्ष्मीनाथा ९७॥ जगन्नाथ ९८ अरु बद्रीनाथा ९९ निरगुण १०० सरगुणधारी १०१ । दामोदर १०२ रघुवर १०३ सीतापति रामा १०४ कुंजबिहारी १०५ ॥ दुष्टदलन १०६ सन्तनकोरक्षक १०७ सकल सृष्टिको सांई १०८ । दुःखहरणके कौतुक अनगिन शेष पार नहिं पाई ॥ सौ अरु आठ नामकी माला जो नर मुख उचारै । अपने कुलकी सारी पीढी एकरुसौको तारै ॥ गुरु शुकदेव मन्त्र निज दीन्हो रामनाम तत सारा । चरणदास निश्चय सो जपकरि उतरो भवजल पारा ॥

रागकेदारा–हरिको सुमिरि संकटहरन । कोटिकष्ट निवारि टारन जगपति पोषण भरन ॥ भक्ति पूरण देखि निश्चल अननव बाधों परन । अग्निमें प्रह्लाद राखो दियो नाहीं जरन ॥ गिरि शिखरसों डारि दीन्हों लगो करुणा करन । दीन जानि संभार लीन्हों कियो ठाढ़ो धरन ॥ खम्भ बाँधो खड्ग काढो दुष्ट लागो अरन । अब बता तेरो राम कित है गहौं वाकी शरन ॥ ढीठहो प्रह्लाद भाष्यो डारि शंका डरन । मोमें तोमें खड्ग खम्भमें मध्य नारी नरन ॥ खम्भ फटकर भये परगट धरो नरसिंह वरन । असुर मारो जन उबारो पुष्प

बरषे सुरन ॥ मोहिं गुरु शुकदेव कहिया सेव सोई चरन। चरणदास उपासना दृढ़ होय तारण तरन ॥

राग अलहिया ॥ सुमिरु मन राम नाम ततसार । जिन जिन सुमिरो सो सो उबरे भवसागरसों पार ॥ वेद पुराण और षटमाहीं तारण को यहि योग । जोपै पांचौ प्रेत निवारै अरु इन्द्रिनके भोग ॥ साधन संयम पूजा अर्चन और करै तपदान । नाम समान न फल काहूमें करि देखी पहिंचान ॥ जो जप करै धरै हिरदै में आशा सकल बिडार । तीनलोकमें धनि धनि होवै शोभा अगम अपार ॥ सब धर्मन परधान नाम है सब इष्टन शिरमौर । निश्चय पकडरहो याहीको सकल बिकल तजि दौर ॥ तामें ज्ञान भरोही देखै पावै ब्रह्म विचार । गुरु शुकदेव दियो दृढ़ मोकूं चरणहिंदास सँभार ॥

राग बिलावल ॥ अब तू सुमिरण कर मन मेरे । अगले पिछले अबके कीये पाप कटैं सब तेरे ॥ यमके दंड दहन पावकको चौरासी दुख प्रेरं । भर्म कर्म सबही कटिजै हैं जगत व्याध उरझेरे ॥ पैहै सकल मुक्ति गति आनँद अमरहि लोक बसेरो । जन्मै मरै न योनी आवै या जग करै न फेरो ॥ सुमिरण साधन माहिं शिरोमणि जो सुमिरण करिजानै । कामक्रोध मद लोभ जरावै हरिबिन और न मानै ॥ गुरु शुकदेव लोभ दियो है बिन सुमिरन जिह्वा कारलीजै । चरणदास कहैं घेरि घेरि कर अर्ध ऊर्ध मन दीजै ॥

राग केदारा—अरेमन करो ऐसो जाप । कटैं संकट कोटि तेरे मिटैं सगरे पाप ॥ चेत चेतन खोज करले देख आपा आप । कागसों जब हंस होवै नामके परताप ॥ ध्यान आतम सुरति राखौ छुटै तिरगुण ताप । सुरति माला सुमिरि हिरदै छोडँ

सकल संताप ॥ पराभक्ति अगाध अद्भुत विमल अरु निष्काम ॥ चरणदास शुकदेव कहिया बसैं निजपुर धाम ॥

रागभैरों—राम राम राम राम राम राम गावो ॥ मनके रोग सकल विसरावो ॥ नाम प्रताप शिला जलतारी । सोई नाम जपो नरनारी ॥ नाम लेत प्रह्लाद उबारो । परगट है हिरणाकुश मारो ॥ पतित अजामिल सब जग जानै । नामलेत चढिगयो विमानै ॥ सुवा पढावत गणिका तारी । नाम लेत निजधाम सिधारी ॥ सोइ नाम नारदमुनि गायो । वेदव्यास मुख प्रगट जनायो ॥ हरिके नामको करो विचारा । सत संगति मिलि उतरौ पारा ॥ शिव ब्रह्मादिक नाम उपासी । आठसिद्धि नौ नाम कि दासी ॥ गुरु शुकदेवजीने नाम बतायो । चरणदास हरिसौं चितलायो ॥

राग बिलावल—रामनाम चारौ वेदको कहियत है टीको । पाप ताप दुख द्वंद्वकूं मेटनकूं नीको ॥ एजी जेहि सुमिरे रक्षाकरी प्रह्लाद उबारो । निर्गुण सों सर्गुण भयो जानत जग सारो ॥ एजी जप तप संयम योगमें सबहुन परभारी । नामलिये सबही तरैं बालक नर नारी ॥ जो हिरदै दृढकर गहै सोइ हरिदर्शन पावै । चौरासी बन्धन कटै आवागमन नशावै ॥ गुरु शुकदेव दयाकरी हरिनाम बतायो । चरणदास आधीनके निश्चय मनआयो ॥ १ ॥ सांचा सुमिरण कीजिये जामें मीन न मेख । ज्यों आगे साधुन कियो वाणीमेंही देख ॥ टेकगहो दृढभक्तिकी नौधा हिय धारि । सन्तनकी सेवाकरो कुलकानि निवारि ॥ जासों प्रेम ऊपजै जब हरि दरशाय । आगे पीछेही फिरै प्रभु छोड़ि न जाय ॥ चारि मुक्ति बाँदी भवै सिद्धिचरणन माहिं । तीरथ सब आशाकरैं अघ देख न-

शाहिं ॥ कहैं गुरू शुकदेवजी चरणदास गुलाम । ऐसी साधन धारिये रहिये निष्काम ॥ २ ॥ ऐसा सुमिरण कीजिये सुनिहो मन मेरे । रसना राम उचारिये करमालाफेरे ॥ निन्दा अकस न राखिये काहू दुखनहिं दीजै । सन्तनसूं सनमुख रहो गुरुसेवा लीजे ॥ भूखे भोजन दीजिये प्यासे नीर पियावो । सबसे नीचा ह्वै चलो अभिमान नशावो ॥ सतसङ्गतिमें मिलिरहो गुरुमतसूं रहिये । आन धर्म नहिं चालिये यमदण्ड न सहिये ॥ तामसकूं विषज्यों तजौ शुकदेव बतावै । चरणदास हरिहरि जपै मुकता ह्वै जावै ॥ ३ ॥ थोथे सुमिरण कहासरे । मनके रोग शोक नहिं खोये हिंसा डूब अकसजरे ॥ नारी सुतसूं मोह कियोहै नेक न हरिके प्रेमअरे । कुलनाते परिवार सँभारे साधनकी नहिं टहलकरे ॥ माला तिलक सुधारि सँवारे राखत छलबल मकर घने । अन्तर और निरंतर औरै सिंह गऊमुख रहतबने ॥ ऐसी भक्ति मुक्ति नहिंपावै करम लगैं अरु नरकपरे । यमके दण्डदहन पावककी जनम मरण यो नाहिंटरै ॥ लक्षण प्रेम सहित जप कीजै भीतर बाहर उघर नचे । चरणदास शुकदेव कहतहैं हरिरीझैं जग व्याधि बचे ॥ ४ ॥ माला फेरै कहाभयो । अन्तरके मनको नहिं फेरा पाप करत सब जन्मगयो ॥ परनिन्दा परनारि न भूलो खोट कपटकी ओरनयो । काम क्रोध मद लोभ न खोये ह्वै रह्यो मूरख मोहमयो ॥ दुनिया सांच समझ घर कीन्हो धन जोरनको परन लयो । दयाधर्म दोउ मारग छोडे मँगतन को नहिं दानदयो ॥ गुरुसौं झूठ भगल साधन सों हरिको नाहीं नेह जयो । चरणदास शुकदेव कहतहैं कैसे कहियो मुकतिहयो ॥ ५ ॥

रागहेली—और उपासन कोय हेली टेक हमारे नामकी । आन शरण जाऊं न हेरी अरी हेली होनो होय सो सोय ॥ योग यज्ञ तप नामहींरी अरी हेली नाम नक्षत्तर बार । सकल शिरोमणि नाम है तन मन डारूंबार ॥ अडसठ तीरथ नाम हींरी अरी हेली नाम हमारे नेम । नामहींसूं राची रहूं नाम हमारे प्रेम ॥ मरत हमारे नामहींरी अरी हेली इष्ट हमारे नाम । अर्थ धर्म्म फल नामहीं नाम मुक्तिको धाम ॥ पठन लिखन सब नामहींरी अरी हेली नाम गरह सब देव । जो कुछ है सो नामहीं नाम हमारो भेव ॥ राम नाम शुकदेव दियोरी अरी हेली सो राखो मनमाहिं । चरणदासके नामहीं इह समतुल कछु नाहिं ॥

अथ सगुण उपासना अंग रासशब्दों के—दोहा ।

धन सतगुरु शुकदेवजी, मेरी करी सहाय । निज वृन्दा-वनधामकी, लीला दई दिखाय ॥ १ ॥ अब कुछ कौतुक रासको, वर्णत हैं चरणदास । लाल लाडिली कृपा सों, पावै निज वृज वास ॥ २ ॥

राग रासविहागरा—नृत्य करत छबिसों बनवारी । टेरि-लई सबही व्रज बनिता मुरली मधुर बजाय विहारी ॥ सुनत श्रवण धुनिहोय प्रेमवश व्याकुलभईं सुन्दरि सुकुमारी । गृहके काज लाज तजि पियकी उठि धाईं तनु सुरति बिसारी ॥ आय गावन छहूं रागमिलि पांच पांच इक इककी नारी । आठ आठ इक इकके बेटा सूरतवन्त स्वरूप महारी ॥ ताल वीण मुरचंग मँजीरा तनन तनन तँबुरा गति न्यारी ॥ ताधिन ताधिन धिन बजत पखावज घुंघुरू झनक झनक झनकारी ॥ इक इक्क गोपियनके सँग इक इक सुन्दर वेष

धरो गिरिधारी । ऐसो रच्यो रासको मण्डल मध्य राधिका कृष्णमुरारी ॥ गावत प्रीति बढ़ाय परस्पर मान करत पियसों पियप्यारी । लेत मनाय लाड़िलो प्यारो हँसि हँसि बिहरत दै दै तारी ॥ ततथेई ततथेई थेइ थेइ ततथेइ उरपतुरप सांगीत उचारी । नटवररूप करो मनमोहन शेषथको वरणत शोभारी ॥ भये चकित सुर मुनि ऋषि किन्नर बाढी रैनि शरद उजियारी । चरणदास शुकदेव श्यामकी अद्भुत लीलापै बलिहारी ॥

राग भैरोंरास–देख सखीरी रास रच्यो साँवरे बिहारी । ब्रह्माशिव इन्द्र शेष नारदसे थकित भये ऐसो कबि कौनकरै वरणत उपमारी ॥ सोहै शिर मुकुट और कुण्डल छबि तिलक भाल किंकिणी कटि पीताम्बर नूपुर झनकारी । बहुत नारि सुघर सखी राधाजू चन्द्रमुखी ललितादिक सहचरी शृंगार सों सवाँरीकोऊ ॥ कोऊ तँबूरा कोउ मुरचंग कोऊ बजावै गति मृदङ्ग कोऊ ताल देत कोऊ सुर उठान भारी । बंशी में करत गान बाँकीसी मधुरतान श्यामा जब करत मान श्याम ले मनारी ॥ कबहूं करजोर दोऊ नाचतहै नवकिशोर कबहूं हरिनृत्यकरत कबहूं पियप्यारी । ता ता ता ता ता ता थेई हैरही बाढी निशि शरददेखि हरिकी नृतकारी ॥ गउवन तृण छाँड़ि दियो बछरन पय नाहिं पियो मुरली धुनि सुनत मोहे मुनिजन व्रतधारी । शुकदेवजी गुरुको चरणदास सब ऊपर नाम करै रासको बिलास दियो परगट दरशारी ॥

रास राग बिहागरा–रास में निरत करत बनवारी । मुदित मनोहर रंग बढ़ावत सँग वृषभानु दुलारी ॥ मोरमु-

कुट छबि शीश बिराजत नाक बुलाक सुधारी । कर मुरली कटि काछनि काछे अलकैं घूँघुरवारी ॥ राधाजूके शीश चन्द्रिका नीलाम्बर जरतारी ॥ गावैं सखी श्याम श्यामा सँग नखशिखरूप उजारी । ताधिना ताधिनाधिना बजत पखावज ताल बीण गति न्यारी ॥ ठनन ठनन ठन नूपुरकी धुनि झनन झनन झनकारी । थेई थेई थेई थेई नचत दोऊ मिलि बिहँसि बिहँसि मुसकारी ॥ चरणदास शुकदेवदयासूं पायो दरश मुरारी ॥

रास रामकलेवा भैरों ॥ नृत्यत गोपाललाल तत्तत ताथेई । नख शिख शृंगार किये राधा गन बाँह दिये सखियां सँग नाचत स्वर ताल तान देई ॥ तननन तंबूर गिड गिड धुधकधू मृदंग ताल झम झम झै झांझ बजत बीन बाँसुरी । झननन झनकार होत पायल ठनकार राग गावत कल्याण और नट धनासिरी ॥ कबहूं लै कान्हरा अलाप कभूं सोरठ को परज अरु बिहागरु केदारा आसावरी । कबहूं कै बिभास मालसिरी ललित रामकली भैरहूं बिलावल धुनि ध्रुपद को चावरी ॥ सुन्दर बहुवेष धरे रासको बिलासकरे मुनिजन मनहरे बढ़ो आनँद उहे ठांईं । अद्भुत छबि कहा कहूं किरपा शुकदेव चहूं चरणदास होय रहूं चरणकमल माहीं ॥

रास राग पंचम–सखी दोऊ रसिक प्रीतम पिय प्यारी मिलि खेलत हैं रास छबि कहि न जाई ॥ एककी एक सों सरस शोभा बनी निरखि सब सुरमुनी रहे लुभाई ॥ कोऊ कर बीनलै सुघरसुर तालदै गावत संगीत रीझत रिझाई । थुंकना थुंगना धुधक धूधूकत बजत मिरदंग गति अति सुहाई ॥ तार मुरचंग सुरसप्तसों मुरलिका मधुर धुनि चतु-

रसारंग बजाई । नचत दोउ भावसों अधिक बहुचाव सों तत्तथेई थेई गति लगाई ॥ कबहूं पियप्यारी जू मानकरैं लालसों कबहूं भुजगहि पियाले मनाई । धरत सुन्दर डगन बजत नूपुर पगन हँसत दोऊ लसत दिये गरबाहीं ॥ बढ़ी निशिशरदकी कौन वर्णन करै शेषहू सहसमुख रहे थकाई । कहैं चरणदास शुकदेव किरपा करी ध्यानके माहिं लीला दिखाई ॥

दोहा—बस री बैरन बाँसुरी, तूही ब्रजके माहिं ॥
लगीरहत पियमुख जु तू, पलछिनछाँडतनाहिं ॥
जब तू बाजत तानसूं, ऐ बन्सीबड़ भाग ॥
कसक उठै जियरा जरै, तनमन लागी आग ॥
हमरे पियतैं वशकिये, करत अधर रसपान ॥
कहा टोना कीन्ह्यो जु तैं, बरपाये भगवान ॥
ब्रह्मा भूले वेदधुनि, शंकर छोड़ो ध्यान ॥
रणजितकहसुनिबाँसुरी, इन्द्र तजो अभिमान ॥
छैल छबीलो लाड़िलो, रंग रँगीलो लाल ॥
चरणदासके मनबसो, बंशीधर गोपाल ॥

रागकाफी—मोहन प्यारेकी बंशी बाजैरी । हमकूं जरावत विरह अग्निसों जब अधरनपै राजैरी ॥ लालनमुख लागीरहै निशिदिन नेकन नाहिंन लाजैरी तनकबांसकी बनीबँसुरिया गरबभरी अतिगाजैरी । तैंबश कियो शुकदेव हमारो सुनत कलेजे दाझैरी ॥ चरणदास कहैं अब कहा कीजै तुही भई सिरताजैरी ॥ १ ॥ बंशीवारेसों नेहरा कीन्होरी । काहूको कछु कहो न मानूं यह तनमन वाहि दीन्होरी ॥ भर्मत भर्मत बहुतै हारी भटक भटक जग बीनोरी । आन देवसों

काज न मेरो साँचो प्रीतम चीन्होरी ॥ शोभाको सागर गुणको आगर कुँवर किशोर नवीनोरी । नवल लाडिलो मोहन सोहन सोई बर बर लीन्होरी ॥ प्रभुको छाँड़ भजूं औरनको तो कहियो बुधिहीनोरी । चरणदासकोहै सुखदायी श्यामसुन्दर रंग भीनोरी ॥ २ ॥ वा मुरलियाने हेली मेरे प्राण हरे । जब बाजत पियकेसुख लागी सुनि धुनि तनुकी सुधि बिसरे ॥ ऐसो जप तप कहा कियो है मोहन सोहन लालबरे । जाके रसवश भये श्यामजी ताबिन पलछिन कल न परे ॥ तीन लोक बिच धूम मचाई सुर मुनि ऋषिके ध्यान टरे । चरणदास शुकदेव दयासों मनवांछित सब काजसरे ॥ ३ ॥ या मुरलियाके बोल मेरे हिये कसकै । बाजत मान गुमान गरबले कारे राखो हरिकों वशकै ॥ बाँकी तान बान ज्यों लागत चुभत कलेजेमें धसकै ॥ नेक न होत पियासों न्यारी अधरनके रसके चसकै ॥ कहाकरूं कुछ यतन न दरिखे कोई उपाय न होय सकै । चरणदास शुकदेव पियारे कबहूं बोलैंगे हँसकै ॥ ४ ॥ बंशीबारे तू साडी गली आय जावो । तेरे कारण भई बावरी टुक मुख छबि दिखला जावो ॥ व्याकुल प्राण धरत नहिं धीरज तनकी तपनि सिरा जावो । चरणदास तलफत दर्शन बिन शुकदेव दुःख मिटा जावो ॥ ५ ॥

राग परज—तुम्हारे रूप लोभानी हो । जातबरणकुलखोयके भई प्रेमदिवानीहो ॥ खान पान सुधि सब गई और अकबक बानी हो । तुम्हरे चरणकमल मन मेरो रहो लिपटानी हो ॥ सुंद्रसूरत मोहनी मेरे नैन समानी हो ॥ तुम बिन चैन नहीं दिन रातीसुनि पिय जानीहो ॥ दरश दिखावो सांवरे जबाहिये सिरानी हो । नातर वह गति ह्वै है हमरी मीन ज्यों पानी हो ॥ शुक-

देवो दुख सब हरो काहे बिसरानी हो । चरणदास यह सखी तिहारी मिलजा छानी हो ॥

राग बिहागरा–सुधि बुधि सब गई खोयरी मैं इश्क दिवानी । तलफतहूं दिन रैन सखीरी जैसे जल बिन मीननी ॥ बिन देखे मोहिं कल न परतहै देखत आँख सिरानी । सुधि आये हियमे दो लागे नैनन वर्षत पानी ॥ जैसे चकोर रटत चन्दाको जैसे पपीहा स्वाती । ऐसे हम तलफत पिय दर्शन विरहव्यथाइहिभाँती ॥ जबते मीत बिछोहा हूवा तबते कछु- न सुहानी । अंग अंग अकुलात सखीरी रोम रोम मुरझानी ॥ बिन मनमोहन भवन अँधेरो भरि भरि आवै छाती । चरणदास शुकदेव मिलावो नैन भये मोहिं घाती ॥ १ ॥ भईहूं प्रेममें चूरहो मोहिं दरशनदीजै । हूं तो दासि तिहारी मोहन वेगि खबरिया लीजै ॥ ज्ञान ध्यान और सुमिरण तेरो तुव चरणन चित राखूं । तेरोहि नाम जपूं दिन राती तुव बिन और न भाखूं ॥ तनु व्याकुल जिय रूंधोहि आवत परी प्रीति गल फाँसी । तुमतो निठुर कठोर महाप्रिय तुम को आवै हाँसी ॥ विरह अग्नि नख शिखसूं लागी मनमें कल्पन भारी । गिरोहि परत तनु सँभलत नाहीं रहत भवन में डारी ॥ कै विष खाय तजों यह काया कै तुम्हरे सँग रहसूं । चरणदास शुकदेव बिछोहा तेरोसूं नहिं सहसूं ॥ २ ॥

राग कान्हड़ा–तुमबिन अतिव्याकुल भइया । मोहूंको दर्श दिखावरे मोहन प्यारे चितवन नैन हँसन दशनन की अटक रही हिय मँइया ॥ वह लटकन मटकन चटकन पर मोरमुकुट की छबि छइया । अधर मधुर मुरली सुर गावत टेरि बुलावत गइया । हाहा खाऊं शीश नवाऊं

और परौं तोरि पइयां ॥ वारीहूं वारी मुखऊपर दोउकर लेहुँ बलइयां ॥ अबतौ धीररहो नहिं रञ्चक हो शुकदेव गुसइयां। चरणदास भइ प्रेम बावरी आनि गहो क्यों न बहियां ॥

रागपरज ॥ तुम बिन कैसे जीऊं प्यारे नँदलाल। भूख प्यास कछु लागत नाहीं तनुकी सुधि न सँभाल ॥ कल न परत पल पल अकुलावों छिन छिन छिन बेहाल। विरह व्यथाको रोग बढ़ो है पीर महा बिकराल ॥ कह री करूं कित जाऊंरी सजनी कौन मेटै जंजाल। लटक चलन बाँकी चितवन की चुभत कलेजे भाल ॥ भइ ऐसे यह देह दूबरी सूझ परो नसजाल। तरफतहूं हियमें दों लागी नैना बरत मशा-ल ॥ चरणदास यह सखी तिहारी हो शुकदेव दयाल। आप कृपाकरि दर्शन दीजै कीजै वेगि निहाल ॥

राग बिलावल ॥ लागीरी मोहनसों डोरी। आनि कानि कुलकी तजि दीन्ही कोऊ कैसी बात कहोरी ॥ श्याम सलोने के रँगराती मगन भई कोइ परी ठगोरी। निरखत छबि तनुकी सुधि बिसरी प्रेम प्रीति रसमें भइ बोरी ॥ ऐसो रूप उजारो प्यारो शोभा वर्णत शेष थकोरी। तिनिलोक ब्रह्माण्ड सकल सब जाकी मायासों दरशोरी ॥ कान कुण्डल गलमाल बिराजै शीशमुकुट माथे तिलक फबोरी। नखशिख भूषण करलिये लकुटी कांधे सोहै पीत पिछोरी। कल न परत निशिदिन बिन देखे रोम २ मेरे वही रमोरी। कान्ह सुजान सदा सुखदाई चरणदासके हिये बसोरी ॥

राग झंझोटी ॥ आया मेरा मोहन मदनगोपाल। मानो रङ्क अष्टसिधि पाई निरखत भई निहाल ॥ बलि बलि जा दिया अँग न समादिया मोहिं दरश दियो लाल। कोटि

भानु छबि मुखपर वारूं बेंदा सोहै भाल ॥ अद्भुतरूप अनूप साँवरो सुन्दर नैनविशाल । घूँघरवारी अलकैं झलकैं चिकने लंबे बाल ॥ चितवत तीखी भौंह मरोरत करलियेवेणुरसाल । गावततान आनि बांकी सों चलत अनोखी चाल ॥ श्रीशुकदेव दयाके सागर नटनागर नँदलाल । चरणदास को किरपा करिकै रीझदई उरमाल ॥

राग काफी ॥ लटकरी चालपै मैं वारी वारी जादिया । रैन दिनासानूं ध्यान तुम्हारो मन वच कहूं दीबादिया ॥ कुण्डल कान मुकुट शिर सोहै शोभा अधिक सुहादिया । अलबेली छबि बाँके नैना निरखत नैन लुभादिया ॥ जब बाजी प्यारे तेरी वंशी खान पान बिसरा दिया ॥ भूलगई घर काज साज सब लाज छार उठआ दिया ॥ चरणदास हम भई बावरी फूली अंग न समादिया ॥ राखि शरण शुकदेव पियारो चरणकमल लिपटादिया ॥ १ ॥ कोई समझावोरी मोहनलालकूं । ग्यालबाल सबहीसँग लेकर सूनैंघर धँसिआवे । याकी घाली मोरीआली माखन रहन न पावे ॥ लेकर मटुकी चटदे झटकै गटकै माखन सारो । चटपट चाट पोछ धरि पटकै नट ज्यों सटकै प्यारो ॥ जबहीं जावँ गगरिया भरने ठाढ़ोरहै बिहारी । आगे आकर कांकर मारै भीजै मोरी सारी ॥ जो अपने घरबैठिरहूं तो अँगना धूम मचावै । जो कबहूंकै सोऊं सजनी स्वपनेमें दर्श दिखावे ॥ मेरे पीछे लागो आली जितजाऊं तित डोलै । कहाँ लगि कहूं ढीठता वाकी बात अटपटी बोलै ॥ बांकोछैल महाअलबेलो प्रगट्योहै वृज माहीं । चरणदास शुकदेव पियारो सदारहो या ठाहीं ॥ २ ॥ कोइ आनि मिलावोरी श्यामसुजानको ॥ नन्ददुलारो मोहन सोहन अजब अनोखो

छैला । मदनगोपाल मुकुन्द मुरारी मेरो जीवनप्रान री ॥ नैनन नींद न आवे सजनी कल न परै दिन रैना । व्याकुल भई फिर-तहूं बौरी भूली खान अरु पानरी ॥ जो कोऊ हितु ह्वैहै मेरो आली लालनकी सुधिलावै । दर्श दिखाय हरै सबबाधा मोको दे जीदान री ॥ छिन छिन छिन गति और होत है लगो बिरहको बानरी । चरणदासकी पीर मिटावो सुन्दर सुखके निधान श्री ॥ ३ ॥

रागसोरठ ॥ हमारे घर आयेहो सुन्दर श्याम । तनकी तपत मिटी देखतही नैननभयो अराम ॥ अंगन लिपाऊं चौक पुराऊं फूल बिछाऊं धाम । आनँद मंगलचार गवाऊं हूये पूरणकाम ॥ अब जागे सखि भाग हमारे मन पायो विश्राम । चरणदास शुकदेव पियाकूं हितसों करूं प्रणाम ॥ १ ॥ सो अब घरपायाहो मोहनप्यारा । लखो अचानक अज अविनाशी उघरि गये दृगतारा ॥ झूमरहो मेरे आँगनमें टरत नहीं कहुँटारा । रोम रोम हिय माहीं देखो होत नहीं छिन न्यारा ॥ भयो अचरज चरणदास न पइये खोज कियो बहुवारा ॥ २ ॥ वँहघरी कौनसी लागे मोरे नैना । छोटी उमर भोलापन भारी जानूं एक न बैना ॥ जब लागे तब कछू न जानी अबलाने दुख देना । चरणदास शुकदेवकुं देखे जब पावे सुखचैना ॥ ३ ॥

राग मलार ॥ सो विथा मोरी जानतहो अकि नाहीं । नख शिख पावक विरह लगाई बिछुरन दुख मनमाहीं ॥ दिन नहिं चैन नींद नहिं निशिकूं निश्चलबुधि नहिं मेरी । कासूं कहूं कोउ हितु न हमारो लखलहारि हरितेरी ॥ तनभयो क्षीन दीनभये नैना अजहूं सुधि नहिं पाई । छतिया दरकत

करकै हिये में प्रीति महा दुखदाई ॥ जल बिन मीन पियाबिन बिरहिनि इन धीरज कहु कैसी । पक्षी जरै दवलगी बन में मेरी गति भई ऐसी ॥ तरफतहूं जिय निकसत नाहीं तनुमें अति अकुलाई । चरणदास शुकदेव बिना यो दर्शनद्यौ सुखदाई ॥

रागसोरठ ॥ हमारे नैना दर्श पियासाहो । तनगयो सूखि हाय हियबाढ़ी जीवतहूं वहि आसाहो ॥ बिछुरन थारो मरण हमारो सुखमें चलै न श्वासा हो । नींद न आवै रैनि विहावै तारे गिनत आकासाहो ॥ भये कठोर दर्द नहिं जानै तुमकूं नेक न सांसाहो । हमरी गति दिन दिन औरैही विरह वियोग उदासाहो ॥ शुकदेव पियारे मतरहु न्यारे आनि करो उरबासाहो । रणजीता अपनो करि जानो निजकरि चरणन दासा हो ॥ १ ॥ ऊधोजी कहांरहे भगवान । हम जानी काहूने मोहे मोहन चतुर सुजान ॥ तबसूं नैनन नींद न आवै धीरज धरत न प्रान । उमँगि उमँगि हियरो हुलसतहै वह सुन्दर मुसुकान ॥ योग कथा तुम काह सुनावो हमकूं नाहीं ज्ञान । प्रेम प्रीति की रीति अनोखी कापै होत बखान ॥ ऐसो हितू न कोऊ दीखे जाय सुनावै कान । बाढ़ी व्यथा विरहकी तनुमें सुधिलों कृपानिधान ॥ आवो दर्श दिखावो प्यारे देहु हमैं जी दान । चरणदास शुकदेव श्याम बिन तजों खान अरु पान ॥ २ ॥

राग सारंग ॥ ऊधो क्या जानै हमरे जीवकी । चातक बूँद चकोर चंदकूं ऐसे हमकूं पीवकी ॥ नेह कमान बिछुरनकै खैंची मारि गये हरि तीरकी । साल वियोग हिये बिच खटकै सुधि न लई या पीरकी ॥ चरणदास सखि निशिदिन तलफै ज्यों मछली बिन नीरकी । कहैं कुछ और करैं कुछ औरै आखिर जात अहीरकी ॥

रेखता ॥ फ़रजन्द नन्दजी का दिल बीच आवँदा । बर-पाय खूब नूपुर सुन्दर सुहावँदा ॥ वह साँवला सलोना मह-बूब यार मन । आहिस्ता लटक चाल मटक मेरे आवँदा ॥ टीका संदलका खैंचिकै माथे पै अदासों । बरसर बिराजै अफ-सर हीरे जरावँदा ॥ कुण्डल झलकते हैं दरहरदो गोश में । आवाज बाँसुरीकी शीरीं बजावँदा ॥ नीमा जरीका गलमें कटि काछनी बनी है । पीरे डुपट्टेवाला बीरे चबावँदा ॥ करता है नृत्य नादर घुँघुरू कि झनकसों । तत्तत्ततातथेई थेइ गति लगावँदा ॥ नैनों की आन तानिकै अबरू कमानसूं । पलकों के प्रेम तीर कलेजे चुभावँदा ॥ घायल किया है मेरे तईं उसके इश्कने । शुकदेव चरणदासके जियमें समावँदा ॥

राग हिंडोला ॥ हिंडोला झूलत नन्दकुमार ॥ जोड़ी युग-लकिशोर बिराजै नान्हीं परत फुहार ॥ कंचन खंभ जटित हीरनसों नग लागे तामाहिं ॥ पटुली अधिक अनूपम सोहै डोरी सुरँग सुहाहिं ॥ चहूं ओर बदरा घिरिआये उमड़ घुमड़ घहराहि ॥ गरजत मेघ पवन झकझोरत दामिनि,दमक डुराहिं ॥ गावत गीत मलार सहेली मिल मिल दै दै तार । झोंहिटा देत बिशाखा ललिता आनँद बढ़ो अपार ॥ बोलत मोर पपीहा कोयल दादुर हंस चकोर । हरी भूमि ऋतु भई सुहाई मोर करत अतिशोर ॥ भीजत रंगरँगीलो प्यारो शोभा कही न जाय । चरणदास शुकदेव श्यामकी दोउकर लेत बलाय ॥ १ ॥

झूलत कोइ कोइ संत लगन हिंडोलने । पौन उमाह उछाह धरती शोच सावन मास । लाजके जहाँ उड़त बगले मोर हैं जगहास ॥ हरष शोक दोउ खंभरोपे सुरत

डोरी लाय । विरह पटरी बैठि सजनी:: उमँग आवै जाय ॥ सकल विकल तहाँ देत झोटे विपति गावन-हार । सखी बहुतक रंगराती रँगी पांचौंनार ॥ नैन बादल उमँगि बरसैं दामिनी दमकात । बुद्धिको ठहरावं नाहीं नेह की नहिंजात ॥ शुकदेव कहैं कोई बली झूले शीश देत अकोर । चरणदासा भये बौरे जात वरण कुलछोर ॥ २ ॥

हेली ॥ मो विरहिन की बात हेली विरहिनि हो सोइ जानि है । नैन बिछोहा जानतीरी अरी हेली विरहैं कीन्हो घात ॥ या तनुकूं विरहा लगोरी अरी हेली ज्यों घुन लागो काठ ॥ निशिदिन खाये जातहै देखूं हरिकी बाट ॥ हिरदेमें पावक जलै री अरी हेली तपि नैना भये लाल । आंशूपर आंशूगिरैं यही हमारो हाल ॥ प्रियतम बिन कल ना परै री अरी हेली कल-कल सब अकुलाहिं । डिगीपरूं सत ना रहो कब पिय पकरैं बाहिं ॥ गुरुशुकदेव दया करैं री अरी हेली मोहिं मिलावैं लाल । चरणदास दुख सब भजैं सदारहूं पति नाल ॥ १ ॥ तरसैं मेरे नैनहेली राममिलन कब होयगो । पिय दर्शन बिना क्यों जिऊं री अरीहेली कैसे पाऊं चैन । तीरथ व्रत बहुते किये री अरी हेली चितदै सुने पुरान ॥ बाट निहारतही रहूं छाड दई कुल कान ॥ लगी उमाहेही रहू री अरी हेली सुधि नाहिं-लीनी आय । यह यौवन योंहीचलो चालो जन्म सिराय ॥ विरहादल साजेरहैरी अरी हेली छिन छिन में दुखदेह । मन लालनके वशपरो भई भारवसी देह ॥ गुरुशुकदेव कृपा करोजी अरी हेली दीजे विरह छुटाय । चरणदास पियसूं मिलैं शरण तुम्हारी धाय ॥ २ ॥ तनुकूं कछुन सुहाय हेली प्रीतिलगी बन-

श्यामसूं । जो सुखहै संसारकेरी अरी हेली सो सब दिये बहाय ॥ भवन तजो अरु धन तजो री अरी हेली तजी कुलन की रीत । मान बड़ाई सब तजी रहा एक हरि मीत ॥ भूख प्यास निद्रा तजी री अरीहेली तजिदियो वाद विवाद । राग रोष दोऊ तजे तजो पांचको स्वाद ॥ बहुतडरे सकुचीरहे री अरी हेली कहै न काहू बात । लगीरहे हरि ध्यान में ऐसे रैनि बिहात ॥ श्रीशुकदेव भले कहीरी अरी हेली बारम्बार सँभार । चरणदास हो श्यामकी वही निवाहनहार ॥ ३ ॥ मोमन कछु न सुहाय हेली प्रीतिलगी प्यारेलालसूं । हँसि हँसिके टोना कियोरी अरी हेली दै गयो मुरली गहाय ॥ जबही सूं चेटक लगोरी अरीहेली ढूंढूं कुंजनमाहिं । बौरीहो दौरी फिरूं वह छबि दीखै नाहिं ॥ मोहिं मिलावे सांवरो री अरीहेली ताके बलि बलि जावँ । जन्म जन्म दासीरहूं कबहूँ न छोडो पावँ ॥ है कोइ पूरी रामकीरी अरीहेली मोहिं बतावे ठौर । जहाँ विराजे श्यामजी वह बड़भागी पौर ॥ चरणदास घायल भई री अरीहेली मोहन मारो बान । श्रीशुकदेव दिखाइये मेरे जीवन प्रान ॥ ॥ ४ ॥ वह छबि कहूं बखान हेली जा छबिसों नैनालगे । हित्तू देखि तासूं कहूंरी अरीहेली और न पावें जान ॥ मोर मुकुट माथे दियेरी अरीहेली कुण्डल शरवण माहिं । अलकैं बल खाई रहैं योगी देखि लुभाहिं ॥ भौंहन मधि बेंदा दियेरी अरीहेली सुन्दर नैन विशाल । मोतीनासा सोहना अरु वैजन्ती माल ॥ नीमों अंग पीरो सुभोरी अरीहेली घूम घुमारो फेर । लाल खराऊं पावँ में मोमन रास्वत घेर ॥ पहुँचनमें पहुँची कड़ेरी अरीहेली अँगुरिन मुँदरीछाप । अधरनमें मुरलीधरे गावत रीझत आप ॥ चरणदास तिनकी भईरी

अरीहेली तन मन डारोवार । गुरुशुकदेव सराहिया बुरोकहो परिवार ॥ ८ ॥ वंशीवटकी छाहिं हेली लाल लाड़िली मैं लखे । दोउ खड़े गावैं हँसैंरी अरीहेली अरु डारे गलबाहिं ॥ मोर मुकुट माथे दियेरी अरी हेली सुंदर नैन विशाल । पीताम्बर पट सोहनो करमुरली उरमाल ॥ वाके विराजैं चन्द्रिकारी अरीहेली लील वसन जरतार । नखशिख भूषण सोहने अरु फूलनके हार ॥ गुरु शुकदेव बताइयारी अरीहेली जब हमलिये पिछान । चरणदास तिनकी भई लगोरहैं वहि ध्यान ॥ ६ ॥

अथ सन्त शूरमाका अंग ॥

दो०—सन्त समान न शूरमा, कहैं रणजीत विचार ॥
टेक गहैं सम्मुख चलैं, बांधि प्रेम हथियार ॥

रागसोरठ ॥ ना कोई सन्त समान न शूरा । मोह सहित सब सेना मारी ऐसे सावँत पूरा ॥ क्षमा कि ढाल गही कर अपने बांधे सत तरवारा । कर्म धर्म्मके दलको पेलै पल पल बारम्बारा ॥ सुरत को तीर हृदय को तरकस ध्यान कमान बनावे । प्रेमहाथसूं खैंचनलागे चोट निशाने लावै ॥ बुद्धि विवेक कटारी बांधै वचन विलास कि बरछी । सतपुरुषोंके हियरे बीधै कहि कहि बतियां तिरछी ॥ चितमें चाव चौगुनो उनके सुनसुन अनहद तूरा । अगम पंथसों पग न डिगावै होयजाय चकचूरा ॥ मन हुलास आशधर पीकी सुनत खेतमें धावै । चरणदास शुकदेव कहत हैं अमरलोकपद पावै ॥

राग सोरठ वा आसावरी ॥ साधू पै जग है सोइ शूरा । काके मुखपर नूर है जब बाजै मारू तूरा ॥ कलँगी अरु गजगाह

बनावे इनका परन दुहेला ॥ सांवत वेष बनाय चलतहै यह नहिं सहज सुहेला ॥ या बानेको नेम यहीहै पगधारि फिरि न उठावै । जो कछुहोय सो आगेहि आगे आगेहीको धावै ॥ रणमें पैठि झड़ाझड़ खेलै सम्मुख शस्तर खावै । खेत न छोड़ै ह्वाईं जूझै तबहीं शोभा पावै ॥ गुरु शुकदेव दियो है हेला ऐसा होय सो आवै । चरणदास बाना संतनका तौले शीशाचढ़ावे ॥ १ ॥ साधो टेक हमारी ऐसी । कोटि यतनकरि छूटै नाहीं कोउकरौ अब कैसी ॥ यह पगधरो संभाल अचल हो बोल चुके सोइबोले । गुरु मारगमें लेन न दीन्हो अब इत उत नहिं डोले ॥ जैसे शूर सती अरु दाता पकरी टेक न टारैं । तनकरि धनकरि मुख नहिं मोडैं धर्म्म न अपनो हारैं ॥ पावक जारो जलमें बोरो टूक टूक करिडारो । साध संगति हरि भगति न छाँडूं जीवन प्राण हमारो ॥ पैज न हारूं दाग न लागे नेक न उतरै लाजा । चरणदास शुकदेव दयासूं सब विधि सुधरे काजा ॥ २ ॥

राग सारंग ॥ हमारे राम नामकी टेक टारी ना टरे । लाखकरो कोइ कोटि करोजी काहू तैं कुछ ना सरे ॥ ज्योंकामी कूं तिरिया प्यारी ज्योंलोभीको दाम । अमलदारकूं अमल पियारो ऐसे हमकूं राम ॥ दुष्टछुटावें गहि गहि पकरों हारिलकी लकडी भई । अब कैसे करि छूटै मोसों राम राम तन मन मई ॥ ज्यों प्रहलाद पैज हढ़ कीन्हीं हिरणाकुशसे बहुअरे । उबरो संत असुर गहिमारो परगट हो हरि आखरे ॥ गुरु शुकदेव सहाय करी है अब पग पाछे क्यों परें । चरण हिदास वचन नहिं मोडै शूरसती सूपै टरें ॥ १ ॥ साधो टेकगई जाको सबगयो । लाजगई अरु काजगये सब वचन धर्म कछु

ना रह्यो ॥ जगमें हांस फांस हियमाहीं कायरपन यों दहि गयो । अब पछिताये होत कहा है वह पान पतेरो बहिगयो । पैज तजी मुखकारो हूवो धिकधर्म जीवन तासको । बोझगयो ओछेकी संगति यह प्रताप कुबासको ॥ चरणदास शुकदेव कहै यों टेक न देवो शिर देवो । बार बार नरदेह न पइये अपयश जगमें क्यों लेवो ॥

राग सोरठ ॥ साधो वेष वही जामें टेक है । टेक नहीं तौ कहा भरोसो टेक बिना नरतेकहै ॥ टेक विना कैसी सतवंती टेक बिना नहिं शूरमा।टेक विना दाता भी नाहीं टेक बिना योगी बूबना ॥ टेक विना नहिं भक्ता हरिको टेक बिनानहिं सिद्धि है । टेक बिना सब भर्मत डोलैं टेकबिना नहिं ऋद्धि है ॥ साधु संत अरु वेद कहत हैं टेक पकरि चढ़ु धामकूं । चरणदास शुकदेव बतावैं टेक मिलावै रामकूं ॥ १ ॥ साधो जो पकरी सो पकरी । अब तौ टेक गही सुमिरण की ज्यों हारिल की लकरी ॥ ज्यों शूराने शस्तर लीन्हों ज्यों बनिये ने तखरी । ज्यों सतवंती लियो सिंधौरा तार गह्यो ज्यों मकरी । ज्योंकामी कूं तिरिया प्यारी ज्यों किरपिणकूं दमरी । ऐसे हमकूं रामपियारे ज्यों पालककूं ममरी । ज्यों दीपककूं तेल पियारो ज्यों पावककूं समरी । ज्यों मछलीकूं नीर पियारो बिछुरे देखै यमरी ॥ साधोंके सँग हरिगुण गाऊं ताते जीवन हमरी । चरणदास शुकदेव दृढ़ायो और छुटी सब गमरी ॥ ॥ २ ॥ अरेले गुरुके वचन चितधररे । छिन छिन तेरी आयु घटत है वेगि सँभारो घररे ॥ शील क्षमायत दृढकरि राखो गर्व गुमान निवारो । पांचोइन्द्रिय वशकरि अपने मन गनीमको मारो ॥ काया कोटि बुहारि युक्तिसूं सतसिंहासन

धरिये । तापर बैठि अमर पदवी लै राज अभैपुर करिये ॥ सबपर अमल चलै जब तेरो तो सम और न कोई । सेवक साहिब लोहा कञ्चन बूँद समुन्दर होई ॥ विघ्न कलेश आपदा नाशै निर्मलआनँद पावै । चरणदास शुकदेवदयासूं रहनि गहनि समुझावै ॥३॥ जब गुरुशब्द नगारे बाजैं । पांच पचीसों बह्मवासीं सुनिकै डङ्काभाजैं ॥ दृढ़ दस्तकले ज्ञान सजावल जाय नगरके माहीं । हरिके धाम भजनकारि मांगैं चित्त चौधरी पाहीं ॥ कानोगोय लोभके खोटे छलबल पाहीं झूठे । काम किसानरु मोह मुकद्दम सबै बांधिकरि लूटे ॥ तृष्णा आमिल मदको मातो पकरि गांवसूं काढ़ै । मन राजा को निश्चल झण्डा प्रेमप्रीति हित गाड़ै ॥ सुबुधि दिवान शीलको बकसी यतको हाकिम भारी । धर्म्म कर्म्म सन्तोष सिपाही जाके आज्ञाकारी ॥ साँच कारिन्दा औ पटवारी धीरज नेम विचारै । दया क्षमा अरु बड़ी दीनता पूरीजमा सँभारै ॥ मगन होय चोकस कण करिकै सुमतिमेवडी मापै । दर्शन द्रव्य ध्यानको पूरण बांटापावै आपै ॥ श्रीशुकदेव अमल करिगाढ़ो सुबस देश वशावै । चरणदासहूं तिनको नायब तत परवाना पावै ॥४॥ जो नर इकछत भूप कहावै । सतसिंहासन ऊपर बैठैय तही चँवर ढुरावै ॥ दया धर्म्म दोउ फौज महालै भक्तिनिशान चलावै । पुण्य नगारा नौबति बाजै दुर्जन सकल हलावै ॥ पाप जलाय करै चौगाना हिंसा कुबुधि नशावै । मोह मुकद्दम काढि मुल्कसों लावै रागबसावै ॥ साधन नायब जित तित भेजै दे दे संयम साथा ॥ राम दुहाई सिगरै फेरै कोई नउठावै माथा ॥ निर्भय राजकरै निश्चल है

वैरे। आपहि ब्रजकी वनिता होकर बनको दौरी आवैरे॥ आपहि गोपी कान्ह विराजे आपहि रास रचावैरे। अन्तर्द्धान होय फिर आपहि आपहि ढूंढ़न धावैरे॥ आपहि व्याकुल अप देखनकूं लीला प्रेम बनावैरे। परगट होय सबन सुखदेवै आपहि रंग बढ़ावैरे॥ भोर भये जब खेल मचावै आप आप रहजावैरे। कबहूँ एक अनेक कभी हैं विधि निषेध गतिभावैरे॥ सतचितआनँद रूप सदाही शुकदेवहो समुझावैरे। चरणदासहो समझि समझि करि आपहि आनँद पावैरे॥

होरी राग धनाश्री॥ साधौ बुद्धि विवेक सँभारि होरी खेलिये। सांख्ययोगकी युक्तिसों कीजै नित्यअनित्य विचार। माया सकल निवारि कैरे आतम रूप निहार॥ पांचतत्त्व तीनोंगुण परगट इनको दोदिन फाग। इकरस सत पद जानि लैरे ताहीसों मन पाग॥ निश्चय चोवा लाइयेरे भर्म गुलाल उड़ाय। देह कर्मके रंगकीरे गागर दे ढरकाय॥ जीवन मुक्त जो फगुवा पइये गुरुके चरणन लाग। जो कोई ऐसी होरी खेलै जाके ऊंचे भाग॥ चरणदास कहैं शुकदेव बताई हमहूं खेले जाग। प्रियतम प्रियतम जित तित देखो द्वेष गयो अरु राग॥ १॥ सखीरी ततमतले संग खेलिये रस होरीहो। निर्गुण निज निर्धार सरस रस होरी हो॥ सखीरी शील शृङ्गार सवाँरी ये रस होरी हो। दुबिधा मानि निवार सरस रस होरी वो॥ सखीरी रहनी केसर घोरिये रस होरी हो॥ बहुरि न ऐसो बार सरस रस होरी हो। सखीरी सतगुण कारि पिचकारि ले रस होरी हो। तमरजके भर मार सरस रस

होरीहो ॥ सखीरी गर्व गुलाल उड़ाइये रस होरी हो । मोह मटुकिया डारि सरस रस होरी हो ॥ सखीरी झिल मिल रंग लगाइये रस होरी हो । चंदन चरच विचार सरस रस होरीहो ॥ सखीरी निश्चल सिद्ध समाइये रस होरीहो । रिमझिम झमक फुहार सरस रस होरी हो ॥ सखीरी शून्य नगरमें नृत्तिये रस होरी हो । अनहद झनक झिंगार सरस रस होरी हो ॥ सखीरी सैन सुरति सों समझिये रस होरि हो । सोहं ब्रह्म खिलार सरस रस होरी हो ॥ सखीरी पांच पचीसौ रल मिले रस होरी हो । मंगल शब्द उचार सरसरस होरी हो ॥ सखीरी अलख पुरुष फगुवा लहो रस होरी हो । आपाआप बिसार सरसरस होरीहो ॥ चरणदास रमइया रमि रह्यो रस होरीहो । दरशोहै फाग अपार सरस रस होरी हो ॥२॥ गुरु दूती बिना सखी पीव न देखो जाय । भावै तुम जप तप करि देखो भावै तीरथ न्हाय ॥ पांच सखी पचीस सहेली अति- चातुर अधिकाय । मोहिं अयानी जानिकै मेरो बालम लियो लुकाय ॥ वेद पुराण सबै जो ढूँढे सुरति स्मृति सब धाय । आन धर्म और क्रिया कर्ममें दीन्हों मोहिं भर्माय ॥ भटकत भटकत जन्मै हारी चरण सखी गहै आय । शुकदेव साहब किरपा करिकै दीन्हों अलख लखाय ॥ देखतही सब भ्रम भय भागे शिरसूं गई बलाय । चरणदास जब प्रीतम पायो दर्शन किये अघाय ॥ ३ ॥ हरि पीव पाइया सखी पूरण मेरे भाग । सुखसागर आनन्दमें मैं नित उठि खेलूं फाग ॥ चोवा चन्दन प्रीतिकै सखी केशरि ज्ञान घसाय । पुष्प वाससूं जो वह झीनो ताके अंग लगाय ॥ बेरंगीके रंगसूं सखी गागर लई भराय ।

शून्य महलमें जाय के सखी पियपर दई ढरकाय ॥ भरम गुलाब जब करलियो सखी बालम गयो दुराय । सतगुरुने अञ्जन दियो तब सम्मुख दरशे आय ॥ ताली लाई प्रेमकी सखी अनहद नाद बजाय। सर्वमयी पिय पायके हम आनँद मंगल गाय ॥ रलमिल प्रियतम ह्वै गये सखी दुई गई सब भाग। चरणदास शुकदेव दयासूं पायो अचल सुहाग ॥ ४ ॥ मैंतो ह्वां खेलूंगी जाय जित मेरो पिया बसै। व्याधि उपाधि न संशय कोई आनन्दहि आनँद लसै ॥ नितही फागन इकरस होरी खण्डित कबहुँ न होय। मुक्ति पदारथ फगुवा पइये आपा सरबसखोय ॥ जिनके रसिया शिव ब्रह्मादिक खेलत चावहिचाव। ऋषि मुनि देवत खेलत निशिदिन कारि कारि बहुतक भाव ॥ भाग्य बडे उनहींके जानो वा पदलागे धाय। ज्ञान ध्यानके रँगमें डूबे सोई पहुँचे जाय ॥ गुरुशुकदेव बताई हमको जबसों बाढी प्रीति। चरणदासहू अतिललचाये सुनि सुनि ह्वांकी रीति ॥ ५ ॥ साधो प्रेम नगरके माहिं होरी होय रही। जबसूं खेली हमहूं चित दै आपनहूंको खोयरही ॥ बहुतन कुल अरु लाज गवांई रहो न कोई काम। नाचि उठैं कभी गावन लागैं भूले तन धन धाम ॥ बहुतनकी मति रंग रँगीहै जिनको लागो प्रेम । बहुतनको अपनी सुधि नाहीं कौन करै ऐसो नेम ॥ बहुतनको गद्गदही वाणी नैनन नीर ढराय। बहुतनको बौरापन लागो ह्वांकी कही न जाय ॥ प्रेमीकी गति प्रेमी जानै जाके लागी होय। चरणदास उस नेहनगरकी शुकदेवा कहि सोय ॥ ६ ॥ कोई जानै सन्त सुजान उलटे भेदकूं। वृक्ष चढो मालीके ऊपर धरती चढी अकास।

नारि पुरुष विपरीत भये हैं देखत आवै हास ॥ बैल चढो शंकरके ऊपर हंस ब्रह्मके शीश । सिंह चढो देवी के ऊपर गुरु हीकी बखशीश ॥ नाव चढी केवटके ऊपर सुतकी गोदी माय । जो तू भेदी अमर नगरको तौ तू अर्थ बताय ॥ चरणदास शुकदेव सहाई अब कहा करि है काल । बाँबी उलटि सर्पमें पैठी जबसूं भये निहाल ॥ ७ ॥

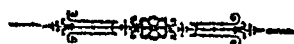
इति श्रीस्वामीचरणदासकृतशब्दसम्पूर्णम् ।



श्रीक्षीरसागरनिवासिने नमः ।



अथ भक्तिसागरप्रारम्भः ।



छप्पय ।

श्रीव्यासको पुत्र तासुको दास कहाऊं । सदारहूं हरि शरण और ना शीश नवाऊं ॥ साधनसूं यह चहूं मोहिं यह बात दृढ़ावो । माया जाल संसार तासुसों वेगि छुटावो ॥ अहो श्रीव्रजनाथ विनय सुनि लीजिये । चरणदासको भक्ति कृपा करि दीजिये ॥ १ ॥ गुरु ईश्वर गुरु ईशरीझ गुरु राम बतावैं । गुरु काटैं यमफाँस विपति सब अघै नशावैं ॥ गुरुदेवनके देव भेव ब्रह्मादि लखावैं । गुरु भवसागर तार पार वह लोक बसावैं ॥ चरणदास यह जानिकै सतसंगति हरिको भजो । शुकदेव चरण चितलायकै सो झूठकानि दुबिधा तजो ॥ २ ॥ पग तब होवैं शुद्ध साधुके मगको ध्यावै । हस्त शुद्ध तब होयँ दोऊ कर शीश नवावै ॥ नैन शुद्ध जब होयँ साधुके दर्शन पावै । रसन शुद्ध तब होयँ रामगुण मुखसों गावै ॥ भनै चरणदास सब शुद्ध हो जब चरण परस गुरुदेवके । वे आतम तत्त्व विचार देखकर दर्शन अलख अभेवके ॥ ३ ॥

दोहा—दुखमेटन सुखकेकरन, चरणदास वेसाध ॥
दाता ज्ञान विज्ञान के, देवैं मता अगाध ॥
साध मुक्ति नहिं चहत हैं, सिद्ध न चाहत साध ॥
स्वर्गलोक नहिं चहत हैं, जिनका मता अगाध ॥

चौ०—इड़ा पिंगला सुखमन धारो। आसन वज्र नागिनी टारो॥ द्वादश अंगुल होय बेधि षटचक्कर लीजे। जब बाजे अनहद तूर जहां मन निज कर दीजे॥ खेचरी मुद्रा त्रिकुटी आवै। अमृतापियै परम सुखपावै॥ मेरुदण्डको प्राण चलावै। शून्य शिखर जब नगरी पावै॥ जा नगरीमें चन्द्र न भान। पहुँचै साधू चतुरसुजान॥ जाति पाँति जहँ नाम न नाता। श्वेत श्याम पीता नहिं राता॥ योग यज्ञ तप जहां न दाना। तीरथ वर्त्त जहां नहिं न्हाना॥ किरिया कर्म जहां नहिं पूजा। मैंहूं तू नहिं एक है न दूजा॥ जहां न सांझ द्योस नहिं राता। एकैब्रह्म अखण्ड विधाता॥ चरणदास रामकी घाटी। पहुँचै गुरुमत शूरा। ओछी बुद्धि बाद बहुठानै करणी करै सो पूरा॥

छप्पय॥ बैठि गुफाके मध्य योगकी युक्ति विचारै। आप अकेलो रहै औ ना मनुष निहारै॥ चारिबारि नितकरै जाप ॐकार अराधै। सूक्ष्मकरै आहार ओगरो पतलो साधै॥ आसन पद्म लगायकै सीधो राखै मेर। ठोढीहिये लगाइये पलक झाँपकरि हेर॥

दोहा—कुंभक आठ प्रकारके, तिनमें उत्तम एक॥
केवल कुंभक जानिये, साधै ताहि विशेख॥
त्रिकुटीमें तीरथ अगम, तिरवेणी जेहि नाम॥
न्हाय योगकी युक्तिसूं, पूरण हो सब काम॥
रणजीत कहैं जहाँ न्हाइये, त्रिकुटी तीरथ धाम॥
नित परवी जहाँ होतहै, भजनकरो निष्काम॥

चौ०—जा तीरथको पवन न लागै। जा तीरथमैं जन अनुरागै॥ जा तीरथमें रतन अनेका। पूरे गुरुसों मिलमिल देखा॥ वा तीरथमें जो कोइ न्हावैं। भवसागरमें बहुरि न आवै॥

जहाँ न चन्द्र सूर नहिं तारे। गुरुगम पहुँचैं अति मतवारे ॥
जा तीरथका बँधा जो नीर। उज्वल निर्मल गहिर गँभीर ॥
ब्रह्मा विष्णु जहाँ त्रयदेवा। योग युक्तिमें लावैं सेवा ॥
बारह मास दामिनी दमकै। सोन पटीला जुगनू झमकै ॥
रणजित मीत जहाँ वासा कीजै। नित अस्नान महासुख लीजै ॥

छप्पय ॥ अमरी बजरी साध वायु सरने नहिं पावै। द्वादश अंगुल प्राण सुरतदे ताहि घटावै ॥ मौन गहै नितरहै अल्प सूक्षम सो बोलै। एकबार आहार जँभाई कबहुँ न खोलै ॥ बांधै सो जाय दृढ़ छींकको अनहद धुनि अति गाजई। भन चरणदास शुकदेव बल सुयोग युक्ति इमि साधई ॥

दोहा—मन पवना वश कीजिये, ज्ञान युक्तिसों रोक ॥
सुरति बांधि भीतर धसै, सूझै काया लोक ॥
मन हिरदेमें रहत है, पवन नाभिके माहिं ॥
इन्द्रियरोकै ये रुकैं, और कछू विधि नाहिं ॥

छप्पय ॥ सूक्ष्मकरै अहार जीति धरणी जबलेई। नीरजीत जबलेय बिन्द जाने नहिं देई ॥ मोह लोभ जबतजै अग्निको जीति मिलावै। पवन जीति जब लेय गगनको बाध चलावै ॥ अरु हर्ष शोक समकरि गनै पांच जीत एकै करै। भन चरणदास साधुन गहै है प्रकाश कारज सरै ॥

दोहा—गगन मध्य जो कमलहै, बाजत अनहद तूर ॥
दलहजारको कमलहै, पहुँचै गुरु मत शूर ॥
गगनमँडलके कमलमें, सतगुरु ध्यान निहार ॥
चरणदास शुकदेवपरशै, मिटैं सकल विकार ॥
सहस्रदलके कमल में, रूप अगम आपार ॥
सोहं सोहं जाप सहजे, होत एक हजार ॥

छप्पय॥ नौ नाड़ीकी खैंच पवनलै उरमें दीजै। बज्जर ताला लाय द्वार नौबन्ध करीजै॥ तीनौं बन्ध लगाय अस्थिर अनहद आराधै। सुरति निरतिका काम राह चल अगम अगाधै॥ शून्य शिखर चढ़िरहै दृढ़ जहां जाय आसनकरै। भन चरणदास ताड़ीलगै सो राम दरश कलिमल हरै॥ १॥ चौथा पद निर्वाण धाम बेगमपुर कहिये। गुण अतीत जहँ राम निरखि नैनन सुख लहिये॥ अद्वै रूप अखण्ड मण्ड मण्डल बहुबंका। जहां काल नहिं ज्वाल शब्द अति उठत निशंका॥ निज पारब्रह्म चौरी रची तहँ शिव सहित फेरी करैं। भन चरणदास चारौं मुक्ति सों हाथ जोरि पायँनपरैं॥ २॥ मूल कमलमें खेलि पियाकूं देखन चलिये। उलटि वेद षटचक्र जाइ सतवेंसे मिलिये॥ प्राण अपान मिलि राह पच्छिमकी लीजै। बंक नाल करि शुद्ध प्राणलै तामें दीजै॥ मेरु दण्ड चढिजाय जब लोक लोककी गम परै। भन चरणदास ब्रह्मण्डमें ब्रह्मदर्शी दर्शन करै॥ ३॥

दोहा—चरणदास यहिविधि कही, चढ़िबेको आकाश॥
शोधि साधि साधन अगम, पूरण ब्रह्म विलाश॥

छप्पय॥ दल असंख्यको कमलरूप जहँ सत्ताबिराजै। अनंतभानुपरकाश जहां अनहद धुनि गाजै॥ सुन्दर छबि अति हंस संत जन आगे ठाढ़े। जहँ पहुँचे कोइ शूरबीर नीशान जो गाड़े॥ कमल मध्य जो तख्त है शोभा अपार वरणूं कहा। कहैं चरणदास उस तख्तपर आदिपुरुष अद्भुत महा॥ १॥ छत्र फिरत नित रहत चँवर ढोरत जहँ हंसा। जहँ दर्शन कर शिष्य मिटै युग युगका संसा॥ आवागमन है रहत मरण जीवन नहिं होई। आनि मिले जब चार मुक्ति कहियत है

सोई ॥ जहँ अमर लोक लीला अमर फल अनेक तहँ पावई। भन चरणदास शुकदेव बल सु चौथापद इमि गावई ॥ २ ॥ जहां चन्द्र नहिं सूर जहां नहिं जगमग तारे। जहां नहीं त्रय-देव त्रिगुण माया नहिं लारे ॥ जहां वेद नहिं भेद जहाँ नहिं योग यज्ञ तप। जहाँ पवन नहिं धरणि अग्नि नहिं जहाँ गगन अप ॥ अरु जहाँ रात नहिं दिवस है पाप पुण्य नहिं व्यापई। आदि अन्त अरु मध्यहै कहैं चरणदास ब्रह्म आप-ई ॥ ३ ॥ जहाँ काल नहिं ज्वाल भर्म नहिं तिमिर उजारा। जहाँ राग नहिं द्वेप जहाँ नहिं कर्म अचारा ॥ जहाँ काम नहिं क्रोध लोभ नहिं मोह नरेशा। जहाँ मित्र नहिं शत्रु जहाँ नहिं देश विदेशा ॥ अरु चरणदास इक ब्रह्महै और न दूजा कोई तहाँ। भया जीव सों ब्रह्म जब योग युक्ति पहुँचै जहां ॥ ४॥ जहँ आतम देव अभेव सेव कबहूं न करावै। इच्छा दुईन द्रोह कर्म नहिं भर्म सतावै ॥ जहँ जाप थाप नहिं आप तहाँ नहिं रूप न रेखा। जासु जाति नहिं पाँति नारि नहिं पुरुष विशेखा ॥ अरु पारब्रह्म पूरणसदा है अखण्ड नहिं खण्डिता। भन चरणदास ताड़ी लगै सो शून्य शिखरमें मण्डिता ॥ ५॥

चौ०—ब्राह्मण सो जो ब्रह्म पिछानै। बाहर जाता भीतर आनै ॥ पांचौ वशकरि झूठ न भाखै। दया जनेऊ हिरदयराखै ॥ आतम विद्या पढ़ै पढ़ावै। परमातमका ध्यान लगावै ॥ काम क्रोध मद लोभ न होई। चरणदास कहैं ब्राह्मण सोई ॥

छप्पय ॥ हुतो आपमें आप सृष्टि नहिं देत देखाई। ज्यों पाला जलमाहिं धरणिपर लीक लिखाई। भाँड़े माटीमाहिं कनकमें भूषण राजें ॥ तरुवर बीरजमाहिं यथा फल फूल बिराजें ॥ गुण रूप नाम सब ब्रह्ममें ॐ कार तासूं भई।

चरणदास शुकदेव सो वही ब्रह्म माया वही ॥ १ ॥ पांचतत्त्व तेहि माहिं तीनिगुण जुदे न होई। चित बुधि इन्द्रिय तहाँ पाप अरु पुण्य समोई ॥ विष अमृत तेहि माहिं भूत अरु देव मुनीश्वर। फूल शूल तेहि माहिं यमन अवतार ऋषीश्वर ॥ चरणदास शुकदेव भज ये सब दरशैं दृष्टिअब। निराकार निर्गुण कहत भूले भटके लोग सब ॥ २ ॥

सवैया ॥ जैसे जलमें जल कुंभ बसै जल भीतर बाहर पूरिरह्यो है। तैसे जलमें जल पाला बँध्यो जल फूटिगयो जल आप भयो है ॥ ऐसे जगमें वह व्यापिरह्यो किनहूं कर लोचन नाहिं गह्यो है। चरणदास कहैं दुइ दूरि करो सगरो-जग एकहि डोरि गुह्यो है ॥ १ ॥ जैसे पट मैलको संग किया जुगयो सब श्वेत भयो तनुकारो। श्यामस्वरूप अकाश भयो जब धूम धुवाँ जो भयो भौ भारो ॥ माया पिशाचको संग कियो जब जीव भयो करता करतारो। शुकदेवकहैं दुई दूरकरो चरणदास सभी इकसूत निहारो ॥ २ ॥

कबित्त ॥ दीसत न वारपार पूरि रह्यो जगतसार ऐसोही अटल नेक टारो ना टरतहै। ताको तौ नहिं नाश ठौर ठौर रह्योभास जैसे रहत पुष्पवास पासही रहतहै ॥ लोचन रह्यो समाय वेदहू सकै न गाय पुस्तक लिखो न जाय जारो ना जरतहै। शुकदेवजीकी दया चरणदास को प्रकाश भयो जैसे मैं खोजि पायो पायों ना परतहै ॥ १ ॥ कई कोटि दुर्गा जहां हाथ जोरे रहैं कई कोटि शम्भू चहां ध्यान लावैं। कई कोटि ब्रह्मा जहां खडे अस्तुतिकरैं शेष नारद नहीं पारपावैं ॥ वेद यशही कहैं भेद कछु ना लहैं पंथकी बात वेभी बतावैं। चरण हीदासकी आश जितहीरहो कोटि तेंतीसहू शीश नावैं ॥ २ ॥

रामहीदेव अरु राम देवल भयो रामही रामकी करै पूजा। रामही धर्म अरु भर्म भै रामही रामही ज्ञान अज्ञान सूझा॥ रामही एक अनेकहैं रामही राम परगट भयो रामगूझा। चरणदास शुकदेव सबरामही रामहैं शोधि निश्चय किया नाहिं दूजा॥ ३॥ रामही बीज अरु रामही पेड़हैं रामही फूल अरु राम पाती। रामही भोगिया रामही योगिया राम जप तप करै दिवस राती॥ रामही नारि अरु रामही पुरुषहै राम मा बाप अरु पूत नाती। शुकदेव चरणदास सब रामही रामहै रामही दीवला राम बाती॥४॥ रामही चोर अरु रामही ठग भयो राम बटमार अरु रामघाती। रामही साधुयत सतभयो रामही राम रक्षाकरैं रामसाती॥ रामही देह इंद्रिय भयो रामही मन भयो रामही सुरतमाती। गुरु शुकदेव चरणदास चेलाभयो रामही सीप अरु राम स्वाती॥५॥ आपही वेद अरु आप पंडित भयो आपकित्तेब अरु आपकाजी। आप काशी भयो आप जाती भयो आप मक्का भयो आपहाजी॥ आपही बाँग अरु आप मुल्ला भयो आप पण्डा भयो घण्टबाजी। चरणदास शुकदेव हरि मुरीद मुरसिद भयो मुक्ति औ बंध सब आप साजी॥६॥ ब्रह्मही आदि अरु ब्रह्मही मध्यहै ब्रह्मही अन्तकूं वेदगावै। ब्रह्मही एक अनेकहै ब्रह्मही आपनी दृष्टिमें आप आवै॥ होय दूजा कोई नाहिं ऐसी भई आपही आप आनँद बढ़ावै। ब्रह्म शुकदेव चरणदास भी ब्रह्महै ब्रह्मही ब्रह्मका ध्यान लावै॥७॥

राग अरिल्ल॥ आतम ज्ञान बिना नहिं मुक्ता वेद भेद सब देखा जोय। ब्रह्मा शेश महेश पूजकारि वस वह लोक रहत नहिं सोय॥ जल पाहन अरु भूत भवानी पूज पूज भर्मो सबकोय। चरणदास तताविरला जाने आवागमन दुख बहुरि न होय॥

सवैया ॥ न उर्ध्वबाहु न अंगविभूति न धूनीलगाय जटा-शिरधारूं । न मूड़ मुड़ाय फिरूं वनही वन तीरथबर्त्त नहीं तनगारूं ॥ उलट लखों घटमें प्रतिबिम्बसों दीपकज्ञान चहूं दिशि जारूं । चरणदास कहैं मनहीं मनमें अब तूही तुही करि तोहिं पुकारूं ॥

कवित्त ॥ तारी जो लगाय देखो वेद अर्थ पाय देखो भक्ति बिना अखिल ईशकोहू नाहिं पायोहै । दशौदिशाधाय देखो तीरथहू अन्हाय देखो भटको सब प्रेम बिना स्मृतियो गायो है ॥ हिवारे तनुगार देखो करवतसीरमारदेखो ऐसी ऐसी बातन चौरासी भर्मायो है । भाषै चरणदास शुकदेवके प्रताप सेती आदि पुरुष भक्तहेतु नन्दगेह आयो है ॥ १ ॥ मूड़हू मुड़ाय देखो जटाहू रखाय देखो सेवरा कहाय देखो भेदहू न पायो है । श्रवण चिराय देखो नादहू बजाय देखो धूरहू लगाय देखो भर्म सबै छायोहै ॥ धूम्रपान झूल देखो कोई भर्मभूल देखो मोकूं हरिनाम नीको गुरू जो बतायोहै । भाषै चरण-दास शुकदेवके प्रतापसेती आदिपुरुष भक्तिहेतु नंदगेह आयोहै ॥ २ ॥

सवैया ॥ भूलत भर्मत कूर फिरै इन बातनमें कहकाज सरैगो । बैठिरहो हरिमारगमें करता जो करै सोइ होय रहैगो ॥ अपने हितसों जिन तोहिं सृज्यो है अलेख विलोकि कै सोचकरैगो ॥ चरणदास विचारि कहा भटकै हरिनाम बिना दुख कौन हरैगो ॥ १ ॥ वहीराम वहि श्याम विधाता वही विश्वंभर पतिततरै । वही विष्णु वहि कृष्णमुरारी वही निरंजन ज्योतिधरै ॥ दीनानाथ हरि वह कहियतहै जो चाहै सो

वही करै । चरणदास क्यों भटके मूरख रामबिना दुख कौन हरै ॥ २ ॥

कवित्त॥वही राम मेरो जिन रावण विनाश्यो जाय वही राम मेरो जिन लंकपुर जारी है । वही राम मेरो जिन कंसको पछारयो जाय वही राम मेरो जिन नाथ्यो नागकारी है ॥ वही राम मेरो सो डार पात रमिरह्यो वही राम मेरो जाकी जगमें उज्यारी है । चरणदास कूर सब संतनको चेरो कहै वही राम मेरो प्रहलाद पैज पारी है ॥

कुण्डलिया ॥ वेद पुराणनमें सुनो, संकट मेटननावँ । चरणदासके काजको, अब क्यों थाके पावँ ॥ अब क्यों थाके पावँ धाममें हो अकनाहीं । और हमारो कौन गहै या दुखमें बाहीं ॥ सकल सृष्टि बिसराय खैंचि मन तुमसों लायो । इन पांचनको काट करो मेरो मनभायो ॥ १॥ भीरपरी जब दासपर, जित तित धारो वेष । अगिले पिछले कर्मकी, अब क्यों न मेटो रेख ॥ अब क्यों न मेटो रेख कर्मकोई दुर कीन्हों । हम कुछ जानत नाहिं तुम्हीं काहे नहिं चीन्हों ॥ अब तुम करो सहाय इन्हेंसे मोहिं छुटावो । काम क्रोध मोह लोभ चक्रसों वेगिनलावो ॥ २ ॥

कवित्त ॥ सबही दुख पावैं बेर बेर पछितावैं अब तोहींको ध्यावैं दुख वही काटि दीजिये । अन्नके दुखारी सब भये हैं भिखारी सृष्टि काहे को बिसारी प्रभु वेगि जो पसीजिये ॥ जक्त गुणागार करि देखो है विचार अब ना करो अबार बंदि छोड़ि जो कहीजिये । दिल्लीकी अर्ज चरणदास कहैं लर्ज शाह नादर को बर्ज अर्ज मेरी सुनि लीजिये ॥ १ ॥ यशोदाको लाल देखि मोहन ब्रजवाल देखि गोपी अरु ग्वाल देखि

प्राण वारि दीजिये । माथेपर मुकुट देखि कुण्डलकी झलक देखि घूँघर वारी अलक देखि ललकाही कीजिये ॥ बाँकीसी मरोर देखि मुरलीकी घोर देखि पैंजनी टँकोर देखि देखाही कीजिये । चरणदास कूरदेखि नैननको मूँद देखि नैननके बीच देखि यही ध्यान कीजिये ॥ २ ॥ पीरा सुधार फेंटो तुर्रा छबि अधिक बनी करहू में मुरली गहि अधरनपै धारीजू । घेरदार नीमो पीरो अंग शुभ रहो एक पावँ ठाढे सो प्रेमके अहारीजू ॥ सबही शृंगार किये राधेजू बायें अंग ठाढी मुसक्यात प्राणपिया संग प्यारीजू । नवल किशोर मोर साँवरो सुजान प्यारो धार चरणदास कीन्हों अटल विहारीजू ॥ ३ ॥

दोहा–मनदानिस्तम् हिज्रने, दीगर वस्ल न कोय ॥
चरणदास गफलतउठ, वाहिद वाहिद होय ॥
हिज्र वस्ल दोनों नहीं, नहिं दरिया नहिं मौज ॥
चरणदास जर्रा नहीं, जो कर देखा खोज ॥
दरिया वाहिद् लामका, बाजत अनहद बीन ॥
सकल चरण फरजंदना, नहीं संग ताबीन ॥
दीद शुनीद जहां नहीं, तहां न काल न हाल ॥
जौहर जिसम इसम नहीं, चरणदास नहिं खाल ॥
बुरी शिफारस यामिनी, और सगाई होय ॥
चरणदास यों कहतहैं, भूलकरो मतिकोय ॥

कवित्त ॥ काहेको भक्तपै समान हैं बगलेको ध्यान तौ लगायो है मीनके पचावनको । भीतर और विषय वास चरण दास बाहर तिलक छापेकिये जक्तके दिखावनको ॥ हरिके गुण

गावनको रसनारिसात अधिक मनतौ हुलसात बाद निन्दाके बढावनको। बहुत बात सीख राखी लोक और बडाई को काया नाहिं शोधी एक रामजीके पावनको॥ १॥ यह है काल तामें महाविकराल जहां चरचा गोपाल जाकी निन्दाकरैं जानिकै। कोई करै भक्त जाकूं दुष्ट बहुनामधरैं वचन कुवचनकहैं क्रोध मन आनिकै॥ देखैं अब जायगो तू परमवैकुण्ठहीकूं बडोभयो साधु मालाधारि तिलक ठानिकै। ऐसे दुष्ट नीचन की बातनहीं मानिये जू कहैं चरणदास सबै पापी नरक खानिकै॥ २॥ आप बडे नीच करतूत करैं नीचनकी नीचनको संग जिन्हैं भावै उत्पात है। रामनाम सुनि हिये लागत है आगि जान कोऊकरै भजन ताहि देख जरजातहै॥ खोटे भये आपकहैं औरनकूं खोटे वै तो महामोटे पापी माया माहिं इतरातहै। साधनके निंदक सुतौ परैंगे नरक मांझ कहैं चरणदास दुख पावैं बहुभाँति है॥ ३॥

दोहा—चरणदास हितसों कियो, ग्रन्थ अनेक प्रकार॥
अष्टादश अरु चारको, काढिलियो ततसार॥

चौ०—संवत सत्रहसे इक्यासी। चैत सुदी तिथि पूरणमासी॥
शुक्रपक्ष दिन सोमहिवारा। रच्यो ग्रन्थ यों कियो विचारा॥
तबहीं सूं स्थापन धरिया। कछुइकवाणी वादि न करिया॥
ऐसेहि पांचहजार बनाई। नाम गुरू के गंग बहाई॥
फिरि भइ वाणी पांचहजारा। हरिको नाम अग्निमें जारा॥
तीजे गुरु आज्ञा सो कीन्हीं। सो अपने साधनको दीन्हीं॥
अद्भुतग्रंथ महासुखदाई। ताकी शोभा कही न जाई॥
तामें ज्ञान योग वैरागा। प्रेमभक्ति जामें अनुरागा॥

निर्गुण सर्गुण सबही कहिया । फिर गुरुचरणकमलमें रहिया ॥
जोकोइ पढ़ि पढ़ि अर्थ विचारै । आप तरै औरनको तारै ॥
ना में कियो न करने हारा । गुरु हिरदेमें आय उचारा ॥
चरणदास सुखसूँ शुकदेवा । आन कहे चारोंही भेवा ॥

इति श्रीस्वामीचरणदासजीकृतग्रंथभक्तिसागरसम्पूर्णम् ।

दोहा–जल घृतसूं रक्षाकरौ, मूरख हाथ न देव ॥
ढीलौ कर नहिं बाँधिये, ग्रंथ कहत यह भेव ॥

इति श्रीस्वामीचरणदासजीकृतवाणीसंग्रह
पण्डित शिवदयाल वकीलद्वारा संशोधित ।

समाप्त ।

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥



पुस्तक मिलनेका ठिकाना–
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस–बंबई.

श्रीराधाश्यामाय नमः ।

अथ श्रीगुरुभक्तिप्रकाशका परिशिष्टभाग ।

पदराग खमाच ।

नमो नमो शुकमुनि चरणदासा । कलिके कुटिलजीव तिनके हित संत अवतार धरचो हरित्रासा ॥ १ ॥ श्रीपुरुषोत्तम वचन मानिकै मुरलीधर घर कीन्ह निवासा ॥ च्यवनऋषीश्वर दूसर कुलको परकट कीन्हों जगतउजासा ॥ २ ॥ श्रीशुकदेव कृपा जब कीन्हीं सकल मनोरथहू भये तासा ॥ श्रीराधा कृष्ण पीतांबर वस्तर श्रीतिलक दीन्हों सुत व्यासा ॥ ३ ॥ परमधर्म भागवत कथन करि आनधर्म सब कियो जु नासा ॥ युगयुगभक्ति करो हरिजूकी यह वर दियो है उमंग हुलासा ॥ ४ ॥ करि परणाम प्रदक्षिणा कीनी इंद्रप्रस्थ निज कियो जु वासा ॥ सतगुरु कह्यो सोइ पुनि कीन्हों स्वामिभक्ति करी प्रेमकी रासा ॥ ५ ॥ अनुभव शब्द उठा घनघोरा स्वयंरूप निज अंतर भासा ॥ मन वच कर्म शरण जो आये तिनहूंकी मेटी यमफांसा ॥ ६ ॥ त्रिविधताप मेटनको समरथ मानो पूरण चंद्रप्रकासा ॥ तत्पर टहल महल वृंदावन निजस्वरूप नित दंपतिपासा ॥ ७ ॥ परमपवित्र चरित्र यह गावै ध्यान करै करिकै विश्वासा ॥ निश्चय होय अमरपुर वासी जन्ममरणकी छूटै गांसा ॥ ८ ॥ अष्टसिद्धि जिन चरणनलागी सकल पदारथ करैं जु आसा ॥ लक्षिदास::उभय पाणि जोरिकै युगलभक्ति दीजै निजदासा ॥ ९ ॥ इति ।

श्रीगुरुचेलेकासंवादश्रीशुकदेवजीकीजन्मलीला श्रीस्वामीरामरूपजीकृत प्रारम्भ।

दोहा–जैजै श्रीरणजीतगुरु, विनयकरूं शिरनाय॥
जनमहोन शुकदेवकी, लीलामोहिं सुनाय॥ १॥

चौ०–श्रीव्यासके सुत शुक सूंचे। भक्तिज्ञान योगमें ऊँचे॥
शुभ कर्मनको नीके जानै। नीके अपना रूप पिछानै॥
विचरत पृथ्वीपर नितरहै। तृष्णाजारी आनँद लहै॥
सर्वशास्त्रन नीके जानै। सबके अर्थनको पहँचानै॥
जिनके वचन जगत छुटजावै। करनी करै अभयपद पावै॥
श्रीविष्णुसम है अवतारी। सकल ऋषिनसे पदवी भारी॥
ऐसेहैं शुकदेव गुसाँई। सदा विराजो ममहियठाई॥
कैसे जन्म भयो जगमाहीं। याको भेद सुनो मैं नाहीं॥
उनकी कथा जु लागे प्यारी। सुनिआनँद हो हिये मँझारी॥
ज्यों संतुष्टहो अमृत पीये। मैंतिरपतहूं सरवन कीये॥
चरणदास गुरुवचन तुम्हारे। भरम मिटावन करन उज्यारे॥ २॥

दोहा–रामरूपगुरुजीप्रभो, और कहो इक भेव॥
कैसे तप कियो व्यासने, वर दीनो महादेव॥ ३॥

गुरुवचन।

रामरूप पूछन करी, तुमने जो यह बात॥
मेरे मनकी भावती, कहतैं बहुत सुहात॥ ४॥

चौ०–चरणदास कह सुन शिष सोई। तपबिन पूरण काज नहोई॥
तपसों बहुत बड़ाई पावै। सबमें मुखिया वही कहावै॥
बड़ाभयेनहिं धनके आये। बड़ा न होय राजके पाये॥

तुच्छ बड़ाई इनकी जानौ। बडी बड़ाई पायों ध्यानौ ॥
सबका मूल तपस्या लीजे। तपसों इंद्रियनिग्रह कीजे ॥
पापहोय सो इंद्रिन काजे। इंद्रिय रोंके सब दुख भाजे ॥
परमारथका मारग सूझै। कारज सिद्ध होहि जो गूझै ॥
इन्द्रियवश मन जीताजावे। रामरूप निहचल घर आवै॥५॥

दोहा–अब सुन शिष तोसूं कहूं, अद्भुत कथा पुनीत ॥
जो भीषमजीनेकहा, युधिष्ठिरसूं करिप्रीत ॥ ६ ॥

चौ०–एकहिसमयव्यासमुनिराई। पुत्रकामना मनमें आई ॥
यही जु धारिकै मनमें आसा। चलिकै गए महादेव पासा ॥
मेरु शिखरपै शिवजी राजें। पारवती लिये संग विराजें ॥
अरु उनके सेवकथे सारे। बैठेथे आनँदमें भारे ॥
वहीठाँव जो व्यास गुसाँई। पुत्रहेत लगे तपकेमाहीं ॥
कठिन तपस्या करने लागे। ऐसा पुत्र सु मनमें मांगे ॥ ७ ॥

दोहा–पृथ्वीसा धीरज धरे, जलसा निर्मल होय ॥
तेज अग्निसा तासमें, वायुसा व्यापक होय ॥ ८ ॥
अरु ऐसाही चाहिये, जैसा बडा अकाश ॥
करी तपस्या सौ बरस, मनमें धरि यह आश ॥ ९ ॥

जल फल फूल पातनहिंलीन्हा। जबलगपवनअहारहिकीन्हा ॥
जहां तपस्या करते हीथे। तहां ब्रह्मऋषि अरु राजऋषीथे॥
यम अरु इंद्र वरुण को जानौ। वायु कुबेर अग्नि असथानौ ॥
वसु पिरथी अरु सूरज चन्दा। अरु ह्वांई थे सातों सिंधा ॥
अरु पर्वत थे नरतनु धारे। जहां अप्सरा गंधर्व सारे ॥
अरु चौरासी सिद्ध जहांई। अरु नारदमुनि हुते तहांई॥१०॥

दोहा-पीत पुष्पमाला पहर, ललित गौरजा कंत ॥
मानौ फूली सांझही, हिम शशि सोभावंत॥ ११॥
व्यास तपस्या जो करी, बडा कष्टही धारि ॥
सावधान तामेंरहे; गए न मनमेंहारि ॥ १२ ॥

चौ०-अरु बलछीनहुवा नहिंवाका। तीनलोकमों अचरजताका॥
धन धन कहाऋषी मुनि सारे। जो ह्वांथे सो सबै पुकारे॥
तेज तपस्या जटा जु चमकैं। मानौ अग्नि भाँतिसी दमकैं॥
देख तपस्या ऐसी शंकर। परसनभए बहुतही मनकर॥
वरदेनेकी मनमें आई। व्यास ओर देखा मुसक्याई॥
कहा मनोरथ पूरा कीना। पुत्तर चाहा जैसा दीना॥१३॥

दोहा-पूरी करी जु कामना, मैं तोको सुतदीन ॥
रामभजनमें रहैगा, ध्यानमाहिं लवलीन ॥१४॥

चौ०-महादेवसूं यह वरपाया। व्यास बिदाहो मारग धाया॥
आपहुँचे ऽस्थलके, माही। फुल्लतभए बहुत हरषाई॥
सदामगन आनँदमें पागे। निशादिन रहैं ध्यान लवलागे॥
व्यासदेवके तपकी बूझी। सो हम कही बातथी गूझी॥१५॥

शिष्यवचन।

दोहा-तपकी कही सु मैं सुनी, तिरपत भये जु कान॥
रामरूप इक औरभी, पूछे कृपानिधान॥१६॥
कौनमहीनाकौनातिथि, कौन हुता जो बार॥
व्यासगेह कैसे भया, शुकजीकाअवतार॥१७॥

गुरुवचन।

वैशाख महीना मध्यमें, अमावसातिथिदिन सोम॥
जन्म लियो शुकदेवजी, गिरिसुमेरकीभौम॥१८॥

डेढपहर दिन चढाथा, जब हूवा वीचार ॥
वेदव्यासके उरविषे, उपजा हर्ष अपार ॥ १९॥
चौ०-तपपाछे केतिक दिन माहीं। होमठटा श्री व्यास गुसांई ॥
मावस तिथि दिन सोमहि वारा। परबी लख यह किया विचारा ॥
होमकरनकी मनमें आई। ताकी सौज सबै मँगवाई ॥
सावधानहो बैठे नीके। लागे मथन अग्निअरनीके ॥
ताही समय अप्सरा आई। सहजसाहिं सुंदर अधिकाई ॥
नाम घृताची रूपअपारा। व्यासदेव वा ओर निहारा ॥
मोहित भए देख वा नारी। होनहारकी गतिही न्यारी ॥
लखा अप्सरा मनमें जबहीं। तोती रूप धरा उन तबहीं ॥
पलक कटाक्ष काम वश भया। बीजखसा थाँभा नहीं गया ॥
बिंदुपडा अरनीके मांही। ईश्वरगति जानीनहिं जाही॥२०॥
दोहा-फिर अरनी मथनेलगे, प्रगटे अग्नि स्वरूप ॥
मूरत श्रीशुकदेवकी, नख शिख व्यासहिरूप ॥२१॥
किशोर अवस्था होगये, तुरतहि ले अवतार ॥
अतिसुंदर तनु साँवरे, मानो कृष्णमुरार ॥ २२ ॥
चौ०-गंगावहींप्रकट होआई। रूपनारिके अति छबिछाई ॥
वामें शुकजी आनि न्हवाए। फूल स्वर्गके पवन ब्रषाए ॥
दण्ड एक दूजी मृगछाला। नभसे उतरीही ततकाला ॥
आय अप्सरा निरतन लागी। गंध्रव गावनलाग सुभागी ॥
जहां दुंदुभी बाजन लागे। लगी शंखध्वनि होने आगे ॥
जितने बाजनथे सो सारे। बाजनलगे सु न्यारे न्यारे ॥
पित्रदेवनारदसे मुनी। हाहा हूहू अस्तुतिभनी ॥
मगनभए थिर चरजगसबहीं। रामरूप शुक जनमेजबहीं॥२३॥

दोहा-रीति जन्मनेकी करी, पारवती त्रिपुरार ॥
करी बधाई भवन अप, बांधी बंदनवार ॥२४॥
वासवने बस्तर दिए, शुकदेवजीको आय ।
फटैं न जीरणहोयना, मैल नहीं लगजाय॥२५॥
और कमंडलु काठका, दिया जु उनके हाथ ॥
धन्यसमयधनिदिवसथा, रामरूपधनिनाथ॥२६॥
जिनका दरशन शुभअहै, सो पक्षी नभ माहिं ॥
दिए दिखाई आयकै, चहुँओर मंडराहिं॥२७॥
तोता हरियल हंसहीं, सारस अरु पिकरोर ॥
भांति भांतिके और खग, नीलकंठ अरु मोर॥२८॥
जन्मदेख शुकदेवको, सभी भए परसन्न ॥
आपसमेंपक्षी कहैं, जै जै धनिधनिधन्न॥२९॥
चौ०-जन्मत तप ओरैमनलाए। जगमें पगन नेकनहिंपाए ॥
स्वतःसिद्धथे श्रीशुकदेवा । जानतहुते चारहौ भेवा ॥
सर्वशास्त्रन अर्थ पिछानै । जैसे व्यासदेव मुनि जानै ॥
बिनापढे सबही कुछ जाना । तौभि बृहस्पतिको गुरुमाना॥
जो विद्या गुरु किया सनेही । बिनगुरु विद्या फलनहिं देही॥
नहिंतौ चाह कहाथी उनको । विद्याही पढनेका तिनको ॥
याते मर्यादा गुरु चीन्हा । सकल शास्त्र पाठ जू कीन्हा ॥
चारवेद उनसों पढ लीन्हा । मीमांसामें अतिमन दीन्हा३०
दोहा-राजनीत अरु काव्य सब, पढगए रहेजितेक ॥
गुरुपूजे दई भेटही, अस्तुतिकरी अनेक॥३१॥
फेर तपस्याको लगे, पांचो इंद्रिय रोक ॥

मन दीना भगवानको, रहा न हर्ष न शोक ॥३२॥
करते थे दण्डवत ही, सकल देवता ताहि ॥
ऋषिमुनि हू करते हुते, बडा जानकारि चाहि ॥३३॥
जो कारज होता कछू, करते इनसूं बूझ ।
अधिकी थे तप ज्ञानमें, बुद्धि बड़ी थी सूझ ॥३४॥

चौ०—और जगत कारजके माहीं। कबहू चित्त लगायो नाहीं ॥
हरिके सुमिरणमें नित रहते। मोक्ष धर्मका मारग चहते ॥
एक दिना शुकदेव सुभागे। आय पितासूं कहने लागे ॥
मोक्षधर्म मोको समझावो। मेरे मनका भर्म मिटावो ॥
तुम सम और न दीखे कोई। मोक्षधर्मको जानै सोई ॥
ताते कृपा बेगही कीजे। मोक्षधर्मको मारग दीजे ॥
सीखनको हियरो हुलसावे। बारबार मनमें यहि आवे ॥
ज्ञानअरूपी समझो चाहूं। ताते परमातमको पाऊं ॥३५॥

दोहा—पुत्तरकी अभिलाष ही, सुना व्यासहीदेव ॥
जब समझावन ही लगे, मोक्षधर्मको भेव ॥ ३६ ॥

चौ०—पहलेशास्त्रयोगसिखायो। बहुरि सांख्ययोग समझायो ॥
मत वेदांत दियो समझाई। जिज्ञासी हूएँ अधिकाई ॥
जभी व्यासमुनि ऐसी जानी। श्रीशुकदेव भए ब्रह्मज्ञानी ॥
जैसे व्यास ब्रह्मको जानै। ऐसेही शुकदेव पिछानै ॥
जब कही पुत्तर आवो आगे। ढिग बैठाय कहन यों लागे ॥
मिथिलानगर जनक जहँ राजा। ह्वां तुम जाव मुक्तिके काजा ॥
मोक्षधर्म वे नीके जानै। ब्रह्मदरशी ब्रह्मरूप विधानै ॥
सोई समज सब तोकूं देहै। कृपाकरी संदेह मिटै है ॥३७॥

दोहा—यह सुनिकारि ठाढेभये, आज्ञा शिर धर लीन ।
गिरिसुमेरुते उतरकै, गवन नगरकूं कीन ॥ ३८ ॥

चौ०—जापहुँचे नगरीके माहीं। राजा जनक रहे जा ठाहीं ॥
राजद्वारपै ठाढो भयो। द्वारपालने ह्वां जा कह्यो ॥
व्यासपुत्र चल द्वारे आयो। ठाढो है यों जाय सुनायो ॥
जनकविदेह समझ यों भाषो। कही कि ह्वाँई ठाढो राषो ॥
सात दिवस शुकदेव गुसांई। ठाढे रहे पवँरिके ठाई ॥
राजा जनक नहीं सुध लीनी। वडी परीक्षा गाढी कीनी ॥
अठयें दिन मंदिरको ल्यावौ। ठाढरहैं तौ ना बैठांवौ ॥
सात दिवस फिर पूछा नाहीं। शुकजीके मन कछू न आई ॥ ३९

दोहा—चौदह दिनगये बीतके, हुवा पंद्रवाँ द्योस ॥
बुलवाये रनिवासमें, देखनको जगहोस ॥ ४० ॥

चौ०—नाचनको पातुर पठवाई। कह्यो कटाक्ष करो तुम जाई ॥
हेतुभाव करि वशमें ल्यावो। नानाविधिके भोजन खवावो ॥
सात दिनालौं योंही कीन्हो। मन शुकदेवको नाहीं लीन्हो ॥
मोहत भए न काहु नारी। हेतुभाव करि बहु पचिहारी ॥
अरु भोजन दीयो सोइ खायो। अपनी इच्छा नाहिं मँगायो ॥
चौदह दिन ठाढे जो बितई। ताको बुरो न मानो चितई ॥
अस राजा मिहमानी करई। जाको लोभ न मनमें धरई ॥
स्थिरचितदुःखसुक्खनहिंव्यापो। पवनलगैज्योंगिरिनहिं कांपो॥

दोहा—दुख सुख कुछ व्यापै नहीं, चित्त स्थिर है जौन ॥
राम रूप गिरिना हलै, आये गये जु पौन ॥ ४२ ॥

जब राजा शुकदेवको, देखाबहुत हलाय ॥
पाछे दिन इक्कीसवें, लीनो निकट बुलाय ॥४३॥

चौ०–नमस्कार पूजाकरि हेती। समाचार पूछा हित सेती ॥
कौन कामना मनधर आये। सो अब हमसूं कहो सुनाये ॥
व्रत सत शील क्षमामें पूरे । ज्ञान ध्यान अरु तपके शूरे ॥
अपने कारज सब तुम कीने। मगनरूप आनँदलवलीने ॥
बड़ो अचंभो मोकूं आयो। कौन मनोरथ मनमें लायो ॥
तब बोले शुकदेव विज्ञानी। लज्जालिये मधुरसी बानी ॥
कछू कछू पूछनकूं चाऊं। मनमें जो संदेह मिटाऊं ॥
यह संसार भयो काहीते। कबलग रहै कहो ढ्राईते ॥४४॥

दोहा–यह जग कैसे बनतहै, और समापत होय ॥
दुख सुख मन या जीवकूँ, मोहिं बतावो सोय ॥४५॥

चौ०–जबकह जनक सुनोशुकदेवा। एक आतमा स्थिर भेवा ॥
नित सत जानो भेद जु वाको। काहू विधकरि नाश न जाको॥
अरु वा छूटि सभी भ्रम जानो। भ्रमहीतें ये जग प्रगटानो ॥
जबलग भरम तभीलौं भासै। भर्ममिटेसे सबही नासै ॥
अरु संसारिनके मन आंधे। भ्रमहि आपने दुख सुख बाँधे॥
शुकजी कही ये आगे जानो। ग्रंथनमाहिं लिखी पहँचानो ॥
मेरे भ्रमसूं जग उपजतहै। मेरे भ्रमहीसुं जु खपत है ॥
सो कहु यहै जगत कबलों है। मोहिं बतावो यह जबलौंहै४६॥

दोहा–जनक कही मैं जानिया, मत वेदांत निहार ॥
ज्ञानीके सतसंगसूं, अंतर कियो विचार॥४७॥

भांति भांतिकी सृष्टि ही, दीखत है जो येह ॥
भाव अवस्था एकही, एक वस्त्र लखलेह ॥ ४८ ॥

चौ०-एकक़ु देखतहै जु अनेका । तेरे ही भ्रम तोहिं विशेषा ॥
या जगकूं तुम यही विचारो । तेरोहि भर्म दिखावनवारो ॥
जो तोको यह देत दिखाई । अपनो भरम जान ले याई ॥
जो यामें संदेह कराई । भरमबंध में जानौं वाही ॥
व्यासपुत्र तुमहो बुधवानै । इतो जानबो सो तू जानै ॥
सब इंद्रिनके रहे न स्वादा । दुख सुख व्यापे नाहिं न बाधा ॥
जिसको ऐसा होवे प्राप्त । मुक्ति भयो वाकूं जानो संत ॥
मेरो यह भ्रमहै अकि नाहीं । यह द्विविधा मत रख मनमाहीं ॥

दोहा-निहचैकरिके जान तू, यही बातहै ठीक ॥
यह जग मेरोही भरम, यह विचारले सीख ॥ ५० ॥
तो मन निहचै होय जब, भरम जायगो नाश ॥
जगतनेकहूं ना रहै, खुलै तिमिरकी गांस ॥ ५१ ॥
थिरही केवल आतमा, सत चित आनँदरूप ॥
यही जानिके मौनगहु, होरहु ज्ञानस्वरूप ॥ ५२ ॥
कियो जु राजा जनकने, इहि भांती उपदेश ॥
रामरूप शुकदेवके, मनको गयो अँदेश ॥ ५३ ॥
जभी आत्मारूपमें, मगन भए शुकदेव ॥
भरम तिमिर अज्ञानको, रह्यो नेक नहिं लेव ॥ ५४ ॥
भई अवस्था और ही, रोम रोम आनंद ॥
जीवनमुक्ता होगए, रही न दुबधा संघ ॥ ५५ ॥
भूले सब व्यवहारही, आपनकूं गए भूल ॥

अहंकार नाश्यो सबै, ताको रहो न मूल ॥ ५६ ॥
श्रीजनकके वचन सुनि, लिय उपदेश अघाय ॥
ज्ञान मोक्षसिद्धांतकूं, नीके समझा आय ॥ ५७ ॥
थे तो पूरण पहलही, सबविध सबही भाय ॥
सतगुरु इसकारणकिए, निहचे कीना आय ॥ ५८ ॥
बिन सतगुरु निश्चयनहीं, कैसहु चातुर होय ॥
केतीही विद्या पढो, भूल मिटै ना कोय ॥ ५९ ॥
मुदितहोय दण्डवत करि, उठचाले भये भोर ॥
पवनभांति उत्तरदिशा, चले पर्वतो ओर ॥ ६० ॥

चौ०—ह्वांसू उठेपवन ज्यों धाए। बेगहि पर्वत ऊपर आए ॥
व्यास तपस्या करते पाए। दरशन करिकै अंग नवाए ॥
व्यास उठाय दृष्टि जब देखा। आवत अपनापुत्र विशेषा ॥
सूरज अग्नि तेज ज्यों धरई। बेगहिधावतमानौसरई॥ ६१॥

दोहा—वाको तेज न रुकसके, गिरिवरतरुके ओट ॥
आय पिताके पासही, चरणनमें रहेलोट ॥ ६२ ॥

चौ०—पिता उठाय हिएसूंलाए। दोनोंमिल बहुतै सुखपाए ॥
व्यास प्यारकरि पूछनलागे। समझा सो सब कहु सोआगे॥
जब शुकदेव सभी कुछ कहिया। देखासुना जनकसूं लहिया ॥
भांति सिखनकी रहन विचारा। तपसेवा करने प्रणधारा ॥
ऐसेही महाभारत माहीं। बिनासुने जानै कोइनाहीं ॥
बाजे मूरख वाद बढावैं। बिनजाने कुछकी कुछ गावैं ॥
अबके द्वापरकी यह काथा। महाभारतमें विख्याता ॥
भारतमें हैं पर्व अठारा। तामें शांतिपर्व विस्तारा ॥
शांतिपर्वमें मोक्षधरम जो। तामाही यह कथा परम सो ॥

वेदव्यासके सुत शुकदेवा। तिनकी तौ कारण इह भेवा ॥
सोई मोकूं मिले जु आई। जिनकी लीला तोहिं सुनाई ॥
ऐसेही है रामदुहाई। ज्योंकी त्यों तोकूं समझाई ॥
रामरूप यह निहचै कीजो। सांचीबात हिये धरिलीजो ॥
दंतकथा झूठी जगछाई। कहैं कि गर्भबसे शुकआई ॥
और कहैं बारह वर्षताहीं। रहे शुकदेव उदरके माहीं ॥
ऐसी चूक करी क्या भारी। सहा दुःख जो अधिक अपारी॥
मूरखकहते नाहिं लजावैं। ईश्वरकूं जो दोष लगावैं ॥
उनकी बात सुनौ मत प्यारे। वेतो हैं अपराधी भारे ॥ ६३॥

दोहा–मोहिं मिले शुकदेवजी, तिनकी तौ यह बात ॥
गर्भयोनि आए नहीं, निहचै जानो तात ॥६४॥
चरणदास यों कहतहैं, रामरूप उरधार ॥
यह लीला गावै सदा, उतरै भव जल पार॥६५॥

शिष्यवचन।

धन सतगुरु परमारथी, चरणदास महाराज ॥
अद्भुत कथा सुनायकै, पुरवे मोमन काज ॥६६॥
सबविध कियो निहालमुहिं, कथा सुनाई गूप ॥
बारबार बलिहार हूं, कहै रामही रूप ॥ ६७ ॥
निहचै जानी सांच मैं, तुम्हरे वचन प्रसाद ॥
सो लेकरि हिरदे धरी, नाशी भूलअगाद ॥ ६८ ॥

इति श्रीगुरुचेलेकेसंवादविषे श्रीस्वामीरामरूपजीकृत
शुकदेवजीकी–जन्मलीला सपूर्णसमाप्तशुभम्

श्रीः ।

श्रीभक्तिसागरग्रंथकी आरतीका पद ।

आरती ग्रंथराजकी कीजे । जीत जनम यह लाभ जो लीजे ॥ ग्रंथको ध्यान धरैं चरनदास । ग्रंथ है संतनको सुखरास ॥ अष्टादश षट चारों वेद । ग्रंथमाहिं सबहीको भेद ॥ जो नर ग्रंथको सुनैं सुनावैं । सो नर भक्ति कृष्णकी पावैं ॥ अमरलोक निश्चय कर जावैं । या जगमांही बहुरि न आवैं ॥ पियप्यारी के निकट रहावैं । सेवा कर मनमें हरषावैं ॥ श्री-ठाकुरदास गुरुभेद बतावै । बलदेवदास हरष गुण गावै ॥ १ ॥

पुनः आरतीपद ।

आरती ग्रंथ भक्तिसागरकी नितही हुलस सकलजन कीजे ॥ पूरण प्रेम घिरत हित बाती चित चौमुखमें जोय सुदीजे ॥ होय प्रकाश वासना नाशैं घटते तिमिर अविद्या छीजे । दरशै श्यामा श्याम हियेमें नैनन निरख रूपरस पीजे ॥ परा-भक्तिको पाय परम रस भजन भावनामें मन भीजै। युगलध्यान धुनि सहज समाधी हरिगुरुकृपासु पाय पतीजै ॥ श्रीठाकुर बलदेव दास गुरु सरस माधुरी सुन गुनलीजे । भजन प्रताप पहुँच चौथे पद अजर अमर हो युग युग जीजै ॥ २ ॥

अथ पतिब्रताको अंगवर्णन ।



दोहा—पतिब्रता वाकूं कहैं, पति आज्ञाकी टेक ॥
रामरूप वही संत जो, सुमरे साहिब एक ॥ १ ॥
आन पुरुष चित ना बसे, पतिब्रता है सोय ॥
रामरूप एकै भजे, जो कुछ होय सुहोय ॥ २ ॥
एक देह मन एक है, दीन्हा एकै हाथ ॥
रामरूप दोजिक पडैं, दूजा लैं जो साथ ॥ ३ ॥
जो आशक हैं एकके, दूजेसूं क्या काम ॥
रामरूप मुख दो नहीं, जो दूजा लै नाम ॥ ४ ॥
दूजेकूं धावै वही, जो दूजाका होय ॥
रामरूप के मन बस्या, पीव पियारा सोय ॥ ५ ॥
उपजावै पालै वही, वही खपावै जान ॥
तौ दूजा क्यों सेइये, रामरूप है राम ॥ ६ ॥
एक जीव एकै दिया, दूजे सूं नाहिं काम ॥
रामरूप आशिक वही, जपै एकको नाम ॥ ७ ॥
बंदातौ आसिक भया, मिहरवान महबूब ॥
रामरूप रबएकसूं, इश्क लगाया खूब ॥ ८ ॥
एक मूल गह लीजिये, राखियै एकै टेक ॥
दूजी राह न चालिये, यह पतिब्रत्त विशेष ॥ ९ ॥
दूजा अंग न लाइये, दूजा देख न नैन ॥
रामरूप रति एकसूं, सुनैं न दूजा बैन ॥ १० ॥
हंस बोलूं तौ पीवसूं, जो देखूं तौ पीव ॥
रामरूप वारन किया, तन मन धन अरु जीव ॥ ११ ॥

जानां नरक कबूल है, पीव पियारे साथ ॥
चाह नहीं मोहि स्वर्गकी, रामरूप बिन नाथ॥ १२ ॥
तन मन दीनां एककूं, एकही सेती ब्याह ॥
एकै जानां रामरूप, दूजेकी नहिं चाह ॥ १३ ॥
भांवर लीन्हीं भावकी, गठजोड़ा गुरज्ञान ॥
हथले वा हित हरीसूं, रामरूप रंगमान ॥ १४ ॥
सांचे समरथ पीवसूं, मैं जो किया उछाह ॥
संत जु माई बाप हैं, दीन्हीं तिन्हौं विवाह ॥ १५ ॥
लिया जनम सतसंगमें, जब पाया हरि पीव ॥
नहीं तो भरम्यां फिरै था, चौरासीका जीव ॥ १६ ॥
प्रेम प्रीत सतसंग सूं, पाया नेड़ै राम ॥
नहीं तो भरम्या फिरै था, रामरूप बेकाम ॥ १७ ॥
लख चौरासी जूंनमें, बहुते कीते पीव ॥
एक पीव जानें बिनां, भटक फिरा यह जीव॥ १८ ॥
कहीं ठिकाना ना मिला, बिन सांचे भरतार ॥
रामरूप शोभा गई, जनेजने के लार ॥ १९ ॥
परपुरषाकी चूंनरी, ओढै चढै कलंक ॥
अपने पी की गूदडी, सोभा देत निशंक ॥ २० ॥
रूखा सूखा पीवका, खावैं सरस सुरंग ॥
परपीका खटरस बुरा, यह बिभचारन अंग ॥ २१ ॥
परपुरषासूं प्रीतरी, जनम बिगोवा होय ॥
निरफल सेवा तासकी, भला कहै नहिं कोय॥ २२ ॥
जनें जनें सूं प्रीतरी, करत फिरै बिभचार ॥
रामरूप जगमें कुजस, ले तन दे भरतार ॥ २३ ॥

पतिब्रताकूं पीव बिन, पुरष न दीखै और ॥
रामरूप त्यौं हरि बिना, आस न दूजी ठौर ॥ २४ ॥
हंसा तौ मोती चुगै, सिंह न सूंघै घास ॥
रामरूप के हरि बिना, और न दूजी आस ॥ २५ ॥
ब्रह्माशेषमहेशलौं, सुर तेतीसौं जान ॥
रामरूप सेवैं हरी, नर क्यौं धावै आन ॥ २६ ॥
आन धरमसूं काम क्या, अपना धरम संभाल ॥
रामरूप रहु टेकमें, सांई करै निहाल ॥ २७ ॥
सगा सनेही रामसा, और न दीखै कोय ॥
रामरूप ताकूं तजैं, तौ कैसे सुख होय ॥ २८ ॥
करम कटैं हरिनामसूं, दुख दरिद्र सब जाय ॥
रामरूप आफत टलै, यमकी नांहि बसाय ॥ २९ ॥
तनमन की बेदनि सबै, राम भजनसूं जाय ॥
रामरूप उस छाडि कै, भरमत फिरै बलाय ॥ ३० ॥
सेवक हूजै रामका, तजि दूजा दरबार ॥
रामरूप उस एक में, जो चाहै सो प्यार ॥ ३१ ॥
जड सींचे सब सींचिया, डाल पात फलफूल ॥
रामरूप पूजे सबै, जब पूज्या हरिमूल ॥ ३२ ॥
सब काया तिरपत भई, जब मेल्हा मुखग्रास ॥
मन बुधि इंद्री प्रान जो, सबकूं भया हुलास ॥ ३३ ॥
तातैं अबिगति पूजियै, छाड आनकी आस ॥
रामरूप उस एक के, सबे देवता दास ॥ ३४ ॥
परमतत्व जाने बिना मनका भरम न जाय ॥
रामरूप उस एक में, रहिये सदा समाय ॥ ३५ ॥

सिर नावै तौ रामकूं, जपै तौ सिरजनहार ॥
रामरूप यह पति बरत, जब रीझैं भरतार ॥ ३६ ॥
मनसा बाचा करमना, एक पीवसूं लाय ॥
रामरूप पिय रीझकै, लेवै कंठ लगाय ॥ ३७ ॥
संतनमें साझा नहीं, मनमें प्रीत न भाव ॥
रामरूप उस पीवसूं, कैसे बनै बनाव ॥ ३८ ॥
जहां भक्ति तहां म नहीं, मैं जहां भक्ती नाहिं ॥
रामरूप तज मानकूं, तब प्रीतम गलबांहि ॥ ३९ ॥
रहियै राजी रजा में, पतिव्रता है सोय ॥
रामरूप आपा नहीं, पीव कहै सो होय ॥ ४० ॥
साहिब रीझै भक्तिसूं, भक्ति बिना हरि दूर ॥
रामरूप कहै भक्तिबिन, गए बिसूर बिसूर ॥ ४१ ॥
जो आशिक हैं रामके, तिन्हैं न जगसूं काम ॥
रामरूप कहै तजि दिए जन जमीन जर गाम ॥ ४२ ॥
राजा राणा क्षत्रपति, जाय न तिनके पास ॥
रामरूप हरिके हुए, जब कैसी जगआस ॥ ४३ ॥
अज्ञा पालै पीवकी, सो पतिव्रता नारि ॥
रामरूप करै भक्तिही, सब परपंच बिसारि ॥ ४४ ॥
भेद आपने पीवका, बाहरि कहै न कोय ॥
रामरूप पातिबता सो, अज्ञाकारी होय ॥ ४५ ॥
अज्ञाकारी पीवकी, तनमन सेवामांहि ॥
रामरूप ऐसा कोई, जगमें बहुते नाहिं ॥ ४६ ॥
आज्ञा लेजावै कहीं, ऊठै बैठै सोय ॥
आज्ञाले भोजन करै, कबहूं दुखनाहिं होय ॥ ४७ ॥

हानिलाभ कछू ना गिनै,एक हुकमसूं काम ॥
रामरूप आवत जैसो, पतिव्रतावास ॥ ४८ ॥
सोइ सुहागनि सुंदरी, पतिअज्ञामें होय ॥
रामरूप ऊंची चढै,भला कहै सबकोय ॥ ४९ ॥
जंतर टोना त्यागकै, हुकम पियाका पाल ॥
यह विधिहै वश करनकी, सदा पीवखुसियाल ॥५० ॥
रामरूप ज्यों पतिव्रता, साहिबसेती दास ॥
शिषगुरुसैं ऐसो रहै, दिन दिन भक्तिप्रकास॥५१॥
आज्ञा मेटी पीवकी, चाली मनके भाय ॥
अब कैसे भरतारकूं, मुखदिखलाऊं जाय ॥ ५२ ॥
जैसी तैसी पीवकी, पीयाबकसनहार ॥
रामरूप समर्थ धनी, मैंही औगुनगार ॥ ५३ ॥
मैंतो औगुन बहुकिये, तेरीओट भरतार ॥
रामरूपकूं राखलो, अब शरनैं करतार ॥ ५४ ॥
जो छीनैं तौ रामजी, जो देवैं तौ राम ॥
पातन हालै हुकम बिन, राम करै सबकाम ॥ ५५ ॥
रामहिंसेती मांगिये, रामहिं सबका साह ॥
रामरूप दाता वही, और सरबकूं चांह ॥ ५६ ॥
आशाराखिये रामकी, और सरबसूं तोडि ॥
रामरूप पतिव्रत यह, एकरामसूं जोडि ॥ ५७ ॥
मीरा गिरधारी भज्यो, करमानै जगन्नाथ ॥
तुलसीदासा रामबिन, और न नायो माथ ॥ ५८ ॥
गहोटेक भगवानकी,जो सब जगका नाथ ॥
रामरूप सांचा धणी,सो क्यों तजियै साथ ॥ ५९ ॥

कान आँख जिन्या दई, नाकतु चाकर पांव ॥
रामरूप हरिसब दिया, ताको लैंयत नांव ॥ ६० ॥
रामरूप हरिनैं दिए, सुत नाती धन प्रान ॥
रातिजगावै पीरकी, यह देखो अज्ञान ॥ ६१ ॥
रामरूप हरिनेह करि, अन्न उपाया जान ॥
काढैं मायज्ञु पीरका, यहपूरा अज्ञान ॥ ६२ ॥
बैठें दीनें रामनैं, पूजैं सेढमसाण ॥
रामरूप वे कृतघन, क्यौं न सहैं जम सांण ॥ ६३ ॥
आन धरम वाकूं कहैं, सीस निवावैं आन ॥
रामरूप भटकत फिरै, बिन सांचे भगवान ॥ ६४ ॥
पाखंडी वह जानिये, निसदिन पाप कमाय ॥
रामरूप कहै राम तज, सरनि आनकी जाय ॥ ६५ ॥
जबलग मनमें कामना, तबलग भक्त न होय ॥
रामरूप फल दे सही, पर आप मिले नहिं कोय ॥ ६६ ॥
आशा राखिये दरशकी, दूजी चाह निवार ॥
रामरूप तौ सब मिलै, स्वरग मुक्ति भंडार ॥ ६७ ॥
बिन आशा सब कुछ मिलै, आशा आश निराश ॥
रामरूप आशा नहीं, सोई सांचा दास ॥ ६८ ॥
रामरूप कहै नाम बिन, कछू न कीजे चाह ॥
स्वरग मुक्ति रिध सिद्धलौं, सबसूं बेपरवाह ॥ ६९ ॥
आनदेव अमरा करैं, तीन लोक दैं राज ॥
रामरूप कहै भक्ति बिन, मेरे किसी न काज ॥ ७० ॥
जो हरि देवैं आपसूं, सो धारूं निज सीस ॥
रामरूप मुख ना कहै, तू दे कुछ जगदीस ॥ ७१ ॥
फल निमित्त हरिकूं भजै, धन पुत्तरकी आस ॥

रामरूप वे भक्त ना, स्वारथहीके दास ॥ ७२ ॥
स्वरग आदिके फल तजैं, भजैं निरंजन नाम॥
रामरूप सांचे भगत, पावैं प्रभुको धाम ॥ ७३ ॥
सहकामी झूठा भगत, निहकामी भरपूर ॥
रामरूप तजि कामना, रहै प्रेममें चूर ॥ ७४ ॥
अर्थ धर्म काम मोक्ष ए, चार पदारथ सार॥
रामरूप जो हरि भगत, तिन्हैं न उनसूं प्यार॥ ७५ ॥
रामरूप वैकुंठ लौं, चाह तजै सोइ दास ॥
बिना राम पद और सब, जानै झूठी आस ॥ ७६ ॥
वही शिरोमनिदास है, अनन्य भक्त निहकास ॥
रामरूप मँगै नहीं, सुत नाती धन धाम ॥ ७७ ॥
स्वारथकी सेवा बुरी, अंत टूटही जाय ॥
रामरूप कबलौं रहै, कच्चे सूत बँधाय ॥ ७८ ॥
एक दोय लौं पूरिये, सहकामीकी आस ॥
रामरूप कबलौं भरै, दिनमें सौ सौ प्यास ॥ ७९ ॥
आखरकूं टूटै सही, स्वारथरूपी प्रीति ॥
रामरूप कबलौं रहै, जलमें बालू भीति ॥ ८० ॥
भक्ति करै चाहै मुकति, सोऊ अधमादास ॥
रामरूप पूरा सोई, रखै न कोई आस ॥ ८१ ॥
आंखोंसे दरशन चहै, मुखसूं हरिको नाम॥
रामरूप वह दास निज, करै भक्ति निहकाम ॥ ८२ ॥
कोऊ सेवै देवता, काहु राजकी आस ॥
रामरूप कहै मैं किया, गुरु श्यामचरणदास ॥ ८३ ॥

इति श्रीपतिव्रताका अंग संपूर्ण।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालय बंबई.

संगीत-राग-गद्य पद्य।

नाम.	की० रु०आ०
सूरसागर-सूरदासजीकृत संपूर्ण भागवत बारहों स्कंध विविध प्रकारके रागरागिनियोंमें भक्तगणोंको कंठस्थ करने योग्य अतिललित माधुरी भाषा संयुक्त(जिल्दबँधा) चिकना कागज	६-०
तथा रफ कागज	५-०
भजनामृतसार-इसमें मंगल गौरी होली जयध्वनी पद विनय आरती इत्यादि अनेक भजन हैं भगवत् भक्तोंके वास्ते अति उत्तम है	०-१४
बृजबिहार-वृन्दावन निवासी श्रीनारायणस्वामीजी कृत...	२-०
नवरत्नरासविलास-इसमें श्रीकृष्णजीकी अनेक प्रकारकी रासलीला हैं	०-१२
रागरत्नाकर-अर्थात् भक्तचिन्तामणि रागमाला सहित जिसमें अति चटकीले २००० पद हैं और छः राग ३६ रागिनियोंमें भजन गानेका अति उत्तमग्रंथ है ...	२-०
अनुभवरस-इस ग्रंथमें वृन्दावनबिहारी आनन्दकन्द कृष्णजीकी परममनोहर अनेक लीलायें यथाक्रम राग रागिनियोंमें वर्णित हैं.	१-४
शैवमनोरंजन-शिवभक्ति देवीसहाय इत्यादि भक्तनके अपूर्व भजन रागरागिनीमें	०-४
भजनमनोरंजनी-अर्थात् अतिमनोहर भजन कवित्त दोहा सवैया स्तोत्र आदि अत्यंत सुंदर पद हैं... ...	०-४
श्रीसीतारामरसपीयूष-अतिमनोहर रागरागिनीमें ...	०-४